चौथी दुनिया

मूल्य 20 रुपये

दिल्ली रविवार 14 जून 2009

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

भीतर

3 अपनी ग़लती से कुछ तो सीखें लालू जी

5 केंद्रीय मंत्रिमंडल से मुसलमान नाख़ुश

6 मायावती के सामने चुनौतियों का पहाड़

कांग्रेस के लिए केंद्र में वापसी से भी अधिक महत्वपूर्ण है उत्तर प्रदेश पर क़ब्ज़ा जमाना. लोकसभा चुनाव ने उसे वहां पैर जमाने का मौका दे दिया है. इससे उत्साहित राहुल गांधी बड़े बदलाव की दिशा में सक्रिय हो गए हैं. अपने नेतृत्व में प्रदेश की सत्ता में कांग्रेस की वापसी का उनका *मिशन यूपी* शुरू हो चुका है.

उत्तर प्रदेश के अगले मुख्यमंत्री राहुल गांधी

युवराज ने रणभेरी बजा दी है. वे उत्तर प्रदेश का सिंहासन फतह करने निकल पड़े हैं. राहुल के इस क़दम से समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी में खलबली मची हुई है. राहुल के तरकश में वो सभी बाण हैं जो विरोधी पार्टियों को बेजान कर दें. आम-आवाम से राहुल के घुलने मिलने का अंदाज़,दलितों-गरीबों की तक़लीफ में राहुल के शामिल होने की भंगिमा, युवाओं से उनके गुफ्तगू की स्वानी एक नई किस्म की सियासी दुनिया का सृजन करती है. राहुल जहां भी जाते हैं जातीय समीकरणों के सारे मुहावरे ध्वस्त हो जाते हैं. वे एक नई सामाजिक परिभाषा गढ़ देते हैं.

रूबी अरुण

राहुल गांधी देखने में जितने सहज हैं, उनकी राजनीतिक भी उतनी ही सरल हैं. दिल्ली की सत्ता के लिए राजनीतिक दलों ने जब टेढ़े और मुश्किल रास्ते अपना लिए थे, तब वह राहुल ही थे जिन्होंने ग़रीबों-अल्पसंख्यकों के बूते कांग्रेस की सरकार सीधे बनवा दी. अब वह एक नए रास्ते पर चल पड़े हैं, जो केंद्र से राज्य की ओर जाता है. दिल्ली की सत्ता से लखनऊ की सत्ता तक जाता है. इस नई राह पर उठे राहुल के क़दमों में लोग इस सवाल का जवाब पा सकते हैं कि मनमोहन सिंह की नई सरकार में भी वह क्यों शामिल नहीं हुए. वह पार्टी के लिए एक और दुर्ग फतह करने जा रहे हैं. वह उत्तर प्रदेश का अगला मुख्यमंत्री बनने जा रहे हैं.

केंद्र में यूपीए की सरकार दोबारा बनने के बाद यह सवाल उठाया जा रहा था कि राहुल गांधी ने कैबिनेट मिनिस्टर बनना स्वीकार क्यों नहीं किया? क्यों पार्टी नेताओं की मिन्नतों, प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के आग्रह और मां सोनिया गांधी की इच्छा का मान राहुल गांधी ने नहीं रखा? क्यों राहुल ने ख़ुद के प्रधानमंत्री बनने की सभी संभावनाओं को सिरे से ख़ारिज़ कर दिया? इन सवालों का ज़ाहिर तौर पर जो जवाब है, वह यह कि राहुल की नज़रों में मंत्री बन कर कैबिनेट में बैठने से ज़्यादा अहमियत संगठन को मज़बूत करना है. पर जो असल कारण है, वह बेहद कूटनीतिक और अपार दूरदर्शी है. नीयत है देश पर निर्बाध, दशकों तक शासन करने की. योजना है मुख्य विपक्षी दलों को मटियामेट कर देने की. कवायद है राहुल गांधी को सही मायनों में हिंदुस्तान की सियासत का सिरमौर बनाने की. दिलचस्प तो यह कि यह बिसात भी राहुल ने ही बिछाई है, प्यादे भी वही तय कर रहे हैं और मोहरे भी वही चल रहे हैं. दरअसल, कांग्रेस के युवराज देश की बागडोर संभालने के पहले चार सौ विधानसभा सीटों पर कांग्रेस का परचम लहराने की हसरत रखते हैं. यानी कि उत्तर प्रदेश पर पूरा नियंत्रण. यह राहुल का मिशन *पीएम वाया सीएम* है. राहुल गांधी चाहते हैं कि भारत के प्रधानमंत्री पद की ज़िम्मेदारी संभालने से पहले वह उत्तर प्रदेश के करिश्माई नेता के रूप में अपनी धाक जमा लें. इस मर्ज़ी में राहुल की मां सोनिया गांधी की सहमति भी है. राहुल की यह मंशा उनके अंदर के परिपक्व होते राजनीतिज्ञ का परिचायक है. राहुल के ज़रिए कांग्रेस की ख्वाहिशें खुल कर अंगड़ाइयां ले रही हैं. एक बार फिर देश की सत्ता पर लंबे वक़्त तक क़ाबिज़ रहने के सपने संजोए जा रहे हैं. और यह सब उत्तर प्रदेश की सियासत पर फतह हासिल कर के ही मुमकिन हो सकता है. कांग्रेस अपार जनादेश के साथ अपने बलबूते केंद्र में बनी रहे, इसके लिए ज़रूरी है कि उसकी गहरी पकड़ हिंदी पट्टी पर बनी रहे. ख़ासकर बिहार और उत्तर प्रदेश पर. राहुल साफ तौर इस बात को मानते हैं कि वह उत्तर प्रदेश को बेहतर विकल्प देने की दिशा में तेज़ी से काम कर रहे हैं. और उनका अगला मिशन यूपी है. उनके इस मिशन में कोई बाधा न आए, इसी वजह से उन्होंने मंत्री पद नहीं लिया. इसलिए भी कि वह एक वक़्त में एक ही काम करना चाहते हैं. राहुल के एक बेहद क़रीबी मित्र बताते हैं कि यूपी में जिस तरीक़े से इस बार कांग्रेस की वापसी हुई है, उसने कांग्रेस में एक नई जान फूंक दी है. राहुल इस जनादेश को हर हाल में कांग्रेस के साथ बनाए रखना चाहते हैं. इसके लिए उत्तर प्रदेश में अगले विधानसभा चुनाव में वह ख़ुद को मुख्यमंत्री के तौर पर भी प्रोजेक्ट कर सकते हैं. राहुल उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री बन कर देश की बागडोर संभालने का हुनर सीखना चाहते हैं. वह नहीं चाहते कि विरोधियों को यह कहने का मौका मिले कि वह राजनीति में नौसिखिए हैं और उन्हें शासन करने का शउर नहीं है. वह अनुभवहीन हैं और विरासत में मिली नेहरू-गांधी ख़ानदान की राजनीति के विशेषाधिकार का सुख उठा रहे हैं. हालांकि कांग्रेस में इसकी खिचड़ी उत्तर प्रदेश के पिछले विधानसभा चुनाव के वक़्त से ही पक रही है. 16 अप्रैल 2007 को उत्तर प्रदेश के बिजनौर के अफजलगढ़ में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने एक चुनावी सभा में खुलेआम इस बात की घोषणा की थी कि राहुल गांधी उत्तर प्रदेश के नेता हैं और वही उसके भविष्य भी. इसलिए प्रदेश की जनता को चाहिए कि वह एक बार राहुल को प्रदेश का नेतृत्व करने का मौका ज़रूर दे. पर उस वक़्त राहुल की अनुभवहीनता, राजनीति में उनका कच्चापन आड़े आ गया था. लोगों ने राहुल के नेतृत्व में दिलचस्पी नहीं दिखाई. बावजूद इसके कि राहुल ने यह नारा दिया था कि 20 साल पहले जिस तरह उनके पिता राजीव गांधी ने नए भारत के निर्माण का सपना देखा था, उसी तरह आज वह भी नए उत्तर प्रदेश के निर्माण का सपना देख रहे हैं. पर राहुल के इस नारे ने कोई कमाल नहीं दिखाया. राज्य की जनता ने इस हिचकिचाते राजनेता को गंभीरता से नहीं लिया और प्रदेश की कमान बसपा सुप्रीमो मायावती के हाथों में चली गई. तब राहुल ने कहा था कि वह उत्तर प्रदेश में लंबी पारी खेलने आए हैं और चुनाव के बाद भी वह अपना काम करते रहेंगे. आख़िरकार लंबे इंतज़ार और बहुत सारी मेहनत के बाद वह घड़ी आ गई है, जब राहुल उस समय देखे अपने सपने को पूरा करने की कोशिश कर सकें. राहुल वही कर भी रहे हैं. हालांकि कोई भी कांग्रेसी नेता इस मसले पर खुलकर बोलने को तैयार नहीं है, फिर भी कांग्रेस के महासचिव रहे और सोनिया गांधी के क़रीबी एक वरिष्ठ नेता कहते हैं कि राहुल ने अपनी शिकस्त को सबक़ बना लिया. वह लगातार अपने मक़सद को पूरा करने की दिशा में प्रयासरत रहे. उन्होंने एक मुक़ाम की तरह राजनीतिक परिपक्वता हासिल की. कड़ी मेहनत कर अनुभव अर्जित किया. भारत की गंगा-जमुनी तहज़ीब से शिद्दत से जुड़े. आम आदमी की इच्छाओं को जाना. उनकी उलझनों को समझने और सुलझाने की कोशिश की. अपनी जी-तोड़ मेहनत से उन्होंने मतदाताओं का यक़ीन हासिल किया. इसका नतीजा है कि हर किसी की उम्मीदों से परे जाकर कांग्रेस ने उत्तर प्रदेश में लोकसभा की 21 सीटें जीतीं.

राहुल कांग्रेस के युवराज हैं. सभी जानते हैं कि अगर केंद्र में कांग्रेस की सरकार बनी रही तो आने वाले दिनों में राहुल गांधी ही देश के प्रधानमंत्री बनेंगे. पर उसके पहले वह उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री बनना चाहेंगे. राहुल गांधी सियासत की बेइंतहा चुनौतियों और अपनी वंश परंपरा को क़ायम रखने के जुनून और उसकी मांग से भली-भांति वाक़िफ़ हैं. राहुल और उनकी मां सोनिया उत्तर प्रदेश से ही सांसद हैं, लिहाजा प्रदेश के प्रति उनकी महती ज़िम्मेदारियां भी हैं. राहुल कहते हैं कि इस चुनाव में कांग्रेस ने राज्य के लोगों को नई उम्मीदों से रू-ब-रू कराया है. राज्य तक़रीबन 20 सालों से यानी कि जब से वहां की सत्ता से कांग्रेस बाहर हुई है तब से धर्म और जाति पर आधारित ज़हरबुझी राजनीति का शिकार था. लेकिन अब कांग्रेस आने वाले वक़्त में लोगों का नज़रिया बदल देगी. राहुल उत्तर प्रदेश में बड़े बदलाव के पक्षधर हैं. कहते हैं कि वहां के सामाजिक ढांचे में व्यापक सुधार की ज़रूरत है. वहां के युवाओं को सकारात्मक सहयोग और मार्गदर्शन की ज़रूरत है. और वह कांग्रेस के संगठन के माध्यम से यही सब करने जा रहे हैं. राहुल के इस मिशन में उनके साथ सात बेहद ख़ास दोस्त हैं. इनमें पहला नाम है कनिष्क सिंह का. कनिष्क पूर्व मर्चेंट बैंकर हैं. वह राजस्थान के राज्यपाल एसके सिंह के पुत्र हैं और राहुल के सबसे विश्वस्त. दूसरे हैं मिलिंद देवड़ा. मिलिंद ही अकेले ऐसे दोस्त हैं जो राजनीति में आने से पहले से राहुल के दोस्त हैं. जब राहुल अपने अभियान में निकलते हैं तो मिलिंद उनके समर्थन के लिए युवा सांसदों को एकजुट करते हैं. तीसरा नंबर है संदीप दीक्षित का. संदीप स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से राहुल की जनहित की योजनाओं को अमली जामा पहनाते हैं. इसके बाद आते हैं भंवर जितेंद्र सिंह-राहुल से जुड़े सचिव. दो बार विधायक रह चुके जितेंद्र अलवर के शाही परिवार से हैं. राहुल के वफादार भी. लिहाजा उन्हें इसका इनाम भी मिला.

(शेष पृष्ठ 2 पर)

कार्यकर्ताओं को है उनसे और अधिक की आस

राहुल किसी भी हाल में अपने मिशन में कामयाब होना चाहते हैं. इसकी ख़ातिर राहुल हर वह दांव आजमाने की ताक में हैं, जिनसे उत्तर प्रदेश फिर से कांग्रेस के हाथ में आ जाए. पर जो हक़ीक़त नज़र आ रही है, वह राहुल के सपनों पर पानी फेर सकती है. उनका *मिशन यूपी* अधूरा रह सकता है. मनमोहन मंत्रिमंडल के गठन के बाद भी कांग्रेस मुख्यालय पर उत्तर प्रदेश के ऐसे कई नेताओं की भीड़ नज़र आ रही है जो राहुल और कांग्रेस आलाकमान के फ़ैसलों से नाराज़ हैं. वे इसलिए नाख़ुश हैं कि मंत्रिमंडल में उत्तर प्रदेश को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया. जहां से 21 सांसद जीत कर आए, वहां के महज़ पांच सांसदों को मंत्री बनाया गया. उनमें से भी कोई कैबिनेट मंत्री नहीं है. ये नाराज़ कांग्रेसी पार्टी मुख्यालय में पदाधिकारियों को जमकर खरी-खोटी सुना रहे हैं. इनका कहना है कि जिस प्रदेश में कांग्रेस ने लंबे समय के बाद वापसी की, उसके साथ पार्टी ने इंसाफ़ नहीं किया. जबकि हिमाचल प्रदेश जैसे राज्य से एक सांसद के बदले दो कैबिनेट मंत्री बना दिए गए. राज्य से चार राजपूत सांसद-संजय सिंह,जगदंबिका पाल, रत्ना सिंह और हर्षवर्धन-जीत कर लोकसभा पहुंचे हैं. इनमें से किसी को भी मंत्री पद नहीं दिया गया. इससे राजपूत मतदाताओं में निराशा है. राज्य के अल्पसंख्यक कांग्रेसी भी क्षुब्ध हैं. उन्हें भी इस बात का गिला है कि उनकी जमात के किसी भी सांसद को कैबिनेट मंत्री नहीं बनाया गया है. उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के महामंत्री डॉ. सैयद जमाल कहते हैं कि सलमान खुर्शीद इस क़ाबिल थे कि उन्हें कैबिनेट मंत्री बनाया जा सकता था, पर उन्हें राज्य मंत्री बनाकर टरका दिया गया. हालांकि यहां यह भी दीगर है कि उत्तर प्रदेश के मुसलमान सलमान खुर्शीद को मुसलमान नहीं मानते. मुरादाबाद लोकसभा क्षेत्र से कांग्रेस के पूर्व प्रत्याशी नसीमुल हसन कहते हैं कि कांग्रेस से बिदक चुके उत्तर प्रदेश के मुसलमानों ने इस बार बड़ी उम्मीदों के साथ उसे फिर वोट दिया. लेकिन कांग्रेस ने उनके साथ न्याय नहीं किया. ज़ाहिर है, यह नाख़ुशी कांग्रेस और राहुल के मिशन यूपी के हित में तो कतई नहीं हैं. मंत्रिमंडल के असमान गठन को लेकर नाराज़गी न सिर्फ़ उत्तर प्रदेश में है, बल्कि बिहार में भी है. मंत्रिमंडल में बिहार का प्रतिनिधित्व करने के नाम पर महज़ एक मीरा कुमार के सिर पर ताज सज़ा दिया गया. यह दूसरी बात है कि उन्हें लोकसभा अध्यक्ष बना दिए जाने से मंत्रिमंडल में एक स्थान फिर ख़ाली हो गया. अब यह देखना दिलचस्प होगा कि मीरा कुमार की जगह कैबिनेट मंत्री बनने वाला किस प्रदेश का और कौन होता है. क्षेत्रीय संतुलन के नाम पर कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश

(शेष पृष्ठ 2 पर)

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

बजट की उलटी गिनती शुरू

प्रणव दा भले अब नॉर्थ ब्लॉक का रुख़ कर रहे हों, लेकिन वित्त मंत्रालय के बाबू पिछले कई हफ़्तों से 2009–10 के लिए बजट की तैयारी कर रहे हैं. जब पूरे देश का ध्यान चुनाव की ओर लगा था तब राजस्व सचिव पीवी भिड़े और उनके सहयोगी बाबू औद्योगिक चैंबरों के साथ बजट से जुड़े मुद्दों पर चर्चा कर रहे थे. ऐसे में वित्त सचिव के तौर पर अशोक चावला की नियुक्ति बिल्कुल सही समय पर हुई है. 1973 बैच के आईएएस अधिकारी चावला पर आर्थिक मामलों के सचिव के तौर पर उस विभाग की ज़िम्मेदारी है जो बजट तैयार करता है. वह बजट से जुड़ी चुनौतियों से अच्छी तरह से वाक़िफ़ हैं.

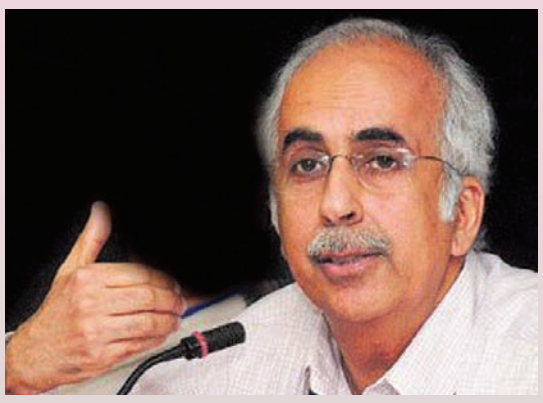

अब देश में वित्तीय मामलों के सबसे बड़े बाबू के तौर पर उनके ज़िम्मे अर्थव्यवस्था को मंदी के वक़्त संभालने और वित्तीय प्रक्रिया की गड़बड़ियों को सुधारने का मुश्किल काम है. सबसे महत्वपूर्ण यह है कि नई सरकार के आने से चावला को न केवल आर्थिक मामलों का विश्लेषण करना होगा, बल्कि नई सरकार की नीतियों का भी ध्यान रखना होगा. उधर सरकार भी जुलाई में बन रहे बजट में प्रत्यक्ष कर और अन्य बदलावों को ध्यान में रखकर बाबुओं पर दबाव डालना चाहेगी.

नपेंगे आंध्र के बाबू

राजशेखर रेड्डी भले ही राज्य की सत्ता में वापस आ गए हैं, लेकिन इस बार कई पुराने साथियों को उन्होंने छोड़ दिया है, इसलिए बड़े बदलावों की उम्मीद है. सभी बाबुओं की नज़रें भी इस पर लगी हैं. लेकिन इससे भी ज़्यादा चिंता हाई कोर्ट के आदेश की है. कोर्ट ने राज्य की भ्रष्टाचार निरोधी एजेंसी (एसीबी) को यह ताक़त दी है कि वह राज्य में आय से ज़्यादा संपत्ति रखने वाले आईएएस अधिकारियों को गिरफ़्तार कर सकती है . सूत्र बताते हैं कि मुख्यमंत्री ख़ुद कुछ चेहरों को नपते देखना चाहते हैं.

कम से कम 44 करोड़पति बाबुओं पर तो पिछले साल ही शिकंजा कसा था, जिनमें अधिकतर ग्रेटर हैदराबाद म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, पंचायत राज, सिंचाई और हैदराबाद महानगर विकास प्राधिकार से जुड़े हैं. एसीबी के अनुसार इन बाबुओं के पास 90 करोड़ से अधिक की संपत्ति है. पिछले साल इस खुलासे के बाद राज्य सरकार ने जल्दी में एक मेमो डालकर आदेश दे दिया था कि जांच पूरी होने तक किसी को गिरफ़्तार न किया जाए. हालांकि इस बार कोर्ट के आदेश के बाद बाबुओं का बचना ज़रा मुश्किल होगा.

साउथ ब्लॉक

अंजुम ए ज़ैदी

बने रहेंगे चंद्रशेखर

इतने शोर–गुल के बाद आख़िरकार कैबिनेट सचिव के कार्यकाल का विस्तार हो ही गया है. केरल कैडर के 1970 बैच के आईएएस अधिकारी के.एम चंद्रशेखर इसी वर्ष जून के महीने में कैबिनेट सचिव के पद से सेवानिवृत होने वाले थे. उनके बाद 1972 बैच की

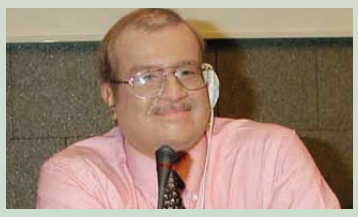

अधिकारी सुधा पिल्लई को यह पद दिए जाने की बात चल रही थी, लेकिन फ़िलहाल देश के सबसे बड़े नौकरशाह का पद रिक्त होने से रह गया है. कैबिनेट सचिव के.एम.चंद्रशेखर को अगले एक वर्ष का विस्तार मिला है. हालांकि इससे अधिकारी तंत्र के कुछ अफसरों में तनाव का माहौल है, ख़ासकर 1972 बैच के अधिकारियों में इस बात को लेकर काफी नाराज़गी है.

जवाहर की सरकार

पश्चिम बंगाल कैडर के 1975 बैच के आईएएस अधिकारी जवाहर सरकार को सूचना व प्रसारण मंत्रालय में भेजे जाने के संकेत हैं. इस वक़्त भी वह सचिव, पर्यटन एवं सांस्कृतिक मंत्रालय के साथ सूचना व प्रसारण मंत्रालय के सचिव पद का दायित्व भी निभा रहे हैं. इस मंत्रालय में सचिव पद पर झारखंड कैडर की 1972 बैच की आईएएस अधिकारी सुषमा सिंह थीं, जो इसी वर्ष 31 मई को सेवानिवृत हुई हैं. उनकी जगह पर फ़िलहाल जवाहर सरकार कार्यभार संभाल रहे हैं. पिछली सरकार में अंबिका सोनी के पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री बनने पर जवाहर सरकार को इसी मंत्रालय के सचिव का पदभार मिला था. अब अंबिका सोनी के सूचना व प्रसारण मंत्री बनने पर उन्हें सूचना व प्रसारण मंत्रालय में भी सचिव पद के लिए लाया गया है. माना जा रहा है कि वह अंबिका सोनी के प्रिय और विश्वसनीय अधिकारी हो गए हैं, तभी तो उनके मंत्रालय में पद रिक्त होते ही उनका नाम प्रस्तावित किया गया है.

उत्तर प्रदेश के अगले मुख्यमंत्री राहुल गांधी

पृष्ठ एक का शेष

राहुल ने उन्हें इस बार लोकसभा का टिकट दिया. और फिर पंकज शंकर. वह राहुल गांधी की वेबसाइट और मीडिया संभालते हैं. युवक कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष और अब सांसद मनीष तिवारी की बौद्धिकता पर भी राहुल को बेहद नाज़ है. इन सबके बीच उत्तर प्रदेश के नज़रिए से जो नाम सबसे अहम है, वह है केंद्रीय राज्य मंत्री जितिन प्रसाद का. जितिन राहुल के दून टोली के सदस्य हैं और उत्तर प्रदेश में राहुल के सबसे सटीक निशानेबाज़ भी, ख़ासकर जब बात समाजवादी पार्टी और बसपा से मुक़ाबले की हो तो. संसद में जब भी इन पार्टियों से टकराव की नौबत आई, राहुल ने अक्सर जितिन को आगे खड़ा कर दिया. यक़ीनन राहुल के मिशन यूपी में जितिन की भूमिका बेहद मायने रखती है.

दरअसल इस लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को युवाओं का जिस गर्मजोशी से साथ मिला है उससे राहुल बेहद आशान्वित हैं. राहुल साफ तौर पर कहते हैं कि अगले तीन सालों में हालात बिल्कुल बदल जाएंगे. उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव होने में भी तक़रीबन इतना ही वक़्त है. मंत्रिमंडल के गठन का काम पूरा होते ही राहुल गांधी युवा कांग्रेस और एनएसयूआई के ज़रिए कस्बे–कस्बे, गांव–गांव में कांग्रेस की पैठ बनाने में मशगूल हो गए हैं.

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

राहुल नए वायदों के साथ देश भर की पंचायतों तक पहुंचना चाहते हैं. वह पार्टी की शक्ल भी बदल देना चाहते हैं. पूरी तरह से लोकतांत्रिक स्वरूप चाहते हैं पार्टी का. वह कहते हैं कि उन्हें भारत और इंडिया के बीच के फ़र्क़ को हर हाल में ख़त्म करना है. राहुल गांधी की सबसे बड़ी चुनौती यह भी है कि वह यह संदेश दे सकें कि उनका इरादा महज़ मिली विरासत के आधार पर राजनीति करने का नहीं है बल्कि उन्हें इससे आगे जाना है. राजनीति की नई इबारत लिखनी है. राहुल इस बात की बारीकी समझ चुके हैं. उन्हें पता है कि अगर उन्हें देश की राजनीति के केंद्र में बने रहना है तो मुंह खोलना होगा. उन्हें लोगों से ऐसी बहस करनी होगी, जो सार्थक हो और जिससे देश के हितों की भनक आए. राहुल को कांग्रेस प्रवक्ताओं, मसलन कपिल सिब्बल,अभिषेक मनु सिंघवी, मनीष तिवारी, जनार्दन द्विवेदी, शकील अहमद वगैरह की जगह ख़ुद बोलना होगा. कांग्रेस का पक्ष रखना होगा, क्योंकि राहुल की लाख कोशिशों के बावजूद आज भी यही सच है कि राहुल की पदोन्नति में, उनके रुतबे में वंशवाद की बू आती है. राहुल इस गंभीर चुनौती के मायने ख़ूब समझते हैं. आज जब कांग्रेस देश की सत्ता पर क़ाबिज़ है तब भी उसके सामने अपने वजूद को मज़बूती से क़ायम रखने की दुश्वारियां हैं. राहुल कहते हैं कि चुनाव के पहले भी उन्हें इस बात की फ़िक्र नहीं थी कि राज्य में कांग्रेस को कितनी सीटें हासिल होंगी. उनकी तो बस यही कोशिश थी कि कांग्रेस राज्य में मुक़ाबले में बनी रहे. पर जो नतीजे आए हैं, वे यक़ीनन कांग्रेस के लिए बड़ी उपलब्धि हैं. पांच साल पहले जब राहुल ने उत्तर प्रदेश में अपनी राजनीतिक ज़मीन तैयार करनी शुरू की थी, तब उन्होंने कहा था कि वह राज्य में कांग्रेस को एक मज़बूत शक्ति के रूप में देखना चाहते हैं. वह इस राज्य के मसीहा तो नहीं हैं पर इस प्रदेश के युवाओं के कंधे से कंधा मिला कर चलना चाहते हैं. राहुल गांधी ने अपने इसी मिशन यूपी की शुरुआत कर दी है. आज के राहुल को देख कर यह कतई नहीं लगता कि उन पर राजनीति थोपी जा रही है. बल्कि आज वह कांग्रेस के शिल्पकार की भूमिका में हैं. अपने पिता राजीव गांधी और परदादा जवाहर लाल नेहरू की तरह राहुल कांग्रेस को उसके बेहतरीन दिनों की तरफ़ ले आए हैं. जब जवाहर लाल नेहरू ने कांग्रेस की बागडोर संभाली थी, तब सरोजनी नायडू ने कहा था कि यह जवाहर लाल नेहरू की ताजपोशी भी है और उन्हें सूली पर चढ़ाना भी है. राहुल के बारे में भी कुछ ऐसी ही राय रखी गई थी. पर वक़्त के साथ दोनों ने ही इस संशय का ख़ात्मा कर दिया. 30 मार्च 2007 की बात है, जब राहुल ने अमेठी में भाषण देते हुए कहा था कि उनका भरोसा दिल की राजनीति में है. वह चुनाव जीतने नहीं, बल्कि दिल जीतने आए हैं. उस वक़्त राहुल का यह बयान विपक्षियों के लिए मज़ाक का विषय बन गया था. राहुल भी कहां उस वक़्त लोगों का दिल जीत पाए थे. अमेठी से वह सांसद तो बन गए, पर 2007 के उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में राहुल का रोड शो सुपर फ्लॉप हो गया. राहुल हवा–हवाई नेता करार दिए गए.

राजनीतिक विश्लेषकों ने कहा कि अगर कांग्रेस राहुल को उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के तौर पर पेश करती तो शायद उसे कामयाबी मिल सकती थी. कांग्रेस प्रवक्ता और अब केंद्रीय मंत्री मनीष तिवारी बताते हैं कि राहुल गांधी ने उन नाकामियों से मिले सबक़ की गांठ बांध ली. वह अपने मिशन यूपी में दिलोजान से लगे रहे. ख़ामोशी से अपना काम किया. आज उस मेहनत का नतीजा दुनिया देख रही है. राहुल 2005 से 2007 के बीच 60 से 70 बार उत्तर प्रदेश गए, पर वह सीधे अमेठी या रायबरेली चले जाते थे. प्रदेश के अन्य ज़िलों से उनका कुछ ख़ास सरोकार नहीं होता था. नतीजन कांग्रेस को इसका ख़ामियाजा उत्तर प्रदेश विधानसभा के चुनाव में उठाना पड़ा. फिर राहुल ने हर जगह जाकर लोगों से संपर्क साधना शुरू किया. वह न सिर्फ़ लोगों से अपनी बात कहते, बल्कि उनकी प्रतिक्रियाएं भी लेते. अब, जबकि कांग्रेस को इस बात का भरपूर फ़ायदा मिल चुका है, तब राहुल इस रामबाण को कांग्रेस के लिए अचूक औषधि बनाने पर तुल गए हैं.

वह ज़मीन की बात करते हैं. किसानों के लिए दर्दमंद दिखते हैं. उनकी पेशानी पर देश के युवाओं के भविष्य की फ़िक्र दिखती है. बेरोज़गारों, ग़रीबों को दो वक़्त की रोटी हासिल हो सके–वह इसकी जद्दोज़हद करते दिखते हैं. लिहाजा देश उन्हें भरोसा करने लायक समझने लगा है. दिल की राजनीति में राहुल वाकई पास हो गए हैं. उन्होंने आम–आवाम का दिल जीत लिया है. जो कांग्रेस उत्तर प्रदेश के लोगों की ज़िंदगी में कहीं थी ही नहीं, अब उस पर 21 लोकसभा क्षेत्रों के वासिंदों की ज़िंदगियों से जुड़े महत्वपूर्ण मसलों के फ़ैसलों का दारोमदार है.

राहुल के मिशन यूपी का मक़सद है कांग्रेस को उत्तर प्रदेश के सभी विधानसभा क्षेत्रों का नीति निर्धारक बनाना. राहुल के पास इसके लिए तक़रीबन तीन साल का समय है. राहुल जुट चुके हैं. वह यूपी के लोगों के बीच कांग्रेस का जादू जगाने लगे हैं. उन्हें भारतीय राजनीति का सिरमौर बनना है और वह जानते हैं कि यह तिलस्मी ओहदा उन्हें तभी हासिल होगा, जब उत्तर प्रदेश उनके क़ाबू में होगा. इसकी ख़ातिर राहुल को वहां अपनी अमिट छवि छोड़नी होगी, अपने समीकरण बनाने होंगे. यह वहां का मुख्यमंत्री बन कर ही किया जा सकता है, केंद्र में मंत्री बन कर नहीं.

ruby.chauthiduniya@gmail.com

कार्यकर्ताओं को है उनसे...

पृष्ठ एक का शेष

जैसे राज्यों से कैबिनेट मंत्री बनाने का क्या तुक है. चूंकि मंत्रिमंडल गठन में राहुल की ही मर्ज़ी चली है, लिहाजा नाराज़गी भी उन्हीं से है. कई सवाल सिर उठाए खड़े हैं. क्या राहुल ही बदलाव की वह बयार हैं जिसका देश बेसब्री से इंतज़ार कर रहा है? क्या राहुल गांधी देश भर के लोगों को यह भरोसा दिला पाए हैं कि वह महज़ वंशवाद की राजनीति के दुलारे बेटे भर नहीं हैं? क्या वह कांग्रेस की वंशवाद के आगे नाक रगड़ने की चली आ रही परंपरा का अपने हितों में इस्तेमाल नहीं कर रहे? यक़ीनन इन सभी सवालों का जवाब अभी भी पूरे भरोसे के साथ हां में नहीं दिया जा सकता. क्योंकि फ़िलहाल राहुल जिस तरीक़े से काम कर रहे हैं उससे कांग्रेस एक व्यक्ति वाले संगठन में तब्दील हो गई लगती है. हालांकि यह बात भी दीगर है कि राहुल पार्टी में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के पक्षधर हैं, पर वह जिस व्यवस्था की उपज हैं उसे तत्काल बदल देना भी मुमकिन नहीं.

फोटो–*पीटीआई*

राहुल गांधी का उपनाम ही उनकी विशिष्टता है, जो उन्हें सबसे ख़ास बनाता है. कांग्रेस के विशेष उत्तराधिकारी होने का हक़ देता है. राहुल अपनी नीतियां ख़ुद तैयार करते हैं और अपनी मर्ज़ी के मुताबिक उसे बदलते भी हैं. राहुल को पार्टी के नियम क़ानून नहीं चलाते. वह कांग्रेस के लिए अपरिहार्य हैं. लिहाजा पार्टी उनके मुताबिक चलती है. इसलिए अब राहुल फ़ै सले लेते वक़्त कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं से मशविरा करना ज़रूरी नहीं समझते. वह हालात का आकलन करते हैं और बेहद आक्रामक अंदाज़ में अकेले निर्णय लेते हैं.

पार्टी नेतृत्व राहुल की हरेक इच्छा को बेहद महत्व देता है. लिहाजा राहुल अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर भी खुल कर फ़ैसले लेने लगे हैं. उनके फ़ैसले से जो असंतोष उभर रहा है, वह ज़ाहिर करता है कि आप एकला चलो रे का अनुसरण कर के परिपक्व राजनीतिक फ़ैसले नहीं ले सकते. लेकिन अच्छी बात यह है कि राहुल अपनी ग़लतियों को मानने में संकोच नहीं करते. उनकी अब तक की राजनीतिक यात्रा इस साबित भी करती है.

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 13, 14 जून 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के – 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के –2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

अपनी ग़लतियों से कुछ तो सीखें लालू जी

सभी फोटो–**प्रभात पाण्डेय**

सुरेंद्र किशोर

राष्ट्रीय जनता दल में इन दिनों मंथन चल रहा है. यह सवाल उठ रहा है कि लालू प्रसाद का यह दल–राष्ट्रीय जनता दल–अपने पुराने ढर्रे पर अब भी चले या वह नया जातीय समीकरण बनाए. नए जातीय समीकरण में यादव–मुसलमानों का पहले जैसा ही वर्चस्व बना रहे या इन तबकों का दबदबा कम करके अन्य जातीय समूहों को भी तरजीह दी जाए. याद रहे कि हाल के चुनावों में राजद की शर्मनाक हार के बाद पार्टी ने सांसद व पूर्व केंद्रीय मंत्री डॉ. रघुवंश प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में एक कोर कमेटी बनाई. यह कमेटी राजद को एक बार फिर सक्रिय व कारगर दल बनाने के उपायों को लेकर अपनी अनुशंसा पार्टी हाईकमान को देगी. पाया गया कि राजद में 70 से अस्सी प्रतिशत पदों पर यादव–मुस्लिम नेता व कार्यकर्ता क़ाबिज़ हैं. समिति इस स्थिति को बदलना चाहती है. पर राजद में ही अनेक लोग इसके ख़िलाफ़ है. अंतत: क्या होता है, यह तो आने वाला समय बताएगा.

पर राजनीतिक प्रेक्षकों के अनुसार राजद का बहुमत अपनी पुरानी राजनीतिक शैली को बदलने की जगह अपने पुराने जातीय समीकरण में ही थोड़ा हेरफेर करके फिर से ताक़तवर बनने का सपना देख रहा है, जो रणनीति अब बिहार में सफल होने वाली नहीं है. क्योंकि नीतीश कुमार ने इस बीच बिहार की राजनीति का एजेंडा और मुद्दा ही पूरी तरह बदल दिया है. नीतीश कुमार की राजनीति की सटीक काट ढूंढ़ने की मंशा न तो राजद नेतृत्व और न ही रघुवंश कमेटी में ही नज़र आ रही है. राजद का एक वर्ग एम–वाई यानी यादव–मुस्लिम को अपना अग्रिम दस्ता बनाए रखते हुए अन्य जातीय समूहों को राजद से एक बार फिर जोड़ना चाहता है. याद रहे कि 1990 के मंडल आंदोलन के समय संपूर्ण पिछड़ा वर्ग लालू प्रसाद के साथ था. पर समय बीतने के साथ जब लालू प्रसाद ने घनघोर जातिवाद व परिवारवाद चलाया, विकास कार्यों की उपेक्षा की और सांप्रदायिक सद्भाव के नाम पर मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति अपनाई तो राजद दुर्गति को प्राप्त कर गया. अब बिहार में स्थिति यह है कि एक उप चुनाव भी जीतने की स्थिति में लालू प्रसाद का दल नहीं है. लोकसभा के नव निर्वाचित चार राजद सांसदों में से तीन तो राजपूत ही हैं. इसके बावजूद लालू प्रसाद पार्टी में यादव–मुस्लिम वर्चस्व बनाए रखना चाहते हैं.

बिहार की बदली हुई राजनीति और मतदाताओं के परिवर्तित मन मिज़ाज को देखते हुए राजद को तो चाहिए था कि वह सिर्फ़ जातीय समीकरण पर अपनी निर्भरता को त्याग कर राजद को ईमानदार और जनसेवी प्रवृत्ति के नेताओं व कार्यकर्ताओं की पार्टी बनाता. पर हाल के मंथन से लगता है कि बार–बार बुरी तरह चुनावी मात खाने के बावजूद राजद ने अपनी ग़लतियों से कुछ नहीं सीखा है. लालू प्रसाद कह चुके हैं कि–मैंने तो कोई ग़लती ही नहीं की. कोई नेता अपनी ग़लती पहले स्वीकारेगा, तभी तो उसे सुधारने की भी कोशिश करेगा. यदि उसे अपनी ग़लती का पता ही न हो या फिर अपनी ग़लती स्वीकारने में कुछ स्वार्थवश उसे दिक़्क़त हो रही हो तो वह फिर एक दूसरी ग़लती कर सकता है. यह सच है कि माई समीकरण राजद का ध्रुव रहा है. इसलिए पार्टी का जो वर्ग इस ध्रुव को नहीं छोड़ने की दलील पेश कर रहा है, वह ठीक ही कह रहा है. पर क्या किसी दल के 70–80 प्रतिशत पदों पर दो ही समुदायों के लोगों को बिठाया जाना चाहिए? याद रहे कि राजद के अध्यक्ष पद पर लालू प्रसाद हैं. बिहार विधान सभा में प्रतिपक्ष की नेता इनकी पत्नी राबड़ी देवी हैं. राजद के प्रदेश अध्यक्ष अब्दुल बारी सिद्दीकी हैं. बिहार विधान परिषद में राजद दल के नेता गुलाम गौस हैं.

रघुवंश समिति चाहती है कि संगठन के 50 प्रतिशत पद दलितों, अति पिछड़ों और अन्य समुदायों से भरे जाएं. यानी जातीय समीकरण बदल दिया जाए. इसके बदले यदि राजद राजनीति का नीतीश मॉडल अपनाता तो उसे आने वाले दिनों में हर जाति का थोड़ा–बहुत समर्थन मिलता, जैसा कि बिहार में इस बार राजग को मिला. इस पर कुछ और टिप्पणियां करने से पहले गत लोकसभा चुनाव के नतीजों का विश्लेषण जरूरी है. दिल्ली के संस्थान सी.एस.डी.एस. की लोक नीति टीम के आंकड़ों पर भरोसा करें तो हाल में संपन्न लोकसभा चुनाव में राजद–लोजपा गठबंधन को बिहार में यादवों के 65 प्रतिशत वोट मिले. राजद–लोजपा को प्राप्त मुस्लिम मतों का प्रतिशत 31 था. किसी अन्य दल या गठबंधन को मिले यादव–मुस्लिम मतों से यह अधिक था.

उधर इस लोकसभा चुनाव में बिहार के अति पिछड़ों के 58 प्रतिशत मत राजग को मिले. यादवों के मात्र 13 प्रतिशत मत राजग को मिले. ब्राह्मणों के 69 और राजपूतों के 80 प्रतिशत वोट राजग को बिहार में मिले. दूसरी ओर राजपूतों के पांच प्रतिशत और ब्राह्मणों के तीन प्रतिशत मत ही राजद–लोजपा को मिले. अन्य दलितों के 32 प्रतिशत मत राजग और 20 प्रतिशत मत राजद–लोजपा को मिले.

जन समर्थन बढ़ाने के लिए राजद अब जो कुछ करने जा रहा है, वह उसकी पुरानी समझ व लाइन का ही विस्तार लगता है. यानी राजद और उसके नेता लालू प्रसाद कहते रहे हैं कि विकास से वोट नहीं मिलते, बल्कि जातीय समीकरण से वोट मिलते हैं. अब भला जो जातीय समूह इन दिनों राजग की ओर मुखातिब है, उस समूह के कुछ लोगों को संगठन में पद देकर राजद कितनी राजनीतिक उपलब्धि हासिल कर पाएगा, जबकि राजद के पास अब सत्ता न तो दिल्ली में है और न पटना में?

राजद के साथ असल दिक़्क़त यह है कि जिस तरह की राजनीतिक और प्रशासनिक शैली अपना कर नीतीश कुमार व राजग ने हाल के लाकेसभा चुनाव में बिहार में भारी उपलब्धि हासिल की है, उसे अपनाने की ताक़त राजद में है ही नहीं. क्या राजद परिवारवाद से कभी ऊपर उठ सकता है? क्या राजद कभी भ्रष्ट और अपराधी तत्वों के ख़िलाफ़ इतना निर्मम हो सकता है, जितनी निर्ममता सत्ता में आने के बाद नीतीश कुमार दिखा रहे हैं? यह निर्ममता जनता पसंद कर रही है. क्या राजद बिहार विधान सभा में प्रतिपक्ष के नेता पद पर किसी ऐसे व्यक्ति को बैठा सकता है जो नीतीश कुमार का सदन में डट कर मुक़ाबला करते हुए जनता की समस्याओं को उठा सके और नीतीश को आए दिन कठघरे में खड़ा कर सके?

यह काम राजद के नव निर्वाचित सांसद जगदानंद कर सकते थे, पर उन्हें तो लोक सभा का चुनाव लड़वा कर दिल्ली भेज दिया गया.

बिहार में नब्बे के दशक में भाजपा ने यशवंत सिन्हा को बिहार विधान सभा में प्रतिपक्ष के नेता के पद पर तैनात कराया था. वह भाजपा की एक सोची–समझी योजना थी. उसे इसका लाभ भी मिला था. जगदानंद में वह सब क़ाबलियत है, जिसके जरिए वह प्रतिपक्ष का नेता बनने पर आए दिन नीतीश सरकार को कठघरे में खड़ा कर सकते हैं. क्योंकि राज्य सरकार की कार्यपद्धति की जितनी समझ जगदानंद में है, उतनी शायद ही किसी राजद नेता में है. शर्त यही है कि जगदानंद के शरीर में लालू प्रसाद की आत्मा न समा जाए, जैसा आरोप उन पर कोसी बाढ़ त्रासदी के समय उनके बयानों के कारण लगा था. पर पहले सवाल यह है कि प्रतिपक्ष के नेता पद की कुर्सी लालू प्रसाद अपने परिवार से बाहर निकालेंगे? लगता तो नहीं है. लोकसभा चुनाव नतीजे आने के तत्काल बाद ही राजद की ओर से यह कह दिया गया था कि राबड़ी देवी को प्रतिपक्ष की नेता पद से नहीं हटाया जाएगा. याद रहे कि बिहार विधान सभा में तार्किक ढंग से सरकार की ख़ामियों को उजागर करने से प्रतिपक्ष को सरकार के ख़िलाफ़ राज्य में माहौल बनाने, लोक शिक्षण करने और इसकी राजनीतिक व चुनावी फसल काटने का मौका मिलता है. यशवंत सिन्हा ने यही करके भाजपा को बिहार में आगे बढ़ा दिया था. इसके अलावा दरअसल राजद को यह बात समझ में नहीं आ रही है कि एम–वाई वोट बैंक बनाने से उसे उतना नुकसान नहीं हुआ, जितना नुकसान उसे इन समुदायों में से घटिया लोगों को ही निकाल–निकाल कर उन्हें बड़े–बड़े पद देने से हुआ. हालांकि इसके कुछ अपवाद भी थे. साथ ही राजद में इन समुदायों के ही बेहतर लोगों की उपेक्षा हुई और उन्हें तिरस्कृत और अपमानित भी किया गया. यादवों और मुसलमानों में ही बिहार की राजनीति में एक से एक क़ाबिल और ईमानदार लोग हैं. मुंगेर के पूर्व सांसद डी.पी यादव और पूर्व मंत्री गजेंद्र प्रसाद हिमांशु जैसे कुछ नाम लिए जा सकते हैं. हालांकि वे राजद में नहीं हैं. और भी नाम हैं. ये नाम तो सिर्फ़ नमूने के तौर पर यहां दिए जा रहे हैं. ऐसे लोगों में बिहार की समस्याओं की समझ है और उनके जीवन का लक्ष्य सरकारी ख़ज़ाने से सिर्फ़ अपना घर भरना नहीं है. यादव–मुस्लिम समुदाय से राजद ऐसे नेताओं को आगे बढ़ाता और जन–सेवा करने लायक उन्हें ताक़त दिलाता तो यादव–मुस्लिम वोट बैंक भी इससे धीरे–धीरे नहीं छिटकता. 2005 की फरवरी में बिहार विधान सभा का चुनाव हुआ था. तब ऐसी स्थिति बनी थी कि लालू प्रसाद व रामविलास पासवान मिल जाते तो उनकी साझी सरकार बन जाती. पर रामविलास पासवान की शर्त यह थी कि लालू प्रसाद मुख्यमंत्री पद के लिए जाबिर हुसैन के नाम पर राजी हो जाएं. पर लालू प्रसाद राबड़ी देवी को ही मुख्यमंत्री बनवाना चाहते थे. पासवान इस पर राजी नहीं हुए और दुबारा चुनाव की नौबत आ गई. फिर तो नीतीश कुमार को मौका मिल गया.

लगता है कि जातीय समीकरण पर भरोसा करके लालू प्रसाद एक बार फिर वैसी ही ऐतिहासिक ग़लती कर रहे हैं. याद रहे कि इस लोकसभा चुनाव में राजद को सिर्फ़ 33 विधानसभा क्षेत्रों में ही बढ़त मिली है. यानी गत विधान सभा चुनाव की अपेक्षा लालू प्रसाद की 21 सीटें और घट गई हैं. हालांकि अब भी काफी यादव–मुस्लिम लालू प्रसाद के साथ हैं, पर यह बात भी है कि लालू प्रसाद ने अपनी शैली नहीं बदली तो बचे–खुचे यादव–मुस्लिम भी धीरे–धीरे उनका साथ छोड़ देंगे. यदि लालू प्रसाद ढूंढ़ना चाहें तो यादव–मुस्लिम सहित सभी जातियों में ईमानदार व जनसेवी नेता उन्हें मिल जाएंगे. वैसे ईमानदार नेताओं को ताक़त दी जाए तो वे पूरे समाज को ध्यान में रखते हुए काम करते हैं. इससे उनकी पार्टी को विश्वसनीयता मिलेगी. पर जिस शैली से लालू प्रसाद का दल क़रीब बीस साल से काम कर रहा है, इस शैली को क़ायम रखते हुए नीतीश सरकार का मुक़ाबला करना उसके लिए कठिन होगा. लालू प्रसाद लोकसभा चुनाव में अपने दल के नेता जगदानंद सिंह और डॉ. रघुवंश प्रसाद सिंह की जीत से भी शिक्षा ले सकते हैं. रघुवंश सिंह और जगदानंद सिंह बिहार के कुछ थोड़े से ईमानदार कार्यकुशल नेताओं में माने जाते हैं. हालांकि जगदानंद का मुक़ाबला इस चुनाव में एक अन्य ईमानदार भाजपा नेता लालमुनी चौबे से था, पर जगदानंद की जीत के पीछे अन्य कुछ तत्वों के साथ– साथ उनकी ईमानदारी का भी हाथ था. यही हाल रघुवंश प्रसाद सिंह का था. राजग की आंधी के बीच भी ये दोनों नेता अपने गुणों के कारण खड़े रहे. यदि राजद अन्य जातियों में भी जगदानंद और रघुवंश सिंह जैसे नेताओं को खोज कर उन्हें आगे बढ़ाए तो इससे न सिर्फ़ राज्य व देश का कल्याण होगा, बल्कि राजद का भी. ईमानदारी से खोजने पर हर जाति में ऐसे नेता व कार्यकर्ता मिल जाएंगे. बदली हुई परिस्थिति में नया जातीय समीकरण बनाने का मोह राजद को छोड़ना पड़ेगा. पार्टी को चूल्हे–चौके से बाहर निकालना होगा. अपहरण, फिरौती, घोटाला, शो रूम से कारें उठाने की घटनाओं के प्रति अब राजद में गुस्सा होना चाहिए. सत्ता के बल पर अपार संपत्ति बनाने के लोभ पर काबू पाने के साथ– साथ ऐसी बुराइयों के प्रति राजद नेताओं को अपने आप में भारी गुस्से का भाव भरना पड़ेगा.यदि इस दिशा में कभी के महाबली लालू प्रसाद आगे क़दम उठाएं तो वह अभी तो नहीं, पर बाद में कभी नीतीश कुमार के विकल्प के रूप में अपनी पार्टी को खड़ा कर सकते हैं. अन्यथा चतुर नेता और कुशल शासक नीतीश कुमार रोज़–ब–रोज़ लालू प्रसाद को जन समर्थन की दृष्टि से पीछे ही छोड़ते जाएंगे. यह कोई संयोग नहीं है कि लोकसभा चुनाव के बाद हुए फतुहा विधानसभा उप चुनाव में भी नीतीश के सामने लालू–राम विलास की साझा ताक़त पराजित हो गई.

बिहार में लालू प्रसाद के काम को अब नीतीश कुमार ने काफी कठिन कर दिया है. अब बाहुबल व जातीय समीकरण से अपनी राजनीति की गाड़ी एक क़दम भी नहीं हांकी जा सकती. अब यह कहने से भी काम नहीं चलेगा कि विकास का राजनीति से कोई आपसी संबंध नहीं है. यह बहाना भी नहीं चलेगा कि केंद्र ने मदद नहीं दी, इसलिए विकास नहीं हुआ. नीतीश ने इन मामलों में लालू प्रसाद के तर्कों को अपने कामों के जरिए झुठला दिया है. जनता ने नीतीश पर विश्वास करके इस लोक सभा चुनाव में इन्हें भारी जनादेश दिया है. यदि बिहार विधान सभा के चुनाव साथ–साथ हुए होते तो राजग को 176 सीटें मिलतीं. विधान सभा में कुल 243 सीटें हैं. जातीय वोट बैंकों के शिला खंडों को भी नीतीश ने तोड़ दिया है. अब सिर्फ़ काम और बेहतर चरित्र के जरिए ही कोई दल या नेता बिहार की राजनीति में टिक सकता है. लालू प्रसाद के प्रति मंडल आंदोलन के दौरान जो जन भावना पिछड़ों में उभरी थी, वह अब भी पूरी तरह मरी नहीं हैं. पर वह भावना अब इतनी ताक़तवर भी नहीं रह गई है कि वह लालू को फ़िलहाल बिहार में सत्ता दिला सके, पर प्रायश्चित करके पुराना विश्वास फिर से प्राप्त करने की कोशिश तो लालू प्रसाद कर ही सकते हैं.

नीतीश सरकार ने बिहार में काफी बदलाव किया है. वह बदलाव करते ही जा रहे हैं. फिर भी सुशासन और राहत के क्षेत्र में उन्हें बहुत–कुछ करना अभी बाक़ी है. ख़ुद नीतीश कुमार प्रशासनिक भ्रष्टाचार से आजिज़ आ चुके हैं. दो–तीन मंत्रियों, कुछ बड़े अफसरों व कर्मचारियों को छोड़कर शासन के अधिकतर लोग भ्रष्ट हैं. जनता को सरकारी दफ्तरों में क़दम–क़दम पर रिश्वत देनी पड़ रही है. राजद नेता और कार्यकर्ता इसके विरोध में प्रखंड स्तर तक जनांदोलन चला कर जनता की सद्भावना हासिल कर सकते हैं. पर ऐसे आंदोलनों के लिए भी ज़रूरी है इस आंदोलन के अगुआ उन नेताओं और कार्यकर्ताओं को नहीं बनाया जाए जिन लोगों ने लालू–राबड़ी राज के पंद्रह साल में जनता को लूटा है और प्रखंड और थानों की दलाली की है.

बिहार में लोकतंत्र को सजीव बनाए रखने के लिए भी यह ज़रूरी है कि नीतीश कुमार जैसे एक प्रामाणिक व जनसेवी नेता के ख़िलाफ़ एक प्रामाणिक व जन सेवी प्रतिपक्ष ही खड़ा हो. क्या ऐसा कभी हो पाएगा? पता नहीं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

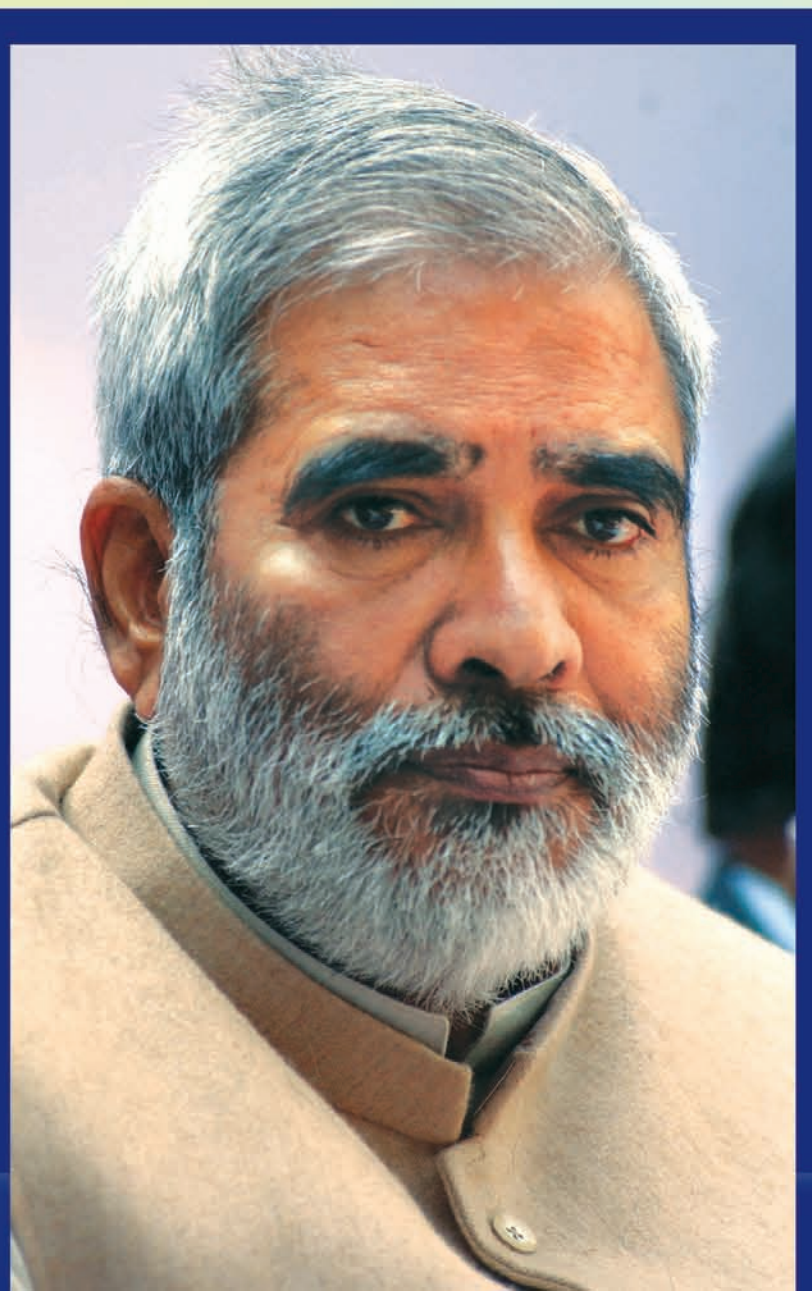

आज़ादी से अबतक महज़ 14 मुस्लिम महिला सांसद

ए.यू.आसिफ़

यह चौंकाने वाला तथ्य है कि 1952 से लेकर अब तक लोकसभाएं तो 15 बार गठित हुईं, लेकिन इन 52 वर्षों में मुस्लिम महिला सांसदों की संख्या 14 तक ही पहुंच पाई. इसका सीधा मतलब यह हुआ कि मुस्लिम महिला सांसदों का प्रतिनिधित्व 15 बार बनी लोकसभाओं के कुल 7906 सदस्यों में मात्र .17 प्रतिशत ही रहा है. इसी प्रकार अगर लोकसभा में अब तक 542 महिला सदस्यों के पसेमंज़र में और ग़ौर किया जाए तो मुस्लिम महिलाओं की भागीदारी 2.5 प्रतिशत ही होती है.

आंकड़ों के अनुसार 1984 एवं 2009 में मुस्लिम महिला सदस्यों की लोकसभा में संख्या तीन रही है जो कि अब तक की सर्वाधिक संख्या है. 1957, 1962, 1977, 1996 एवं 2004 में दो-दो तो 1997, 1978, 1981 और 1999 में एक-एक मुस्लिम महिला लोकसभा में मौजूद रही हैं. देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश से मुस्लिम महिला सदस्यों की लोकसभा में भागीदारी सबसे ज़्यादा छह रही है. इसके बाद असम से तीन, जम्मू-कश्मीर से दो एवं पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और गुजरात से एक-एक मुस्लिम महिला ने अपने समुदाय की नुमाइंदगी की है. इन छह राज्यों के अलावा किसी और राज्य की मुस्लिम महिला आज तक लोकसभा में पहुंच ही नहीं पाई हैं.

ऐसी ही दयनीय स्थिति राजनीतिक पार्टियों के स्तर पर है. अब तक की कुल 14 मुस्लिम महिला सांसदों में सबसे अधिक संख्या निश्चय ही कांग्रेस की है. विशेष विश्लेषण से पता चलता है कि इन सांसदों में कांग्रेस की नौ, बसपा की दो और समाजवादी पार्टी, नेशनल कांफ्रेंस एवं पीडीपी की एक-एक सदस्य हैं. अन्य पार्टियों में से किसी ने कभी मुस्लिम महिला की लोकसभा में नुमाइंदगी को गंभीरता से लिया ही नहीं. भाजपा हो या वामपंथी दलों का समूह, इस मामले में सभी एक समान हैं. इस सिलसिले में स्वयं मुस्लिम पार्टियों की भी यही स्थिति है. नेशनल कांफ्रेंस और पीडीपी को छोड़कर इनमें से कभी किसी ने इस पर ध्यान ही नहीं दिया. नेशनल कांफ्रेंस की भी दिलचस्पी सिर्फ़ दिवंगत शेख मोहम्मद अब्दुल्ला की पत्नी अकबर जहां बेगम तक सीमित रही. वह श्रीनगर से 1977 एवं 1984 में दो बार लोकसभा के लिए निर्वाचित हुईं. इसी प्रकार पीडीपी संस्थापक मुफ़्ती मुहम्मद सईद की बेटी महबूबा मुफ़्ती ने भी 2004 में अनंतनाग से अपनी पार्टी की नुमाइंदगी की. उन्हें तो किसी मुस्लिम राजनीतिक पार्टी के अध्यक्ष पद को संभालने का भी श्रेय प्राप्त हुआ है. वह इससे पूर्व जम्मू-कश्मीर विधानसभा में भी सदस्य रही हैं. लोकसभा हो या विधानसभा, उन्होंने एक प्रखर सदस्य की भूमिका प्रभावी तौर पर निभाकर अपने अस्तित्व को मनवाया है.

जहां तक अन्य मुस्लिम महिला सांसदों का मामला है, तो उनमें से अधिकतर अकबर जहां बेगम एवं महबूबा मुफ़्ती की तरह किसी न किसी जाने-माने राजनीतिक परिवार से संबंध रखती हैं. मिसाल के तौर पर 1981 एवं 1984 में बरेली से सांसद बेगम आबिदा अहमद पूर्व राष्ट्रपति दिवंगत फ़खरूद्दीन अली अहमद की पत्नी थीं. वह लगातार 1981 एवं 1984 में कांग्रेस के टिकट पर निर्वाचित हुई थीं. इसी प्रकार मोहसिना क़िदवई, रशीदा हक़ चौधरी, बेगम नूरबानो एवं रुबाब सैयदा के राजनीतिक परिचय से कौन वाक़िफ़ नहीं है. बहरहाल, लोकसभा में पदार्पण का सेहरा सर्वप्रथम मुफिदा अहमद एवं मैमुना सुल्तान को जाता है. मुफिदा, जिनका गत वर्ष 17 जनवरी को 88 वर्ष की आयु में देहांत हो गया, कांग्रेस के टिकट पर 1957 में दूसरी लोकसभा के लिए जोरहट (असम) से निर्वाचित हुई थीं. इसी वर्ष मैमुना सुल्तान भी कांग्रेस की भोपाल से सांसद बनी थीं. वह तीसरी लोकसभा में भी मौजूद थीं. इन दोनों महिलाओं को प्रथम मुस्लिम महिला सांसदों के तौर पर जाना जाता है.

वैसे यह कटु सत्य है कि इन 14 मुस्लिम महिला सांसदों में सिर्फ़ मोहसिना क़िदवई ही आज़ाद भारत में मंत्री के पद से सुशोभित की गई हैं. वह कांग्रेस के संगठन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है. उन्होंने उत्तर प्रदेश के अलावा इंदिरा गांधी और राजीव गांधी के दौर में केंद्र में भी कई मंत्रालयों को संभाला है. एक बार तो राष्ट्रपति के पद के लिए भी उनके नाम पर विचार किया जा रहा था. वह इस समय राज्यसभा की सदस्य है. 77 वर्ष की आयु में भी यह बहुत ही सक्रिय हैं. वह लोकसभा के लिए आज़मगढ़ एवं मेरठ से 1978, 1980 एवं 1984 में तीन बार निर्वाचित हुई हैं. बहरहाल, ऐसी महिलाएं इस पंक्ति में नहीं के बराबर दिखाई पड़ती हैं जो बिना किसी राजनीतिक पसेमंजर के राजनीतिक पटल पर आई हों.

2009 में 15वीं लोकसभा के लिए जो तीन मुस्लिम महिलाएं चुनी गई हैं, उनमें बसपा की दो- तबस्सुम बेगम एवं कैसर जहां हैं. इनमें से एक तबस्सुम कैराना तो दूसरी कैसर सीतापुर से निर्वाचित होकर आई हैं. तीसरी मुस्लिम महिला सांसद कांग्रेस की मौसम बेनज़ीर नूर हैं. उनका संबंध भी बंगाल के एक प्रसिद्ध राजनीतिक परिवार से रहा है. वह कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता एबीए ग़नी खां चौधरी की भतीजी हैं. उनकी मां रूबी नूर, जिनका गत वर्ष जून में देहांत हो गया, गत 20 वर्षों से सूजापुर से पश्चिम बंगाल विधानसभा की सदस्य थीं. उनके देहांत के बाद मौसम ने दिल्ली की फौक्स एण्ड मंडल ला फर्म को अलविदा कहकर मालदा का रुख़ किया और मां के देहांत से हुए रिक्त स्थान पर उपचुनाव लड़कर विधानसभा सदस्य बन गईं. लेकिन एक वर्ष से भी कम समय के भीतर सोनिया गांधी का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ और फिर वह लोकसभा चुनाव में मालदा से कूद पड़ीं. 29 वर्षीया मौसम इस तरह एक वर्ष के अल्पकाल में ही अपने आप को सियासी मौसम से बड़ी हद तक जोड़ने में सफल हो गई हैं.

एक ऐसे समय जबकि महिला आरक्षण विधेयक को पारित कराने का माहौल बनाया जा रहा है, मुस्लिम आधी दुनिया की स्थिति कुल मिलाकर बहुत ही दयनीय है. इसके लिए मुस्लिम समाज ही नहीं बल्कि राजनीतिक पार्टियां भी ज़िम्मेदार हैं. इस बीच, मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा का जो ज़ोर बढ़ा है, जिससे उनमें जागृति आई है. ऐसी मुस्लिम महिलाएं भी सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में सक्रिय दिखाई देने लगी हैं जो कि हिजाब या पर्दे का उपयोग करती हैं.

प्रश्न यह है कि क्या राजनीतिक पार्टियां उपरोक्त कटुसत्य को गंभीरतापूर्वक लेंगी और मुस्लिम महिला जो कि दूसरे समुदाय की महिलाओं की तुलना में बहुत ही पिछड़ी हुई हैं, के राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए विशेष योजनाएं बनाएंगी?

मुस्लिm महिलाओं के प्रति राजनीतिक पार्टियों का इस बार जो व्यवहार रहा, उसके फलस्वरूप मात्र तीन मुस्लिम महिलाओं का ही लोकसभा में पदार्पण हो पाया है. इनमें बसपा की दो एवं कांग्रेस की एक महिला हैं. इनमें से दो का उत्तर प्रदेश और एक का पश्चिम बंगाल से संबंध है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

- 15 लोकसभाओं के कुल 7906 सदस्यों में मुस्लिम महिलाएं मात्र .17 प्रतिशत हैं.
- 15 लोकसभाओं के कुल 542 महिलाओं में मुस्लिम महिलाएं 2.5 प्रतिशत हैं.
- 15 लोकसभाओं में कांग्रेस से नौ, बसपा से दो, सपा, नेकां एवं पीडीपी से एक-एक मुस्लिम महिला सदस्य बनीं.
- 15 लोकसभाओं में मुस्लिम महिला सदस्यों की भागीदारी उ.प्र. से छह, असम से तीन, जम्मू-कश्मीर से दो एवं पश्चिम बंगाल, म.प्र. और गुजरात से एक-एक रही हैं.
- 1984 एवं 2009 में सर्वाधिक मुस्लिम महिला सांसदों की संख्या तीन-तीन रहीं
- 1957, 1962, 1977, 1996 एवं 2004 में महिला सांसदों की संख्या दो-दो
- 1977, 1978, 1981 एवं 1999 में महिला सांसदों की संख्या एक-एक ही रही

अब तक 15 लोकसभाओं में पहुंचीं 14 मुस्लिम महिलाएं

क्रमांक	नाम	पार्टी	क्षेत्र	वर्ष
1	मुफिदा अहमद	कांग्रेस	जोरहट(असम)	1957
2	रशीदा हक़ चौधरी	कांग्रेस	सिलचर(असम)	1977
3	नाजनीं फारूक़	कांग्रेस	नौगांव(असम)	1996
4	मैमुना सुल्तान	कांग्रेस	भोपाल(म.प्र.)	1957,1962
5	ज़ोहराबेन अकबर भाई चावड़ा	कांग्रेस	बानसकांठा(गुजरात)	1962
6	अकबर जहां बेग़म	नेशनल कांफ्रेंस	श्रीनगर (जम्मू-कश्मीर)	1977,1984
7	महबूबा बेग़म	पीडीपी	अनंतनाग (जम्मू-कश्मीर)	2004
8	मोहसिना क़िदवई	कांग्रेस	आज़मगढ़,मेरठ (उ.प्र.)	1978,1980,1984
9	बेग़म आबिदा अहमद	कांग्रेस	बरेली (उ.प्र.)	1981,1984
10	बेग़म नूरबानो	कांग्रेस	रामपुर (उ.प्र.)	1996, 1999
11	रुबाब सैयदा	सपा	बहराइच (उ.प्र.)	2004
12	तबस्सुम बेग़म	बसपा	कैराना (उ.प्र.)	2009
13	क़ैसर जहां	बसपा	सीतापुर (उ.प्र.)	2009
14	मौसम बेनज़ीर नूर	कांग्रेस	मालदा उत्तरी (प.बं.)	2009

खंड-खंड होकर रहेगा खंडूरी का राज

राजकुमार शर्मा

उत्तराखंड में लोकसभा की सभी सीटों पर मिली हार के बाद भाजपा नेतृत्व ने मुख्यमंत्री भुवन चंद्र खंडूरी को बदलने की तैयारी कर ली है. राज्य में पांचों संसदीय सीट पर भाजपा की लुटिया डुबोने के लिए लोग मुख्यमंत्री को ही ज़िम्मेदार मान रहे हैं. यही कारण है कि उनके ख़िलाफ़ पार्टी की राज्य ईकाई में खुली बग़ावत देखी जा रही है. पार्टी के विधायक भी हार के लिए मुख्यमंत्री के फौजी की तरह शासन करने के तरीक़े को ही ज़िम्मेदार मान रहे हैं.

मेजर जनरल खंडूरी के शासनकाल में ही प्रदेश भाजपा में पहली बार आंतरिक कलह देखने को मिला और दो दर्जन से अधिक विधायकों ने मुख्यमंत्री के विरोध में दिल्ली में पार्टी अध्यक्ष राजनाथ सिंह को त्यागपत्र सौंप दिया. यह लोकसभा चुनाव से पहले की बात है. सब कुछ जानकर भी अंजान रहते हुए भाजपा हाईकमान ने जिस तरह इस बग़ावत को दबाने के साथ-साथ मेजर जनरल को संसदीय चुनाव में खुली छूट दी, उसका ही परिणाम रहा कि भाजपा को अपनी पांचों संसदीय सीटों पर करारी हार का सामना करना पड़ा. उधर, राज्य की मुख्य विपक्षी पार्टी कांग्रेस पांचों संसदीय सीटों पर न सिर्फ़ जीत गई, बल्कि विधानसभा के 70 में से 51 क्षेत्रों में भी वह नंबर एक पर रही. यानी आज की तारीख़ में विधानसभा चुनाव हो, तो राज्य में कांग्रेस भारी बहुमत से जीत जाएगी.

बहरहाल, इस संसदीय चुनाव में कांग्रेस के युवराज राहुल गांधी ने भी देवभूमि उत्तराखंड पहुंच कर कह दिया था कि मुख्यमंत्री फौजी की तरह सरकार चला रहे हैं. उनके इस जुमले पर मेजर जनरल खंडूरी उखड़ गए और सीधे आरोप लगाया कि राहुल ने राज्य और देश के अनुशासित व कर्तव्यपरायण फौजियों का अपमान किया है, जिसके लिए उन्हें सार्वजनिक रूप से माफ़ी मांगनी चाहिए. राहुल का मुख्यमंत्री जी को आईना दिखाना उन्हें बहुत बेकार तो लगा, पर उन्होंने अपने गिरेबान में झांके बिना ही एक सच को भी झूठ में बदलने का प्रयास किया. इसका पूरा लाभ कांग्रेस को मिला और राज्य की युवा पीढ़ी ने भी मेजर जनरल के फौजी शासन के ख़िलाफ़ जनादेश देते हुए भाजपा को करारा झटका दे दिया. खंडूरी के फौजी की तरह शासन चलाने के कारण ही सत्तासीन होने के एक वर्ष बाद ही उनकी लोकप्रियता का ग्राफ अपने विधायकों एवं दल के लोगों के बीच तेजी से गिरा. फिर दूसरा वर्ष पूरा करते-करते उनके ख़िलाफ़ उठने वाली चिंगारी शोला बन चुकी थी. मुख्यमंत्री अपने विधायकों और पूर्व मुख्यमंत्री भगत सिंह कोश्यारी की आंख की किरकिरी बन गए. इन सब के मूल में रहा-भ्रष्ट अधिकारियों को सत्ता की कमान सौंप देना. इन अधिकारियों की राय पर विधायकों के जनहित के कार्यों पर पहरे के साथ पाबंदी लगा दी गई. सरकार के स्तर पर जनता का हित करने में भाजपा का लगभग हर विधायक अपने को असमर्थ पाने लगा. इस सूचना को राज्य के भाजपा नेताओं ने पार्टी हाईकमान तक पहुंचाने का काम निरंतर जारी रखा, पर किसी ने ध्यान नहीं दिया. उनकी बातों को अनसुना करना ही भाजपा के लिए आत्मघाती साबित हुआ.

जनता की भावनाओं को त्याग कर एक दंभी शासक की तरह खंडूरी का सरकार चलाना ही सूबे की पांचों संसदीय सीटों पर हार का कारण बना. पिछले उपचुनाव में टिहरी सीट पर राजा नुजेंद्र शाह के साथ जिस तरह विश्वासघात किया गया था, उसका परिणाम यह रहा कि आधा दर्जन बार टिहरी राजघराने द्वारा जीती गई टिहरी सीट कांग्रेस के विजय बहुगुणा के हाथ लग गई थी. उपचुनाव में मिली इस जीत के बाद कांग्रेस ने टिहरी के गढ़ को अपनी सेवा एवं लगन से जहां लगातार मज़बूत किया, वहीं भाजपा ने इस सीट से टिहरी राजघराने का पत्ता साफ कर राष्ट्रीय तीरंदाज जसपाल राणा को मैदान में उतार दिया. इतना ही नहीं, संसदीय चुनाव की घोषणा के साथ *पीएम एन वेंटिग* लालकृष्ण आडवाणी की विजय संकल्प रैली में भाजपा ने अपने पांचों प्रत्याशियों की घोषणा के बाद ख़ाली खजाने के बावजूद तीन करोड़ की धनराशि जिस तरह खुले मंच पर आडवाणी जी को सौंपी, उसका भी तंगहाल जनता पर ग़लत असर पड़ा. विजय संकल्प रैली के बाद हरिद्वार सीट से घोषित प्रत्याशी मदन कौशिक को एकाएक विहिप के समक्ष घुटने टेकते हुए बदलना उत्तराखंड की बदहाली एवं भाजपा की करारी हार का एक प्रमुख कारण बना. वैसे इस हार की भूमिका पिछले दिनों संपन्न हुए मेयर एवं गढ़वाल के उपचुनाव में रजनी रावत एवं सतपाल महाराज की जीत के साथ ही तैयार हो गई थी. लेकिन खंडूरी इसे नहीं समझ पाए. गढ़वाल की जनता अबकी पूरी तरह सतपाल महाराज के साथ खड़ी दिखी. जिस प्रदेश को मॉडल प्रदेश बनाने का सपना देखते हुए अटल बिहारी वाजपेयी ने मेजर जनरल खंडूरी के हवाले किया था, वह सपना आज चकनाचूर हो चुका है. पांचों सीटों पर मिली हार की गाज से बचने के लिए मुख्यमंत्री ने दिल्ली जा कर जहां हार की नैतिक ज़िम्मेदारी लेते हुए त्यागपत्र देने की पेशकश की, वहीं देहरादून पहुंचे पर्यवेक्षकों को 24 विधायक व पार्टी के जिलाध्यक्षों का साथ होने की बात कह सत्ता संघर्ष को तेज़ कर दिया. राज्य में विधानसभा के हो रहे उपचुनाव में पार्टी को हानि से बचाने के लिए हाईकमान ने उन्हें मुख्यमंत्री पद पर बने रहने की बात तो ज़रूर कह दी है, पर पार्टी को बचाने के लिए मेजर जनरल की विदाई तय हो चुकी है. अगला मुख्यमंत्री कौन होगा, इसकी दौड़ चालू है. इसमें भाजपा हाईकमान निर्विवाद नेता के रूप में प्रकाश पंत को अपना पसंदीदा नेता मान रहा है. वैसे इस दौड़ में रमेश पोखरियाल निशंक एवं कोश्यारी भी लगे हुए हैं. हालांकि माना यह भी जा रहा है कि हाईकमान ब्राह्मण बहुल प्रदेश में खंडूरी को हटा कर किसी ब्राह्मण नेता को ही सत्ता की कमान सौंपना चाहता है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

फोटो-प्रभात पाण्डेय

खंडूरी के फौजी की तरह शासन चलाने के कारण ही सत्तासीन होने के एक वर्ष बाद ही उनकी लोकप्रियता का ग्राफ अपने विधायकों एवं दल के लोगों के बीच तेजी से गिरा. फिर दूसरा वर्ष पूरा करते-करते उनके ख़िलाफ़ उठने वाली चिंगारी शोला बन चुकी थी. मुख्यमंत्री अपने विधायकों और पूर्व मुख्यमंत्री भगत सिंह कोश्यारी की आंख की किरकिरी बन गए.

नई सरकार से मुसलमानों की अपेक्षाएं

राजनीति के सभी पंडितों और विश्लेषकों ने केंद्र में कांग्रेस नेतृत्व वाली सरकार की वापसी में मुस्लिम मतदाताओं की भूमिका को रेखांकित किया है. विभिन्न विपक्षी पार्टियों का भी यही मानना है कि मुस्लिम मतदाताओं ने हैरतअंगेज़ तौर पर कांग्रेस पार्टी को इस बार पहली तरजीह दी और उनके इस रुख़ में विभिन्न स्तरों पर कंफ्यूज़न दिखने के बजाय एकजुटता नज़र आती है. हालांकि मतदान से पहले या मतदान के विभिन्न चरणों में उनके बीच कांग्रेस के प्रति कोई ख़ास गर्मजोशी प्रतीत नहीं हुई थी. दरअसल यह चुनाव नतीजा मुस्लिम मतदाताओं की राजनीतिक समझ और तजुर्बों से उनमें पैदा हुई परिपक्वता का परिचायक है. मुस्लिम मतदाता कांग्रेस या अन्य धर्मनिरपेक्ष दलों के प्रति अपने अंदर अब कोई जोश नहीं पाता, लेकिन राजनीतिक फ़ैसला उसे करना होता है, इसलिए वह ख़ामोशी के साथ अपनी प्राथमिकताएं तय कर रहा है. कांग्रेस की सरकारों से उसे जो शिकायतें रही हैं, वह उस के मन-मस्तिष्क में मौजूद है. लेकिन कांग्रेस नेतृत्व वाली यूपीए सरकार ने अपने पहले कार्यकाल में उनके विकास के प्रति जो दिलचस्पी दिखाई है उसे वे कांग्रेस पार्टी की तरफ़ से एक सकारात्मक संकेत समझ रहे हैं. इसलिए उन्होंने यह फ़ैसला लिया है कि कांग्रेस की तरफ़ से इस पहल को स्वीकार किया जाए और पीछे की तरफ़ देखते रहने के बजाय आगे बढ़ने के लिए उसके साथ सहयोग किया जाए.

सच्चर समिति के द्वारा यूपीए सरकार ने मुसलमानों की सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक स्थिति का आकलन करके उनके सामूहिक पिछड़ेपन को सार्वजनिक रूप से स्वीकार किया और इस पिछड़ेपन को दूर करने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ली. हालांकि सच्चर समिति की रिपोर्ट पर संसद में कोई विधिवत चर्चा नहीं कराई गई और न ही उसकी सिफ़ारिशों को पूरी तरह लागू किया गया, लेकिन मुसलमानों ने इस उम्मीद में कांग्रेस को लोकसभा चुनाव में बढ़-चढ़ कर वोट दिया है कि नए कार्यकाल में वह इस दिशा में आगे क़दम बढ़ाएगी. जिस डॉक्टर ने बीमारी का पता लगाया है, उसी से बेहतर इलाज की भी उम्मीद की जा सकती है. इस लिए मनमोहन सिंह जी की सरकार पर अब बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी आ गई है कि मुस्लिम मतदाताओं की अपेक्षाओं को पूरा करें.

यहां सरकार को उन महत्वपूर्ण कामों की याद दिलाना ज़रूरी है जिनके सुझाव सच्चर समिति ने दिए हैं और मुसलमान मतदाताओं के अलावा समानता में विश्वास रखने वाले सभी नागरिकों की अपेक्षाओं के अनुरूप हैं. इन में पहला काम है-समान अवसर आयोग का गठन. यह एक ऐसा सुझाव है जो देश के हर नागरिक और नागरिक समूह के हितों को सुरक्षित करने की गारंटी बन सकता है. इसलिए सरकार को इस संबंध में तुरंत क़दम उठाना चाहिए. इसी तरह डॉयवर्सिटी इंडेक्स पर आधारित इंसेंटिव्स स्कीम का सुझाव भी सभी वर्गों के हित में है. यह स्कीम भी जल्द ही शुरू की जानी चाहिए.

> **सच्चर समिति ने मुस्लिम बहुल चुनाव क्षेत्रों को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित किए जाने के मुद्दे को भी उठाया है. ऐसे ज़िलों और चुनाव क्षेत्रों की एक लंबी सूची है, जहां मुसलमानों की आबादी अनुसूचित जातियों से ज़्यादा है लेकिन उन्हें सुरक्षित करार दे दिया गया है. इसकी वजह से मुसलमानों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व घट रहा है. इसलिए सरकार एक रिवाइव कमीशन गठित करे जो तमाम आरक्षित चुनाव क्षेत्रों का जायज़ा लेकर इन असमानताओं को दूर करे.**

जहां तक सच्चर समिति के अन्य सुझावों का सवाल है, तो उनके संबंध में जस्टिस रंगनाथ मिश्रा आयोग ने जो योजनाएं प्रस्तावित की हैं उनके लागू होने का इंतज़ार है. हालांकि सरकार ने इन्हें अभी सार्वजनिक नहीं किए हैं, लेकिन उनकी जानकारी मीडिया के माध्यम से जनता को मिल चुकी है. मुसलमान चाहते हैं कि सरकार संसद के पहले ही सत्र में इन्हें पारित कराए और एक निर्धारित अवधि में इन पर अमल को सुनिश्चित करे. मुसलमानों का एक बड़ा मुद्दा वक़्फ़ संपत्तियों के प्रबंधन और उन्हें समुदाय के विकास के लिए उपयोगी बनाना है. सच्चर समिति ने इस संबंध में बहुत अहम सुझाव दिए हैं. राज्यों में स्थापित वक़्फ़ बोर्डों में चीफ़ एग्ज़िक्यूटिव ऑफ़ीसर नियुक्त करने का प्रावधान है, लेकिन अधिकांश वक़्फ़ बोर्डों में यह पद ख़ाली पड़े हैं. चूंकि वक़्फ़ संबंधी क़ानून के अनुसार यह अधिकारी मुस्लिम समुदाय से ही होगा, इस लिहाज़ से नौकरशाही में मुसलमानों की संख्या उनकी आबादी के अनुपात से एक चौथाई भी नहीं है.

सच्चर समिति ने अन्य सरकारी सेवाओं के लिए भर्ती बोर्ड के पैटर्न पर इंडियन वक़्फ़ सर्विस जैसी कैडर व्यवस्था शुरू करने का सुझाव दिया है. सरकार को इस सुझाव पर आवश्यक रूप से अमल करना चाहिए. वक़्फ़ संपत्तियों को नाजायज़ क़ब्ज़ों से मुक्त कराने के संबंध में सच्चर समिति का यह सुझाव बहुत महत्वपूर्ण है कि जो वक़्फ़ संपत्तियां स्वयं सरकारी विभागों के इस्तेमाल में हैं उन्हें अगर मुक्त नहीं किया जा सकता है तो बाज़ार रेट पर उन्हें ख़रीदने की योजना बनाई जाए, ताकि उस पूंजी से नया वक़्फ़ स्थापित किया जा सके या उन्हें बाज़ार रेट पर किराए या लीज़ पर लिया जाए.

अल्पसंख्यक कल्याण मंत्रालय ने अल्पसंख्यक छात्रों को मुफ़्त कोचिंग की सुविधा देने के लिए ग़ैर सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता देने की योजना पर काम शुरू किया है. इस संबंध में हमारा सुझाव यह है कि अल्पसंख्यक छात्रों की प्रतियोगितात्मक क्षमता को बढ़ाने के लिए उन्हें नामी कोचिंग संस्थाओं में प्रवेश दिलाने की व्यवस्था की जाए और ग़ैर सरकारी संस्थाओं को दी जाने वाली राशि में से उनकी फ़ीस के भुगतान का प्रावधान किया जाए. क्योंकि ग़ैर सरकारी संगठनों के माध्यम से चलने वाली चेरिटेबल कोचिंग संस्थाओं का शैक्षिक स्तर संतोषजनक नहीं है. अल्पसंख्यक कल्याण मंत्रालय ने जिन मुस्लिम बहुल ज़िलों को विशेष ध्यान देने के लिए चुना है, उनमें स्कूल, कॉलेज और तकनीकी प्रशिक्षण संस्थाएं खोलने के लिए एनजीओ को भरपूर सुविधाएं दी जाएं. मदरसों के छात्रों को प्रतियोगी परीक्षाओं में शरीक होने का अवसर देने के लिए उनकी सनद को व्यापक रूप से मान्यता दी जाए, ताकि उसके आधार पर वह अपेक्षित शैक्षिक योग्यता प्राप्त कर सकें.

सच्चर समिति ने मुस्लिम बहुल चुनाव क्षेत्रों को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित किए जाने के मुद्दे को भी उठाया है. ऐसे ज़िलों और चुनाव क्षेत्रों की एक लंबी सूची है, जहां मुसलमानों की आबादी अनुसूचित जातियों से ज़्यादा है लेकिन उन्हें सुरक्षित करार दे दिया गया है. इसकी वजह से मुसलमानों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व घट रहा है. इसलिए सरकार एक रिवाइव कमीशन गठित करे जो तमाम आरक्षित चुनाव क्षेत्रों का जायज़ा लेकर इन असमानताओं को दूर करे. अनुसूचित जातियों और जनजातियों को आरक्षण देने के लिए 1950 में जो अधिसूचना जारी की गई थी, उसमें केवल हिंदू धर्म से संबंध रखने वाले दलितों को अनुसूचित किया गया था. बाद में 1956 और 1990 में इसमें संशोधन करके इसमें सिखों और नव बौद्धों को भी शामिल कर लिया गया. लेकिन मुसलमानों और ईसाइयों में मौजूद दलितों को धर्म के आधार पर आरक्षण के इस प्रावधान से वंचित रखा गया है. यह संविधान और समता व न्याय के ख़िलाफ़ है. इसलिए मुसलमानों की यह बड़ी मांग है कि आरक्षण के लिए धर्म की इस शर्त को तुरंत हटाया जाए.

अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए राज्य और केंद्र सरकार की तरफ़ से चलाई जाने वाली योजनाओं की निगरानी के लिए स्थानीय स्तर पर सरकार की तरफ़ से समितियां बनाई जाएं, जो अपनी रिपोर्ट सरकार को दिया करें. बैंकों को यह निर्देश दिया जाए कि वे बांटे जाने वाले क़र्ज़ की सूची सार्वजनिक करें, ताकि यह जानकारी सरकार व जनता को रहे कि मुसलमानों के कर्ज़ों से वंचित न रखने के निर्देश पर बैंक कितना अमल कर रहे हैं. इसी तरह हर सरकारी विभाग में कर्मचारियों के चयन के लिए गठित होने वाली समिति में एक मुसलमान सदस्य को रखने के सुझाव पर भी अमल किया जाए और विभागों को इस बात का पाबंद किया जाए कि वह चयन प्रक्रिया का पूरा विवरण वेबसाइट पर जारी किया करें.

सर्वांगीण विकास के नारे पर पुनः सत्ता में आने वाली यूपीए सरकार के वादों और घोषणाओं पर अब अमल का वक़्त है. जनता के सभी वर्गों के साथ न्याय करना और सब को विकास के समान अवसर देना इस सरकार की ज़िम्मेदारी भी है और इसी में इस का इम्तिहान भी है.

(लेखक सच्चर समिति के ओ एस डी और ज़कात फ़ाउंडेशन ऑफ़ इंडिया के अध्यक्ष हैं)

डॉ. सैयद ज़फ़र महमूद
feedback.chauthiduniya@gmail.com

केंद्रीय मंत्रिमंडल से मुसलमान नाख़ुश

सलमान ख़ुर्शीद

कांग्रेस के नेतृत्व वाली नई सरकार के गठन से कांग्रेस की दूरगामी योजनाओं को देखा और समझा जा सकता है. ऐसी योजना, जिसमें पार्टी अपने कल्चर, अपनी नीतियों और कार्यशैली को नई पीढ़ी के कांग्रेसियों में स्थानांतरित करने की कोशिश कर रही है. इसका मतलब यह है कि जेनरेशन चेंज के साथ कांग्रेस पार्टी में किसी बदलाव की आशा रखने वालों को मायूस हो जाना चाहिए. कांग्रेस पार्टी स्वयं को बदले बिना ही नई पीढ़ी के कंधे पर सवार होकर आगे का रास्ते तय करेगी. कांग्रेस की भावी योजना के बारे में यह धारणा नए मंत्रिमंडल के स्वरूप को देख कर बनती है. कैबिनेट मंत्रियों के रूप में कांग्रेस ने जिनका चयन किया है, उन्हें देख कर बूढ़ा मंत्रिमंडल बनाने का आरोप लगता है. लेकिन यहां यह समझना शायद सही होगा कि बुज़ुर्गों की यह मजलिस सजाना कांग्रेस के लिए कोई मजबूरी नहीं, बल्कि एक अनुभवी और ठेठ कांग्रेसी जमात को लेकर सरकार चलाने की मंशा है. इसमें कोई दो राय नहीं कि कांग्रेस इस समय पीढ़ियों के परिवर्तन यानी जेनरेशन चेंज के एक दौर में है. उसे अब नेतृत्व और पार्टी के माध्यम से नई पीढ़ी को सत्ता से जोड़ना है. इसलिए वह नैतृत्व और सत्ता के स्थानांतरण के साथ-साथ अपनी परंपराएं, संस्कृति और कार्यशैली भी नई पीढ़ी को सौंप देना चाहती है. मंत्रिमंडल में कांग्रेस की ओर से जो युवा चेहरे

ग़ुलाम नबी आज़ाद

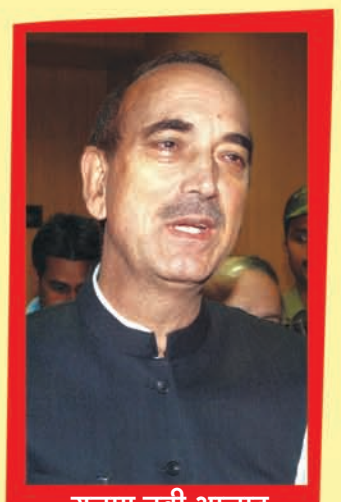

शामिल किए गए हैं, उन्हें देखते हुए पार्टी यह मंशा समझ में आती है. सभी युवा मंत्री राज्यमंत्री के रूप में काम करेंगे. कैबिनेट मंत्री के रूप में एक भी युवा सांसद नहीं है. जितिन प्रसाद और ज्योतिरादित्य सिंधिया जैसे सांसद भी नहीं, जो पिछली सरकार में राज्यमंत्री रह चुके हैं. कांग्रेस के युवा सांसदों पर नज़र डालें तो आप देखेंगे कि सभी परंपरागत कांग्रेसी घरानों के वारिस हैं. इस तरह जो समीकरण बन रहा है, वह यह है कि ठेठ कांग्रेसी बुज़ुर्गों की जमात परंपरागत कांग्रेसी परिवेश से आने वाले युवा नेताओं को राजनीति का प्रशिक्षण दे रही है और भविष्य में पार्टी के अंदर संस्कृति, नीतियों या आचरण के स्तर पर किसी भी बदलाव की संभावनाओं पर विराम लगाना चाहती है. ज़ाहिर है कि जो लोग

> **कांग्रेस पार्टी स्वयं को बदले बिना ही नई पीढ़ी के कंधे पर सवार होकर आगे का रास्ते तय करेगी. कांग्रेस की भावी योजना के बारे में यह धारणा नए मंत्रिमंडल के स्वरूप को देख कर बनती है.**

कांग्रेस में बदलाव की उम्मीद के साथ उससे जुड़ना चाहते हैं, या जुड़े रहना चाहते हैं उनके लिए यह संतोष या ख़ुशी की बात नहीं होगी. एक लंबे समय से कांग्रेस से दूर रहने के बाद इस बार उसकी हिमायत में भरपूर तरीक़े से वोट देने वाले मुसलमानों को भी यह बात खलेगी कि वह नेतृत्व परिवर्तन और पीढ़ी परिवर्तन के साथ कांग्रेस के राजनीतिक रवैये में, अपने विचार से, जिस सकारात्मक बदलाव के प्रति आशावान हैं उसकी गुंजाइश नहीं दिखाई देती. मुसलमानों की मायूसी तो मंत्रिमंडल के गठन से ही शुरू हो गई है. मुसलमान इस बात की न केवल उम्मीद लगाए हुए थे, बल्कि कांग्रेस नेतृत्व और प्रधानमंत्री से यह अपील भी की थी कि मंत्रिमंडल में उन्हें समानुपातिक प्रतिनिधित्व दिया जाए. 13 प्रतिशत आबादी के हिसाब से उन्होंने 79 में से 11 मंत्री मुस्लिम समुदाय से लेने की अपील की थी. लेकिन कांग्रेस ने केवल पांच मुसलमानों को मंत्रिमंडल में शामिल किया. इन पांचों का जायज़ा भी मुसलमानों की नज़र से लिया जाए तो कहा जा सकता है कि ये सब मुस्लिम प्रतिनिधित्व की रस्म पूरी करते हैं, न कि प्रतिनिधित्व की ज़रूरत. गुलाम नबी आज़ाद, सलमान ख़ुर्शीद और फ़ारूक़ अब्दुल्लाह मुस्लिम समाज की भावनाओं, आवश्यकताओं और समस्याओं के प्रवक्ता नहीं माने जाते हैं. वे कांग्रेस को जंचने वाली उस धर्मनिरपेक्ष संस्कृति के द्योतक हैं जिसे मुसलमान स्वीकार नहीं करते और जो वास्तव में संविधान की अपेक्षा या धर्मनिरपेक्षता की भारतीय परिभाषा का सही मतलब नहीं है. भारतीय लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता भारतीय समाज के समस्त वर्गों को अपनी संस्कृति और धार्मिक मान्यताओं के अनुसार अपना सामुदायिक अस्तित्व बनाए रखते हुए एक राष्ट्र के रूप में संगठित रहने की परिकल्पना देता है. इस तरह यह एक उदारवादी समाज है, जिसमें विभिन्न समुदाय सरकार और राजनीति के मंचों पर अपना सामुदायिक प्रतिनिधित्व रखते या रख सकते हैं. जबकि उपरोक्त तीनों नेता इस रूप में मुस्लिम समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं. इस तरह मुस्लिम लीग के ई. अहमद और तृणमूल कांग्रेस के सुलतान अहमद ही मंत्रिमंडल में दो ऐसे चेहरे हैं जो मुस्लिम समाज की मुख्यधारा से जुड़े हुए हैं. मुसलमानों के बीच यह सवाल उठने लगे हैं कि कांग्रेस

फ़ारूक़ अब्दुल्ला

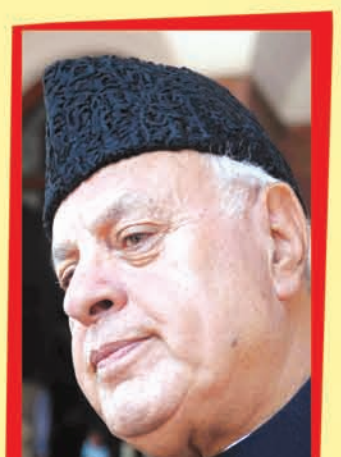

मो. अज़हरूद्दीन

मुख्यधारा के मुसलमानों को राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने में दिलचस्पी क्यों नहीं रखती? कांग्रेस के पास बिहार से मुस्लिम समाज के एक नामी प्रतिनिधि असरारुल हक़ क़ासमी थे. उत्तरप्रदेश से उसके पास अज़हरूद्दीन के रूप में मुस्लिम समाज का एक ऐसा राष्ट्रीय चेहरा था जो परंपरागत मुस्लिम परिवेश से आया है. कांग्रेस चाहती तो सहयोगी जमात मजलिस इत्तेहादुल मुसलमीन के असदुद्दीन उवैसी को भी मंत्रिमंडल में ले सकती थी, लेकिन कांग्रेस ने मुस्लिम समाज को न तो समानुपातिक प्रतिनिधित्व दिया और न ही विश्वसनीय प्रतिनिधित्व.

अदील अख्तर
feedback.chauthiduniya@gmail.com

मायावती के सामने चुनौतियों का पहाड़

सुरेंद्र अग्निहोत्री

दुनिया भर में विकेंद्रीकरण की बहार के बीच केंद्रीकरण की उलटी गंगा बहाने वाली उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती लोकसभा चुनाव में मिली करारी मात के बाद भी समझ नहीं पा रही हैं कि पार्टी और सरकार के क़दम किस दिशा में बढ़ाए जाएं, क्योंकि वह लगातार हर मामले में न्यायालय द्वारा मिल रही मात से परेशान हो गई हैं. दिल्ली दरबार में जब संबंध सुधारने गईं, तभी उच्च न्यायालय से गंगा एक्सप्रेस हाईवे पर रोक लगाने का फ़ैसला आ गया.

13 मई 2007 को प्रदेश की चौथी बार सत्ता संभालने के बाद पिछले दो वर्षों के माया सरकार के क्रियाकलापों के विश्लेषण से जो तस्वीर उभरती है उससे स्पष्ट होता है कि मायावती एक क़दम आगे और दो क़दम पीछे की नीति अपनाने को विवश हैं. ठेके पर खेती मामले से किसानों को मिलने वाले लाभ का बढ़-चढ़ कर प्रचार किया, लेकिन जब किसानों और विपक्ष ने विरोध किया तो उन्होंने इस नीति को तुरंत वापस ले लिया. तब से यह सिलसिला चल रहा है. वैसे देखा जाए तो प्रदेश विधानपरिषद में दो दिन पहले मनोनीत सुधीर गोयल से इस्तीफ़ा दिलाकर मायावती इसी तरह की कोशिश कर रही हैं. उनकी नीति और रीति समझ से परे है. अपनी हार की समीक्षा बैठक के बाद मंत्रियों को नख-दंत विहीन करके उन्हें इस हालात में पहुंचा दिया, जैसे किसी सर्कस के शेर को बिना भोजन का इंतज़ाम किए जंगल भेज दिया जाता है. सर्कस का शेर रिंग मास्टर के रहमोकरम पर अपने भोजन की जुगाड़ करता रहा होता है. बीस सालों का यह अभ्यास उसे जंगली वातावरण और शिकार करने की प्रवृत्ति से बिलग कर देता है. कुछ-कुछ यही हाल माया सरकार के मंत्रियों का हो गया है. एक मंत्री ने अपने दर्द का बयान कुछ इस तरह किया कि जब हम अधिकारियों को बेलगाम होने पर सज़ा नहीं दिला पाएंगे, भ्रष्ट अधिकारियों का स्थानांतरण नहीं करा पाएंगे तो हमारी कौन सुनेगा. मुख्यमंत्री मायावती द्वारा अधिकारों की कटौती के बाद एक जनपद का भ्रमण करके लौटे एक मंत्री ने बताया कि ज़िलों में अब हमारी हालत धोबी के गदहे की तरह हो गई है-न घर का रहा न घाट का. जनपदीय अधिकारी हमारी सुनते नहीं हैं. तब जनता की शिकायतों का निवारण कैसे होगा. जनता की जब सुनी नहीं जाएगी, तो जनता अपने आप पार्टी से दूर होती चली जाएगी.

फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

कांग्रेस द्वारा अपनी रणनीति के तहत पीएल पुनिया को आगे करने के कारण माया मैडम वैसे ही परेशान हैं. माया की तिजोरी में खोटे सिक्कों की भरमार है, जिन्हें वे कभी खरा कह देतीं तो कभी खोटा. सपा प्रवक्ता राजेंद्र चौधरी इस पर कहते हैं, ऐसा कहकर दरअसल वह जनता को बरगलाती रहती हैं.

लेकिन यह बात पंचम तल के मज़बूत पहरे के कारण माया मैडम तक पहुंचाने की जुर्रत कौन करे ? पूर्व में कुछ कहने की जुर्रत कर चुके प्रदेश अध्यक्ष स्वामी प्रसाद मौर्या का हश्र देखकर सभी सहम गए हैं. कांग्रेस द्वारा अपनी रणनीति के तहत पीएल पुनिया को आगे करने के कारण माया मैडम वैसे ही परेशान हैं. माया की तिजोरी में खोटे सिक्कों की भरमार है, जिन्हें वे कभी खरा कह देतीं तो कभी खोटा. सपा प्रवक्ता राजेंद्र चौधरी इस पर कहते हैं, ऐसा कहकर दरअसल वह जनता को बरगलाती रहती हैं. उन्होंने कहा कि कभी ब्रजलाल खाबरी पर विधानसभा में टिकट बेचने का आरोप लगाकर पार्टी से चलता कर देती हैं, तो कुछ दिनों बाद उन्हें ही राज्यसभा में भेज देती हैं. लोकसभा चुनाव में बुंदेलखंड न जाने का आदेश खाबरी के लिए जारी किया जाता है, फिर अचानक उन्हीं खाबरी को बुंदेलखंड का प्रभारी बनाकर भेज दिया गया. सिर्फ़ संगठन में ही नहीं, सत्ता के शीर्ष पर तैनात अधिकारियों के साथ भी चूहे-बिल्ली का लुकाछिपी वाला खेल खेला जाता है. लेकिन प्रदेश की सत्ता मिलने पर जिन नौकरशाहों ने उन्हें आयरन लेडी कहा था, वे ही सुरक्षा के नाम पर अब डरा दिया है. सच की परछाईं न पड़ने देने के लिए धीमे-धीमे ऐसा शिकंजा कसा कि पंचम तल पर आज़ादी के 60 वर्षों बाद पहली बार हालात ऐसे हो गए हैं कि पत्रकारों तक का प्रवेश सीमित कर दिया गया. सिर्फ़ इसलिए कि पत्रकार सच का आईना न दिखा दें . लोकसभा चुनाव के दौरान एक मंत्री ने नौकरशाह की शिकायत की, तो उसे ही सपा का शुभचिंतक बता दिया गया. वह बड़ी मुश्किल से मंत्री पद बचा पाए थे. तब से हालात इस तरह के हो गए हैं कि प्रदेश में चल रही माया सरकार की मतवाली चाल पर आंसू छलक रहे हैं, लेकिन कोई कुछ नहीं कह पा रहा है. बहुजन समाज पार्टी से कभी सांसद रहे और इस समय सपा विधायक विश्वंभर प्रसाद निषाद, माया सरकार पर टिप्पणी कुछ इस तरह करते हैं-जनता दरबार जैसे जन की बात सुनने के अवसर ख़त्म करके इस सरकार ने लोकतंत्र का गला घोंटने की जो कोशिश की है उसी का परिणाम है कि बसपा को लोकसभा चुनाव में करारी हार कर सामना करना पड़ा है. यह प्रदेश में मात्र 100 विधानसभा सीटों पर बढ़त क़ायम रख सकी बसपा के लिए ही नहीं, जनता से दूर होने वालों के लिए भी ख़तरे की घंटी है. बदले की राजनीति और नौकरशाही के बल पर आतंक राज चला कर कोई भी सरकार जनता का दिल नहीं जीत सकती है.

कांग्रेस के महासचिव भानु सहाय मानते है कि दलितों के घर राहुल गांधी के जाने के बाद मायावती का तिलमिलाना ठीक था. क्योंकि जो वह सोच रही थीं, वास्तव में वही हो रहा था. कांग्रेस से दूर हो चुका दलित राहुल गांधी के पहुंचने से कांग्रेस की ओर वापस आने के लिए तैयार हो गया था. दलितों की घर वापसी के बाद उत्तर प्रदेश में कांग्रेस की सियासी तस्वीर बदलना तय था. परिणामों ने जता दिया है कि कांग्रेस बसपा से आगे निकल गई है. इस जीत में माया का बड़बोलापन और खिल्ली उड़ाने के साथ-साथ विकास की अनदेखी मुख्य वजह बनी है. जब राहुल ने धरोहरा में दलित और ग़रीबों से कहा कि तुम्हें पता है कि लखनऊ में बैठा बड़ा-सा हाथी तुम्हारे लिए भेजा गया पैसा खा जाता है, तो जनता द्वारा बजाई गई तालियों की गड़गड़हाट ने दूर तलक अपना संदेश दे दिया था. बसपा के छिटक रहे जनाधार को क़ायम रखने के लिए मुख्यमंत्री मायावती प्रदेश में मिशन-2012 शुरुआत कर चुकी हैं.

इस मिशन के अंतर्गत होने वाली चीर-फाड़ के पहले प्रदेश के खुफ़िया विभाग और निजी जासूसों की मदद लेने की योजना को अंतिम रूप देने के साथ-साथ पुलिस भर्ती घोटाले में बर्ख़ास्त सिपाहियों को सुप्रीम कोर्ट से बहाली के बाद भर्ती करने वाले आई.पी.एस. अधिकारियों को सज़ा दिलाने के लिए मुहिम शुरू हो रही है. ज़िलों के विकास कार्यों की ज़िम्मेदारी वरिष्ठ अधिकारियों के हाथों सौंपकर औचक निरीक्षण जैसे पुराने कामयाब नुक्से फिर शुरू होने वाले हैं, ताकि सीधे जनता से रू-ब-रू होकर अपना खोया जनाधार पाया जा सके. यह ज़रूरी भी है, क्योंकि उधार के नेताओं और दल-बदलुओं के बल पर प्रधानमंत्री बनने चलीं मायावती की लखनऊ की कुर्सी ही डगमगाने लगी है. आने वाले दिनों में इसे बचाए रखना, उनके लिए बड़ी चुनौती होगी.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

छत्तीसगढ़ के राजगढ़ में मौत बहुत सस्ती है

सबूत छिपाने के लिए आनन-फानन में घटनास्थल को पानी छिड़क कर ठंडा किया गया

रमेश अग्रवाल

राजगढ़ में औद्योगिक कचरे के गैरक़ानूनी डंपिंग ने एक सात वर्ष की बच्ची ट्विंकल ठाकुर की जान ले ली. इससे भारत में तथाकथित विकास के बारे में कई सारे और मुश्किल सवाल फिर से पैदा हो गए हैं.

मेक्सिको के गुस्ताव एस्तेवा विकास की अवधारणा पर शोध करने वाले और एक्टिविस्ट हैं. उनका मानना है कि यदि आप नहीं मानते कि विकास सड़ांध पैदा करता है तब या तो आप बेहद अमीर हैं या फिर परम मूर्ख. उनके इस कथन का इस्तेमाल एक शोध-पत्र में किया गया था. यह शोध नाइजीरिया में पेट्रोकेमिकल उद्योग द्वारा की गई तबाही का पूरा ब्योरा देता है. इस तबाही की अगुआई शेल जैसी बड़ी कंपनी ने की थी. इसके साथ ही शोध में इसका भी जिक्र था कि स्थानीय संस्कृति और जीवन पर इस तबाही का क्या असर पड़ा. इस शोध को पढ़ना ख़त्म करते न करते मुझे छत्तीसगढ़ के राजगढ़ से गुस्साए और दुखी लोगों के समूह की ओर से एक चिट्ठी मिली. उस चिट्ठी में राजगढ़ में औद्योगिक दुर्घटना के बारे में जानकारी थी, जिससे बच्चों की ज़िंदगी का बेहद अहम सवाल जुड़ा था. मैंने सोचा और एक बार फिर ख़ुद को याद दिलाया, गुस्ताव केवल दूरदराज़ के मेक्सिको में ही नहीं, भारत में भी तो प्रासंगिक हैं.

विकास का मतलब कई बार शब्दकोश में दिए गए इसके अर्थ से अलग होता है, क्योंकि भारत सहित दुनिया के कई देशों में भ्रष्टाचार ही वास्तविकता है. ख़ास कर, उन देशों में जिन पर विकासशील होने का ठप्पा लगा है.

दूसरी ओर, पूरी तरह औद्योगिक और खुली अर्थव्यवस्थाओं में विकास का इस्तेमाल पूरी तरह अलग संदर्भ में किया जाता है. इन विकसित देशों में विकास के साथ होने वाले मानवीय और पर्यावरणीय नुकसान-जैसा कि राजगढ़ में हो रहा है-को अनिवार्य प्रभाव (साइड-इफेक्ट) बता कर टाल दिया जाता है.

एक बच्ची की मौत

अब फिर से उस चिट्ठी की बात, जो मुझे मिली थी. इस ख़त में महज़ उस श्रृंखला की एक और कड़ी थी, जो राजगढ़ निवासियों की त्रासदी की कहानी कहती है. राजगढ़ में जिंदल स्टील एंड पावर लिमिटेड (जेएसपीएल) के ऑपरेशन की वजह से वहां के निवासियों की ज़िंदगी में ज़हर घुल रहा है. राजगढ़ के एक ग़ैर-सरकारी संगठन ने कुछ समय पहले मानवाधिकार संगठनों और पर्यावरण समूहों को चेतावनी दी थी और एक दुखद लेकिन सच्ची घटना का बयान किया था. अप्रैल महीने के आख़िरी दिनों में जेएसपीएल के एक कर्मचारी संजय ठकुर की सात वर्ष की बिटिया ट्विंकल ठाकुर और उसका भाई अचानक ही एक आवासीय कॉलोनी इंदिरा आवास कॉलोनी के पास ही डंप किए गए सुलगते राख के ढेर में फंस गए. उसका भाई तो किसी तरह बचने में कामयाब हो गया-भले ही उसका पांव जल गया-लेकिन ट्विंकल की अगले दिन अस्पताल में मौत हो गई. इलाक़े में रहने वालों का कहना है कि यह घटना दोपहर तीन से चार बजे के आसपास की है. पुलिस को सूचना देने, रपट लिखाने और अभियुक्तों को पकड़ने में देरी की गई. वैसे यह सब तो अब जैसे इस तरह की घटनाओं के बाद आम बात हो गई है. ट्विंकल की दूसरे दिन सुबह 11 बजे मौत हो गई. इसके बाद पुलिस ने जेएसपीएल के अज्ञात ठेकेदार के ख़िलाफ़ आईपीसी की धारा 304-ए के तहत मुकदमा दर्ज़ किया. यह धारा असावधानीवश हुई मौत से संबंधित है. हालांकि, यह भी बिना मौका-ए-वारदात पर गए ही किया गया. न ही इस बात की पुष्टि की गई कि क्या जेएसपीएल का ठेकेदार ही रिहायशी इलाक़े में गर्म राख को डंप करने का ज़िम्मेदार था. दरअसल, राख के ये ढेर प्लांट के आसपास कहीं भी देखे जा सकते हैं. इनकी सुरक्षा के लिहाज़ से कोई घेराबंदी या अन्य कोई भी प्रयास नहीं किए गए हैं.

यादों को धुंधला करने की साज़िश

इस दुर्घटना के तुरंत बाद ही जेएसपीएल ने गर्म राख को टैंकरों से पानी का छिड़काव कर उसे ठंडा कर दिया. जेएसपीएल की तरह के प्रतिख़नों के पास अपनी ख़ुद की फायर ब्रिगेड होती है. जनचेतना संगठन के अग्रवाल कहते हैं कि दुर्घटना के तुरंत बाद ही वहां से राख को हटा दिया गया. भारी वाहनों के टायरों के निशान कई दिनों बाद तक दिखते रहे. वह दलील देते हैं कि कंपनी का यह काम (प्रत्यक्ष या परोक्ष तौर पर) दुर्घटनास्थल पर जांच पूरी होने के पहले सबूतों के साथ छेड़छाड़ के बराबर ही माना जा सकता है. यह वास्तविक अपराधी का निर्णय करने और सही न्याय देने के रास्ते में आएगा.

अप्रैल के आख़िरी सप्ताह में छत्तीसगढ़ के एक अख़बार ने इस ख़बर को पूरे विस्तार से छापा. इसमें जेएसपीएल के जनसंपर्क विभाग के अधिकारियों का बयान भी छपा है, जिसमें सारे आरोपों को ग़लत बताया गया है. बयान के मुताबिक जेएसपीएल ने राख और कचरों को निपटाने के लिए अलग कंपनियों को ठेका दिया हुआ है. हालांकि, कई गांव (जिसमें किरोड़ीमल नगर भी शामिल है,जहां हादसा हुआ) के लोग जेएसपीएल के प्लांट से ज़मीन भरने और बराबर करने के उद्देश्य से वहां की राख (फ्लाईएश) लाते थे. यह बयान परोक्ष तौर पर यह भी बताने की कोशिश करता है कि ट्विंकल ठाकुर की जान गांव वालों द्वारा राख दूसरी जगह ले जाने के क्रम में ही गई है, न कि घटनास्थल पर जहां कंपनी अपना कचरा फेंकती है.

इलाक़े से आई रिपोर्ट बताती है कि ट्विंकल का घर बंद पड़ा है और उसके अभिभावक अपने गृह राज्य बिहार गए हुए हैं. स्थानीय समूहों को अस्पताल प्रशासन से भी बहुत कुछ नहीं जानने को मिला, जो घटना और उसके बाद की बातों के बारे में ख़ामोश ही रह रहे हैं. कुछ गांववालों ने जिलाधीश मनीष त्यागी से शिकायत भी की, लेकिन अपनी शिकायत के बदले उनको तुरंत और आवश्यक जांच के बदले उनको गवाही के लिए आने का कानूनी नोटिस मिला. इसके साथ ही, इतने दिन बीत जाने के बावजूद भी जिला प्रशासन से कोई बड़ा पदाधिकारी घटनास्थल पर नहीं पहुंचा है. न ही राज्य प्रदूषण नियंत्रण केंद्र (राजगढ़ में छत्तीसगढ़ का राज्य पर्यावरण संरक्षण बोर्ड का क्षेत्रीय कार्यालय है) ने गर्म राख की चिमनियों से सीधे रिहायशी इलाक़ों में बिना सुरक्षा के ही गैरक़ानूनी डंपिंग के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई की है.

दरअसल, हमें यह समझने की ज़रूरत है कि यह घटना-दुर्घटना और उसके बाद की लापरवाही- कोई अकेली घटना नहीं है. न तो राजगढ़ में, न ही भारत में और न ही पूरी विकासशील दुनिया में. कुछ अग़र बदलता है, तो खलनायकों, शिकारों और दर्शकों के चेहरे. न्याय चाहने वालों और उसकी गुहार लगाने वालों ने अलग स्तरों तक न्याय पाया है. हालांकि, बारहां ऐसे प्रोजेक्ट्स के पीछे का औद्योगिक चेहरा पूरे घटनाक्रम पर परदा डाल देने में कामयाब रहता है. मीडिया में छिटपुट घटनाओं के - ख़ासकर, ट्विंकल जैसी बच्ची के मरने पर-आने के अलावा बिज़नेस वैसा ही चलता रहता है. इस पर सवाल उठाने वालों के लिए यह अंतहीन कुंठा का समय होता है, तो जिनकी ज़िंदगी बिखर गई, उनके लिए दु:स्वप्न का होता है. हां, जो इसके साथ नहीं जुड़ते उनके लिए यह एक भुला दिया गया समय और घटना होती है. विकास को अक्सर ही बेहतर संभावनाओं और क्षमताओं या बेहतर और प्रभावी हालात बनाने के तौर पर परिभाषित किया जाता है. जब भी कोई आदमी इस बात पर रुक कर सोचता है कि इस प्रगतिशील या प्रभावी हालात में आने की प्रक्रिया ने ग़रीबों और वंचितों पर कितने सितम ढाए हैं, तो उसे गुस्ताव एस्तेवा की आलोचना ज़रूर याद आएगी. वह सत्य का एक सहज बयान है. हम जब विकास के बारे में बहस कर रहे हैं, नए शब्द गढ़ रहे हैं और पुनर्जीवित कर रहे हैं, तो दुनिया की हक़ीक़तें हमारा ही मुंह चिढ़ाएंगी, जब तक हम उनको मात देने का कोई तरीक़ा न ढूंढ लें.

इस तरह की घटनाएं और उसके बाद किसी कार्रवाई का न होना राजगढ़ जिले में आम बात है. औद्योगिक विकास का सबसे डरावना चेहरा यहां नज़र आता है. क़ानून का खुलेआम उल्लंघन, ज़िंदगी की कोई क़ीमत न होना और भ्रष्टाचार मिलकर पूरी तरह अपना नंगा नाच कर रहे हैं. यह देखने के लिए कि जेएसपीएल तो एक बड़ी श्रृंखला की कड़ी मात्र है, बहुत कुछ करने की ज़रूरत नहीं है. आप बस रेलवे स्टेशन पर उतरिए, सांस भरिए और सबूत मौजूद हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मेक्सिको के गुस्ताव एस्तेवा विकास की अवधारणा पर शोध करने वाले और एक्टिविस्ट हैं. उनका मानना है कि यदि आप नहीं मानते कि विकास सड़ांध पैदा करता है तब या तो आप बेहद अमीर हैं या फिर परम मूर्ख. उनके इस कथन का इस्तेमाल एक शोध-पत्र में किया गया था.

दुनिया

अयोध्या के एक महंत का कारनामा

सुरसरि स्टेट की संपत्ति हड़पने की साज़िश

अयोध्या का सुरसरि मंदिर

अयोध्या में धर्म के नाम पर मंदिरों में विराजमान करोड़पति महंतों की लाइन में अपने आप को स्थापित करने का खेल आज भी जारी है. ऐसा ही एक मामला सुरसरि मंदिर का है, जिसके सर्वरहकार का पद पाने के लिए एक व्यक्ति ने कोर्ट के आदेशों तक की अनदेखी कर रखी है. आरोप है कि कई तरह के उलटे-सीधे कामों के ज़रिए वह इस मंदिर में 1977 से अवैध तरीक़े से महंत बने हुए हैं. ग़लत तरीक़े से इस मंदिर में सर्वरहकार पद क़ब्ज़ा करने का आरोप लगा है डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही पर. आरोप है कि उन्होंने ट्रस्ट द्वारा नियुक्त और दिवंगत हो गए सर्वरहकार राघवेंद्र त्रिपाठी की आंखों में धूल झोंक कर मकान नं. 459 की नीलामी भी करा दी. इसके लिए अधिकारियों की मिलीभगत से साढ़े पांच बीघा ज़मीन को नया नंबर भी दिला दिया- 19/3/115. इस पूरे घपले की जानकारी राघवेंद्र त्रिपाठी को कभी नहीं होने दी. जैसे ही राघवेंद्र शरीर से जर्जर हुए उनके शिष्य के रूप में ठाकुर की सेवा करने वाले डा.निर्मल कुमार पाणिग्रही सर्वरहकार बन बैठे. इसके बाद प्रशासनिक अधिकारियों से आंख मिचौली करते हुए पूरी संपत्ति को सुरसरि स्टेट के नाम पर अच्छे दाम लेकर पट्टा करने का काम शुरू कर दिया. ग़ौरतलब है कि इस ठाकुर राम जानकी मंदिर का निर्माण अखिल भारतीय जय गुरू संप्रदाय के तहत आने वाले सुरसरि राजघराने ने कराया था.

बहरहाल, वर्ष 2001 में जब राज्यपाल विष्णुकांत शास्त्री अयोध्या आए, तो पाणिग्रही ने उनका जमकर स्वागत किया और अपने आपको उनका क़रीबी बता कर प्रशासन में अपनी पहचान बनाने का काम शुरू कर दिया. आरोप है कि इन्हें और ताक़तवर बनाने में आयुर्वेदिक चिकित्साधिकारी डॉ. महेंद्र त्रिपाठी ने भी योगदान दिया. उन्होंने अपने आपको राज्यपाल के प्रतिनिधि के तौर पर फ़र्ज़ी तरीक़े से प्रस्तुत कर डॉ. निर्मल कुमार को ताक़तवर बनाने में अहम रोल अदा किया. इसके बदले में आयुर्वेदिक चिकित्सालय के लिए डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही ने ज़मीन दान कर दी. उस मामले में जब दिसंबर 2008 में पूर्व सर्वरहकार की पत्नी सावित्री देवी ने संपत्ति बचाने के लिए प्रशासन के सामने आत्मदाह कर लिया, तब जाकर डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही की असलियत जनता के सामने आई.

दरअसल वर्ष 1857 में सुरसरि स्टेट के राजा विष्णुप्रताप नारायण सिंह ने धार्मिक भावनाओं से अभिभूत होकर अयोध्या के नयाघाट मोहल्ले में राम जानकी हनुमान जी का विग्रह स्थापित कर उन्हें सुरसरि मंदिर के नाम से स्थापित किया. फिर संपूर्ण जायदाद ठाकुर जी के नाम पर समर्पित कर दिया, जो ठाकुर जी की देवतर संपत्ति है. इसके बाद प्राइवेट ट्रस्ट का निर्माण करके यह व्यवस्था दी कि ठाकुर राम जानकी जी संपूर्ण जायदाद के मालिक हैं. चूंकि वह नाबालिग हैं, इसलिए उनकी सुरक्षा तथा सुरसरि मंदिर की देखरेख करने वाले सर्वरहकार/व्यवस्थापक/प्रबंधक और नौकरों की नियुक्ति सुरसरि स्टेट के राजघराने द्वारा ही होगी. यदि किसी दूसरी संस्था या व्यक्ति द्वारा सर्वरहकार/सेवईत नियुक्त किया जाता है तो वह निरस्त माना जाएगा.

मंदिर की संपत्ति के मामले में कोर्ट का आदेश : चिरकाल से राजस्व अभिलेखों में तथा नगर पालिका परिषद के कार्यालय में देवतर संपत्ति ठाकुर रामजानकी जी के नाम दर्ज़ चला आ रहा है, जो आज भी यथावत है. वर्ष 1976 में ठाकुर जी के सर्वरहकार के निजी मनीसूट की बकाया धनराशि के चलते भवन संख्या 459-नया नंबर 19/3/115- वीरेंद्र सुरेंद्र शाही नीलाम कर दिया गया. चूंकि संपूर्ण जायदाद ठाकुर राम जानकी जी की थी और उनकी हैसियत नाबालिग की घोषित थी, इसलिए नाबालिग की वह संपत्ति नीलाम नहीं हो सकती थी, जिस पर निर्मल कुमार पाणिग्रही अवैध रूप से स्थापित हैं. इसी परिप्रेक्ष्य में न्यायालय सिविल जज सीडी फैजाबाद में मूलवाद संख्या 98/05 विचाराधीन है तथा उप जिला मजिस्ट्रेट एवं नायब तहसीलदार अयोध्या/फैजाबाद तथा अपर तहसीलदार फैजाबाद एवं हाई कोर्ट लखनऊ और व्यवहार न्यायालय फैजाबाद आदि में कई मामले लंबित हैं. फ़र्ज़ी सर्वरहकार डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही ठाकुर राम जानकी जी की जायदाद के लिए दान करने का अधिकार नहीं रखते हैं, क्योंकि उक्त संपत्ति ठाकुर जी को समर्पित है, जिनका राजस्व अभिलेखों में व परिषदीय अभिलेखों में आलामालिक दर्ज़ है.

यह है 459 नं. का नीलाम हुआ मकान.

जिलाधिकारी फैजाबाद ने सुरसरि मंदिर के समान दायर एक मामले में 16/9/2002 को आदेश पारित किया कि ज. ब. अधिनियम के तहत भूमि धरी पर पट्टे का कोई प्रावधान नहीं है, दूसरे दाख़िल ख़ारिज़ के 13 वर्ष बाद पट्टा कराया गया, जो पहली नज़र में ग़लत है और यह भी कहा गया कि सर्वरहकार को मंदिर की संपत्ति बेचने का कोई अधिकार नहीं होता.

अत: इस आधार पर अवर न्यायालय ने निर्णय निरस्त करते हुए पत्रावली निर्देश के साथ प्रत्यावर्तित कर दी गई कि उभय पक्षों को सुनवाई व साक्ष्य का मौका देकर गुण-दोष के आधार पर निर्णय किया जाए. विद्वान अधिवक्ताओं के तर्कों को सुना तथा पत्रावली का सम्यक अवलोकन कर इस प्रकरण में दो बिंदु उठाए गए. एक तो जमींदारी के संक्रमणीय भूमिधरी की ज़मीन किसी को पट्टे पर नहीं दी जा सकती है, यह बात सही है. फिर सर्वरहकार को ज़मीन बेचने का काई अधिकार नहीं होता है.

जहां तक ज़मीन नीलामी के मामले की बात है, तो वर्ष 1976 में ठाकुर राम जानकी जी के सर्वरहकार के निजी मनीसूट की बकाया धनराशि के चलते भवन संख्या 459 को सिविल कोर्ट ने नीलाम कर दिया. नीलामी वर्ष 1977 में हुई. नीलामी में उक्त भवन को कोलकाता के अखिल भारतीय जय गुरू संप्रदाय महामठ ट्रस्ट ने ले लिया और बकाया धनराशि को चुकता कर दिया गया.

इसके बाद इसी ट्रस्ट द्वारा भवन की देखरेख के लिए डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही को सर्वरहकार / सेवईत नियुक्त करके फैजाबाद भेजा गया. वह दस सालों तक राजघराने द्वारा नियुक्त सर्वरहकार राघवेंद्र त्रिपाठी के सानिध्य में रहे और इस दौरान सभी शिष्यों के बीच अपनी स्वीकार्यता बढ़ा ली और जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पहुंच चुके सर्वरहकार को मनाते हुए 1987 में आश्रम की देखरेख करने के लिए आयुर्वेदिक चिकित्साधिकारी डॉ. एम. तिवारी को ज़मीन दान देने की व्यवस्था बनाई. 1992 आते-आते राघवेंद्र त्रिपाठी पूरी तरह से जीर्ण हो चुके थे. ऐसी अवस्था में ठाकुर राम जानकी की सेवा करने की सार्मथ्य उनमें नहीं रही और यहीं से डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही फ़र्ज़ी नियुक्ति के आधार पर सेवईत बन बैठे. इसके बाद शुरू हुआ ज़मीन के सौदागरों तथा प्रशासनिक अधिकारियों के बीच काग़ज़ों पर आंख मिचौली का खेल.

सर्वरहकार के रूप में कार्य कर रहे डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही

इसमें 1995 बाद मीरापुर डेरा डीवी हलके के लेखपाल तथा वर्तमान समय के तहसीलदार, जिलाधिकारी जैसे अधिकारियों के माध्यम से डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही ने निरंकुश भाव से संपत्ति के अधिकारी के तौर पर अच्छी क़ीमत लेकर साढ़े पांच बीघे ख़ाली पड़ी ज़मीन पर पट्टा देते हुए सिविल कोर्ट 1976 के आदेश को ध्वस्त कर दिया. इसमें सितंबर 2008 तक गुप-चुप तरीक़े से लगभग 16 लोगों को पट्टा दिया गया. इनमें प्रमुख रूप से मधु अवस्थी पत्नी भवानी प्रसाद अवस्थी, पूजा शुक्ला पत्नी राघवदास, जयनारायण तिवारी, कामिनी मिश्रा, शांति देवी, सुरेश प्रसाद, साहब जादी, बसंत पांडेय, सरोज लता, बद्री प्रसाद पांडेय एडवोकेट, महेंद्र त्रिपाठी- आयुर्वेदिक चिकित्साधिकारी नयाघाट, राजरानी पत्नी राम सिंह चौहान, राज किशोर गुप्ता पुत्र भोला गुप्ता, कृष्णावती, प्रभावती व एकता त्रिपाठी हैं.

ठाकुर राम जानकी की संपत्ति को पट्टे पर लेने वालों में से अधिकतर को अब तक सुरसरि स्टेट की क़ानूनी बंदिशों की जानकारी नहीं है. इसके कारण ऊंचे दामों पर ज़मीन की क़ीमत अदा करके पट्टा लेकर अपना मकान बनवाने की व्यवस्था में लग गए, लेकिन एकता त्रिपाठी को पट्टा लेने के बाद जब यह अहसास हुआ कि जो ढाई विस्सा उन्होंने डॉ. निर्मल पाणिग्रही से लिया है, वह फ़र्ज़ी है और ठाकुर राम जानकी को दान में दी हुई संपत्ति का पट्टा करने का अधिकार सर्वरहकार को नहीं है, तब उन्होंने पाणिग्रही से उक्त धन वसूलने के लिए दबाव बनाया.

बताते चलें कि इस मंदिर की ज़मीन के पट्टे की दलाली मुख्य भूमिका लेखपाल, तहसीलदार की रही है. उन्हीं लोगों ने अधिकारियों की आंखों में धूल झोंकते हुए पट्टा दिलाने में अहम भूमिका निभाई.

यह मामला शायद जनता के समाने न आया होता, लेकिन जब मंदिर के पूर्व सर्वरहकार राघवेंद्र त्रिपाठी की वृद्धा पत्नी ने अपने आवासीय भूखंड के सामने ठाकुर राम जानकी मंदिर के पट्टेदारों द्वारा अवैध निर्माण कराए जाने की सूचना जिला प्रशासन को देते हुए आत्मदाह की तिथि निर्धारित कर दी और निर्माण कार्य को रोकने के लिए प्रशासन की तरफ़ से कोई कार्यवाही सिर्फ़ इसलिए नहीं की गई क्योंकि प्रशासन में बैठे लोग यही समझ रहे थे कि पाणिग्रही ही मंदिर के सर्वरहकार हैं और उनकी पहुंच राज्यपाल तक है. इसी कारण प्रशासनिक अमला 28 दिसंबर 2008 को राघवेंद्र त्रिपाठी की पत्नी सावित्री देवी की चौकसी में लगा रहा और सामने पट्टेदारों की ओर से निर्माण कार्य जारी रहा. आख़िर में तंग आकर सावित्री देवी ने अधिकारियों के सामने आत्मदाह कर लिया. इस घटना से प्रशासनिक क्षेत्र में हड़कंप मच गया. पाणिग्रही ने तुरंत सतर्क होते हुए मामले को मीडिया में तूल नहीं पकड़ने दिया.

उधर, प्रशासन ने आत्मदाह करने वाली सावित्री देवी के पौत्र को ही जला कर मार डालने के अपराध में प्रताड़ित करके कारागार में डाल दिया. इस बीच, 80 प्रतिशत तक जल चुकी सावित्री ने एक सप्ताह के अंदर लखनऊ में इलाज के दौरान दम तोड़ दिया. उसने ठाकुर राम जानकी की संपत्ति की सुरक्षा के लिए सुरसरि स्टेट के राजघरानों को दिए गए वचनों को निभाते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी. उसके बाद उक्त घटना के संबंध में प्रशासनिक अमले ने दिखावटी रूप में कार्य करना शुरू किया, पर संपत्ति की वास्तविक जांच से प्रशासन ने पल्ला सिर्फ़ इसलिए झाड़ लिया, क्योंकि पट्टा देने वाले संबंधित अधिकारियों की गर्दन फंसती नज़र आ रही थी. इसी का फ़ायदा उठाते हुए डॉ. निर्मल कुमार पाणिग्रही ने पट्टा देने का काम अनवरत जारी तो नहीं रखा, पर मीडिया के सामने असलियत को छिपाने का काम अवश्य किया.

आर. के. यादव / बी. डी. शर्मा

feedback.chauthiduniya@gmail.com

वर्ष 1857 में सुरसरि स्टेट के राजा विष्णुप्रताप नारायण सिंह ने धार्मिक भावनाओं से अभिभूत होकर अयोध्या के नयाघाट मोहल्ले में राम जानकी हनुमान जी का विग्रह स्थापित कर उन्हें सुरसरि मंदिर के नाम से स्थापित किया. फिर संपूर्ण जायदाद ठाकुर जी के नाम पर समर्पित कर दिया, जो ठाकुर जी की देवतर संपत्ति है. इसके बाद प्राइवेट ट्रस्ट का निर्माण करके यह व्यवस्था दी कि ठाकुर राम जानकी जी संपूर्ण जायदाद के मालिक हैं.

ख़ौफ़ की चादर में लिपटी ख़बरों की दुनिया

भारतीय, ख़ासकर हिंदी भाषी समाज में इतनी धुंधली, ख़याली पुलावों से इस हद तक घिरी शायद ही कोई चीज़ हो जितनी कि ख़बरिया चैनलों के समाचारों की रचना प्रक्रिया होती है. स्क्रीन पर अत्यंत रहस्यमयी आवाज़ में डराया जाता है–वार्न से सावधान. वह क्रिकेट के मैदान में भी बियर गटकते हैं. लेकिन सावधान होने की ज़रूरत इसके बाद पड़ती है. इसलिए कि बियर के बाद का फुटेज शेन वार्न के वर्षों पुराने उस शर्मनाक कृत्य को दिखाते हैं, जो लंदन में दो लड़कियों के साथ नग्न होकर उसने किए थे.

गंगेश मिश्र

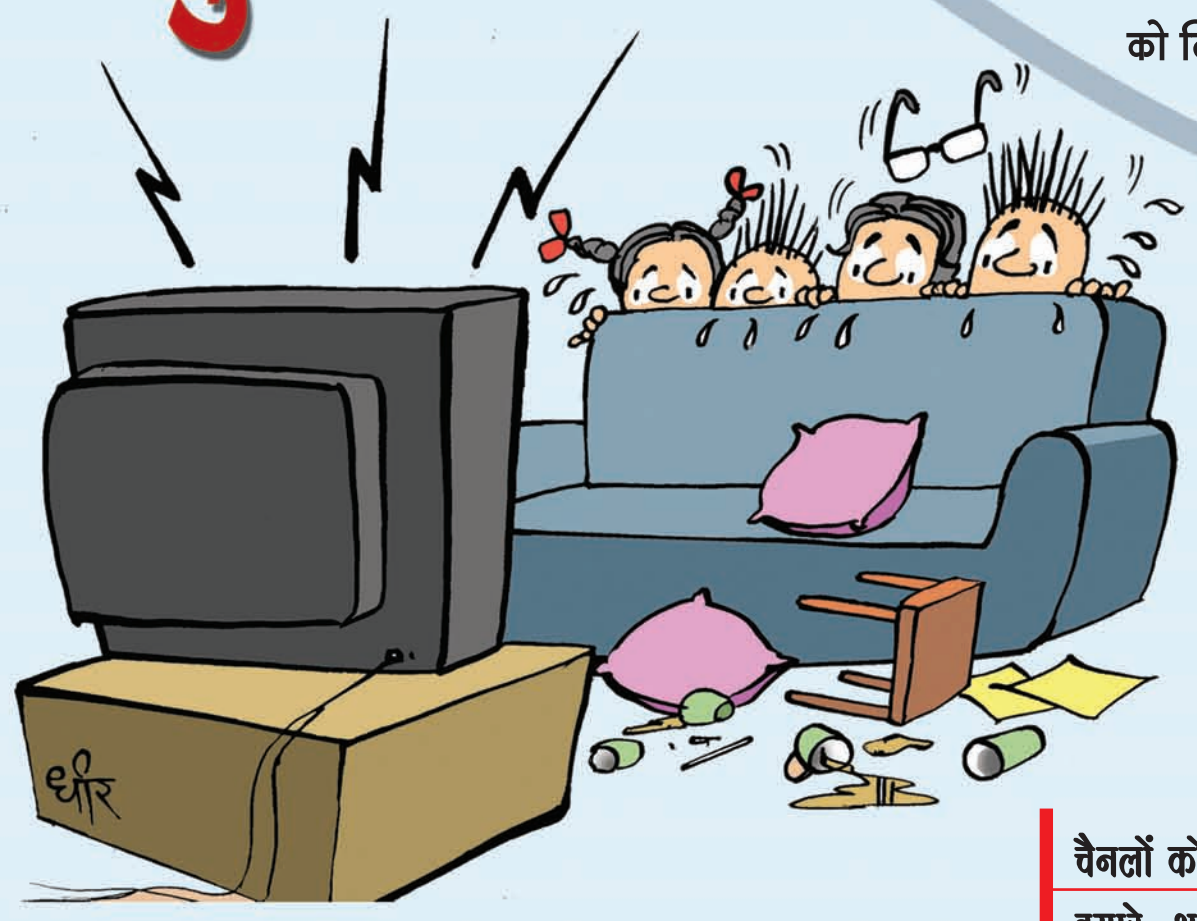

प्रसिद्ध चरित्र अभिनेत्री किरण खेर ने एक ख़बरिया चैनल से बातचीत में कहा था कि आज हमारे देश में सबसे अधिक मनोरंजन हिंदी के न्यूज़ चैनल कर रहे हैं. पहली नज़र में न्यूज़ और मनोरंजन का यह घालमेल कुछ अजीब–सा लग सकता है, लेकिन ध्यान से देखें तो इस बयान का मतलब एकदम साफ दिखेगा. यानी हमारे ख़बरिया चैनलों ने समाचार के मायने बदल दिए हैं. इतने कि कई बार चैनल वाले ख़ुद भूल जाते हैं कि उनका काम ख़बर दिखाना था. ख़बरों के नाम पर नमूदार होता है– कनॉट प्लेस से महज़ तीस किलोमीटर दूर जितनी दूरी से हमारी सीमा पर मंडरा रहा है ख़तरा. किसका? कोई छोटा–सा नहीं, तालिबान का! अलक़ायदा का! उस तालिबान और अलक़ायदा का, जिसका वजूद पाकिस्तान में भी एक छोटे–से इलाक़े में ही है. लेकिन हमारे टीवी चैनलों पर प्रकट होता है. डराने–धमकाने के लिए. पिछले कुछ समय से उसने इतना डराया है कि अब भय का भाव हास्य में तब्दील हो गया है. यही कारण है कि मनोरंजन में बदल गए इस ख़ौफ़ ने अब प्राइम टाइम में जगह हथिया ली है. लेकिन इस ख़ौफ़ का ख़ौफ़ सुदूर किसी गांव में बैठे किसी परिवार के लिए ख़ौफ़नाक अवश्य होता होगा. वह परिवार होता होगा सीमा पर हर वक़्त मुस्तैद रहने वाले उन सैनिकों का, जो उन शहरों से नहीं होते जहां से ख़बरिया चैनलों का काम चलता है. बड़े शहरों और आलीशान भवनों में बैठकर ख़बर चलाने वालों का भय भी भी बड़ा होता है. सास–बहू वाले सीरियल देख–देख कर बड़े हुए ख़बरचियों के लिए किसी दंपति का झगड़ा भी दो देशों के युद्ध जैसा ही भयानक लगता है. हर तरह के ख़ौफ़ की रिपोर्टिंग का तरीक़ा एक, भाषा एक. वैसे इस ख़ौफ़ का खेल भी कम ख़ौफ़नाक नहीं है. चैनलों को डर होता है टीआरपी से. हमारे–आपके बच्चों के भविष्य बिगड़ने का डर उन्हें नहीं होता, उन्हें डर होता है दर्शकों के समझदार बन जाने से. समझदारी यानी टीआरपी का गिरना, यानी विज्ञापन से आय पर असर. दर्शकों को भयभीत कर एक चैनल ने टीआरपी अधिक क्या बटोर ली, कि उससे ख़ौफ़ खाकर गंभीर किस्म के दूसरे चैनल भी यू–ट्यूब से डाउनलोड कर तालिबान और अलक़ायदा का ख़ौफ़ दिखाने लगे. इस बीच, किसी ग़रीब का बच्चा आईआईटी, मेडिकल या किसी अन्य बड़ी परीक्षाओं में सफलता पा ली, तो उसे अख़बारों के लिए छोड़ दिया गया. किसी की सफलता से डर पैदा नहीं होता, इसलिए वह चैनलों के लिए ख़बर नहीं होती. वहां तो लंबी ख़बर बनती और बनाई जाती है उस बच्चे की, जो एक ख़ास तरह की मानसिक बीमारी से ग्रस्त होकर अंग्रेजी का विद्वान होने का दावा करता है. या उस बड़बोले किशोर की, जिसने अपने आप को नासा के लिए चयनित बता रहा था. इस तरह ख़बरिया चैनल ख़ौफ़ खाते हैं–सच्चाई से. यथार्थ से. क्योंकि ख़बरिया चैनलों की ख़याली दुनिया में यथार्थ के लिए कोई जगह नहीं होती है. इसलिए कि यथार्थ व्याकुलता पैदा करता है, शक्तियों की सच्ची प्रकृति की पड़ताल में जाने को बाध्य करता है और साथ ही ऐसे क्षोभ को उत्पन्न करता है जो कभी भी लपटों में बदल सकता है, इसलिए उसे छूने से वे डरते हैं. इसलिए ख़ौफ़ का खेल खेलने वाले ख़बरिया चैनल चीज़ों की वास्तविक प्रकृति से कट कर ऐसी अंधी गली में पहुंच जाते हैं, जो कहीं नहीं पहुंचती. वहां अंत में डर घिस कर हास्य में तब्दील हो जाता है. और, हास्य से बड़ा मनोरंजन कुछ नहीं होता. यानी ख़बरिया चैनल आज सचमुच मनोरंजन का सबसे बड़ा स्रोत हैं.

चैनलों को डर होता है टीआरपी से. हमारे–आपके बच्चों के भविष्य बिगड़ने का डर उन्हें नहीं होता, उन्हें डर होता है दर्शकों के समझदार बन जाने से. समझदारी यानी टीआरपी का गिरना, यानी विज्ञापन से आय पर असर.

भारतीय, ख़ासकर हिंदी भाषी समाज में इतनी धुंधली, ख़याली पुलावों से इस हद तक घिरी शायद ही कोई चीज़ हो जितनी कि ख़बरिया चैनलों के समाचारों की रचना प्रक्रिया होती है. स्क्रीन पर अत्यंत रहस्यमयी आवाज़ में डराया जाता है–वार्न से सावधान. वह क्रिकेट के मैदान में भी बियर गटकते हैं. लेकिन सावधान होने की ज़रूरत इसके बाद पड़ती है. इसलिए कि बियर के बाद का फुटेज शेन वार्न के वर्षों पुराने उस शर्मनाक कृत्य को दिखाते हैं, जो लंदन में दो लड़कियों के साथ नग्न होकर उसने किए थे. बियर गटकने का दृश्य छोटा होता है, पर बाद वाले अश्लील दृश्य को लंबा खींचा जाता है. इसी तरह पिछले दिनों जब दिल्ली में मनमोहन सिंह की नई सरकार बन रही थी, तभी एक और *सरकार की दुनिया* के बारे में बताया जा रहा था. दूसरी वाली सरकार का मतलब उस रिएलिटी शो से था, जिसे बहुत कम लोग देखते हैं. इसे प्रसारित करने वाला चैनल शून्य टीआरपी को देखकर जब डर गया,तो उसने ख़बरिया चैनलों की मदद ली. ख़बरचियों ने अचानक भारी आवाज़ में डराना शुरू कर दिया–शो के नाम पर अश्लीलता का नंगा नाच. रिएलिटी शो वाले यह भी भूल गए कि टीवी बच्चे भी देखते हैं. यानी बच्चों को बचाइए. ख़ौफ़ – ख़ौफ–फिर वही ख़ौफ़ . इसके बाद दो प्रतियोगियों के बीच नज़दीकियों के दो–शॉट्स दिखाए. सच तो यह है कि वे शॉट्स उतने अश्लील नहीं थे, जितना कि ख़ौफ़ की चादर में लपेट कर परोसने का तरीक़ा. जिसकी आड़ में किया गया एक दूसरे चैनल के रिएलिटी शो का प्रचार. साथ में यह भी बताया गया इन दृश्यों का प्रसारण किस तारीख़ को और किस समय किया जाएगा. ताकि उन दृश्यों को देखने के लिए अगर कुंठित मन बेचैन हो, तो उसे खुराक पिलाई जा सके. यक़ीनन ऐसी रीढ़हीन पीढ़ी इतिहास में पहले कभी पैदा नहीं हुई होगी, जिसके लोग औंधे मुंह लेट कर अपने लिए बिल खोदने में लगे रहते हैं. सचमुच सावधान हो जाना चाहिए. किससे, क्या यह अब भी बताने का ज़रूरत रह गई है?

feedback.chauthiduniya@gmail.com

कमला सुरैया की कुछ यादें, कुछ बातें

मशहूर फ्रेंच लेखिका सीमोन द बोउवार का कहना था कि नारी एक सफल निर्णायक होती है. सचमुच. जिस समय देश में अंग्रेजों के ख़िलाफ़ भारत छोड़ो आंदोलन का बिगुल बज रहा था, उस समय आठ साल की एक बच्ची भी स्त्री-पुरुष में फ़र्क़ को पकड़ कर एक अलग तरह की निर्णायक की भूमिका स्वीकार कर रही थी.वह मात्र आठ वर्ष की उम्र में विक्टर ह्यूगो की रचना का मलयाली में अनुवाद कर रही थी. वह माधवी कुट्टी थी, जो पहले अंग्रेजी साहित्य में कमला दास और बाद में कमला सुरैया के नाम से मशहूर हुई थी. कमला दास हमारे बीच नहीं रहीं. 31 मई को उनका निधन हो गया. संयोग देखिए कि उनका जन्म भी 31 तारीख़ को ही हुआ था. हां,दोनों तारीख़ों के बीच 75 साल का अंतर ज़रूर था. उनका जन्म केरल के पुनयूरकुलम में 31 मार्च 1934 को हुआ था, तो निधन 31 मई 2009 को हुआ. मीरा की तरह पीड़ा में प्रेम पाने के लिए तड़पती कमला दास हमेशा कृष्ण भक्ति में मरहम-सा जादू महसूस करती थीं. तभी तो जब 65 साल की उम्र में उन्होंने इस्लाम क़बूला तो कहा, मैंने कृष्ण को अल्लाह में बदल लिया है. अपरंपरागत ख़यालों की इस मल्लिका को समाज ने कभी ठीक से जीने न दिया. सेक्स, प्यार और स्त्री-पुरुष संबंधों में खुलेपन की मांग के कारण वह हमेशा विवादों में रहीं. इसलिए उन्हें जब भी मौका मिला, अपनी रचनाओं में सदियों से गढ़ी गईं नक़ली दीवारों को लांघने की जमकर वकालत की. वह जीवन भर लैंगिक न्याय और सार्वभौमिक प्रेम का संदेशवाहक बनी रहीं. प्रेम की अभिलाषा का यह चरम रूप ही था कि वह अपने को हमेशा राधा बताती रहीं. एक बार जीने के लिए मिला जीवन उनके लिए सबसे बहुमूल्य था और यही वह सबको समझाना चाहती थीं. वह इतनी बेधड़क होकर लिखती थीं कि हर रचना उनसे जुड़कर ही संपूर्ण होती थी. उनकी सबसे चर्चित रचना रही-माई लाइफ (मेरा जीवन). 1976 में आई उनकी यह आत्मकथा काफी विवादास्पद हो गई थी. चर्चा का अनुमान सिर्फ़ इस एक तथ्य से लगाया जा सकता है कि इस आत्मकथा का दुनिया भर की लगभग डेढ़ दर्जन भाषाओं में अनुवाद किया गया. इसमें उनका भोगा हुआ यथार्थ था. उन्होंने इसमें समाज और व्यक्ति की मानसिकताओं की पड़ताल करते हुए स्त्री-पुरुष संबंधों, विवाह नामक संस्था और इसके दायरे से बाहर के रिश्तों की वस्तुपरकता की ऐसी मानवीय छानबीन की थी लोग उन्हें भारत की सिमोन द बोउवर (*द सेकंड सेक्स* की फ्रेंच लेखिका) कहने लगे. उनकी किताबों के शीर्षक भी काफी रोचक होते थे. जैसे, उनकी कविताओं की एक किताब का नाम है- ओनली सोल नोज़ हाउ टू सिंग (सिर्फ़ आत्मा ही जानती है संगीत). इसी तरह उनके एक उपन्यास का नाम है-अल्फाबेट ऑफ लस्ट (वासना की वर्णमाला). वह अपने पहले ही कविता संग्रह-समर इन कलकत्ता-से न केवल चर्चित हो गई थीं, बल्कि उनकी छवि क्रांतिकारी कवयित्री के रुप में भी स्थापित हो गई. उन्हें कई प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान भी मिले थे. वह 1984 में साहित्य के नोबल पुरस्कार के दावेदारों की सूची में भी थीं.इतना ही नहीं, उन्होंने राजनीति में भी हाथ आजमाया था और *लोकसेवा पार्टी* बना कर 1984 में लोकसभा चुनाव भी लड़ा था, जिसमें उन्हें सफलता नहीं मिली थी.

स्मृति शेष

जन्म : 31-03- 1934
निधन : 31-05-2009

वह बाग़ी थीं. उनकी बग़ावत ईश्वर, धर्म, राष्ट्र,समाज एवं प्रकृति से नहीं बल्कि कुछ लोगों के संकीर्ण विचारों, रीति–रिवाजों और व्यवहारों से थी. इस बग़ावत ने उन्हें ईश्वर के बेहद निकट कर दिया था. शायद यही कारण रहा कि लगभग दस वर्ष पूर्व 16 दिसंबर 1999 को 65 वर्ष की आयु में उन्होंने अपना धर्म परिवर्तन करके इस्लाम स्वीकार कर लिया. उनका यह धर्म परिवर्तन भी संकीर्ण विचारों, रीति–रिवाजों और व्यवहारों से मुक्ति के लिए था. इस्लाम में ईश्वर के बारे में व्यापक नज़रिए व उसकी संपूर्ण जीवन व्यवस्था के विचार से वह अपने जीवन के आख़िरी लम्हों तक प्रभावित रहीं, परंतु मुस्लिम समाज के कुछ लोगों व संगठनों से भी उन्हें वही गिला–शिकवा रहा जो उन्हें पहले के धर्म के लोगों व संगठनों से था.

दस वर्ष पूर्व तक वह मलयालम भाषा के पाठकों के समक्ष माधवी कुट्टी और अंग्रेजी पाठकों के बीच कमला दास के नाम से जानी जाती थीं, लेकिन इसके बाद वह कमला सुरैया ही कहलाना पसंद करती थीं. सवा तीन वर्ष पूर्व जब कालीकट विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट की उपाधि से सुशोभित किया तो उनके साथ साड़ी धारण किए हुए उनका एक पुराना फोटो था और उस पर उनका पूर्व नाम कमला दास लिखा हुआ था. उन्होंने जब इसका कारण पूछा कि आख़िर उन्हें उनके वास्तविक नाम से क्यों वंचित रखा जा रहा है, तब उन्हें जवाब मिला कि ऐसा करना वह नहीं चाहते थे. पर इसलिए किया कि यहां किसी मुस्लिम महिला को डी.लिट करने के संबंध में ज़िम्मेदारों के बीच मतभेद था. इसी मजबूरी में कमला दास नाम का उपयोग करना पड़ा.

जब इस पत्रकार ने 14 फरवरी 2006 को उनके कोच्चि स्थित निवास पर एक विशेष साक्षात्कार के दौरान उन्हें बताया कि गत रात दिल्ली से उनके शहर आते समय राजधानी एक्सप्रेस में केरल निवासी कुछ यात्री तो उनकी प्रशंसा करते थक नहीं रहे थे. सहयात्रियों ने कहा कि मात्र कमला दास नहीं बल्कि कमला सुरैया को ही कवर कर लेते हैं तो आप सब कुछ कवर कर लेंगे, आपको कहीं और जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी क्योंकि वह संपूर्ण केरल व दक्षिण भारत के कल्चर की नुमाइंदा हैं. इस पर वह बहुत प्रसन्न हो गईं. कई तरह के रोगों की पीड़ा भोगने के बावजूद मुस्कुराने लगीं. उन्होंने मज़ाक करते हुए कहा कि तब तो उन्हें उन यात्रियों को कोई उपहार देना होगा. वैसे उसी क्षण उन्होंने यह भी कहा कि इसके बावजूद कुछ लोग तो ऐसे हैं ही जो उनसे ईर्ष्या करते हैं और उनका विरोध करते हैं. इस संदर्भ में उन्होंने प्रसिद्ध स्तंभकार व लेखक खुशवंत सिंह का ख़ास तौर पर नाम लिया. कहा, कई वर्ष पूर्व जब मैं साहित्य के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार के लिए नामांकित की गई और कई विदेशी पत्रकार मुझसे मिलने आए तो उन्होंने मुझ पर आरोप लगाया कि मैंने मनगढ़ंत कहानी फैलाई हुई है, जब कि सच यह था कि नोबेल पुरस्कार चयन समिति के उपाध्यक्ष ने मेरी अंग्रेजी की कविताओं का स्वीडिश भाषा में अनुवाद किया था. इससे वहां के सभी लोग मेरे प्रशंसक हो गए थे. उन्होंने उस समय यह भी कहा कि खुशवंत सिंह ने तो उनकी कविताओं को पढ़ा भी नहीं है. फिर जब उन्हें बताया गया कि प्रसिद्ध पत्रकार कुलदीय नैयर तो उनके प्रशसंक हैं, तो वह कहने लगीं कि हां, वह मुझे अच्छी तरह जानते हैं और वह तो मुझे हिम्मतवाली महिला भी कहते हैं. वह जब आपातकाल के बाद रिहा कर जेल से बाहर आए तो सर्वप्रथम उन्होंने मुझे ही फोन किया और कहा कि कमला अब मैं बाहर आ गया हूं. फिर हम लोग परिवार के साथ मिले और खुशी मनाई. उनकी पत्नी भारती सच्चर मेरी बहुत ही अच्छी मित्र बन गई थीं. कुलदीप नैयर, उनकी पत्नी, इंद्रजीत, दुर्गा दास इन सब लोगों के साथ बीते हुए दिन मुझे याद आते हैं. तीन साल हम लोगों ने वहां गुजारे. दिल्ली से केरल वापस आते समय मैं तो रो रही थी. मैंने तो अपने पति माधव दास से कहा भी कि हम कुछ ज़मीन लेकर यहीं बस जाएं, क्योंकि यहां हमें बहुत अच्छे मित्र मिले हुए हैं. परंतु मेरे पति मालाबार आने को बेचैन थे. वह मालाबार, जहां के कुछ लोग मुझसे घृणा करते हैं और मेरे बारे में बेबुनियाद ख़बरों को फैलाते हैं. उनका कहना था कि वह जो कुछ लिखती हैं वह समाज में फैली हुई बुराइयों एवं भ्रांतियों के ख़िलाफ़ होता है. इससे बहुत से लोग बैचेन हो जाते हैं. डॉ. कमला सुरैया कोच्चि में एक मस्ज़िद के इमाम एवं जमाते इस्लामी के सक्रिय कार्यकर्ता बशीर मोहियुद्दीन मौलवी को सबसे बड़ा शुभचिंतक मानती थीं. वह कहती थीं कि मालाबार में अगर कोई मुझे सही मायने में समझता है तो वह यही इमाम बशीर हैं, जिन्होंने सदैव मेरा मनोबल बढ़ाया है. उनका कहना था कि कुछ लोगों ने तो उन दोनों के संबंध के बारे में भी ग़लतफ़हमी फैलाई. उन्होंने कहा, जबकि आयु में वह मेरे बेटे से भी बहुत छोटे हैं और मैं उनसे बेटे की तरह प्यार करती हूं.

अब जबकि कमला सुरैया का 31 मई 2009 को पुणे में अपने बेटे जय सुरेश दास के निवास स्थान पर देहांत हुआ, तो संपूर्ण केरल उनकी अंतिम क्रिया उनके वतन में करने के लिए वेचैन हो गया. सरकारी सम्मान के साथ उन्हें पालायम की जुमा मस्ज़िद के प्रांगण में दफ़न कर दिया गया. रोते हुए इमाम बशीर मोहियुद्दीन मौलवी ने फोन पर बताया कि उनके अपने बेटे प्रसिद्ध पत्रकार एमडी नालपत, सुरेदास एवं चिनन दास ही नहीं मैं भी आज अनाथ हो गया. कमला सुरैया ने मलयालम और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में लघुकथाएं, उपन्यास, कविताओं की रचना की एवं राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त किया.

ए.यू. आसिफ़

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ख़ूब पढ़ी-लिखी हैं अधिकतर महिला सांसद

रीतिका सोनाली

आधी दुनिया की अपनी छवि को तोड़ महिलाएं अब पूरी दुनिया पर प्रभाव छोड़ने को तैयार हो गई हैं. पंद्रहवीं लोकसभा के लिए हुए चुनाव ने भी इसे साबित किया है. महिलाओं के लिहाज़ से देखें, तो पंद्रहवीं लोकसभा के

मौसम नूर

आंकड़े चौंकाने वाले हैं. संसदीय लोकतंत्र के इतिहास में यह पहला मौका है, जब 59 महिलाएं चुनाव जीतकर लोकसभा में पहुंची हैं. इनमें से एक-दो अपवादों को छोड़ दें तो अधिकतर ने भारी-भरकम पढ़ाई करके राजनीति में क़दम रखा है. छवि के मामले में भी एक-दो को छोड़ बाक़ी सबकी छवि साफ-सुथरी है. अधिकतर महिला सांसदों पर न तो कोई देनदारी है, न ही उनके ख़िलाफ़ कोई आपराधिक मामले ही दर्ज़ हैं. यक़ीनन यह गर्व की बात है, लेकिन यह गर्व तब कुछ और बढ़ जाता जब ये आम महिलाओं के बीच से और गांव-देहात से भी आई होतीं.

बहरहाल, नई लोकसभा की सदस्य बनने वाली 59 महिला सांसदों में से 28.81 प्रतिशत स्नातक हैं, तो 54.23 प्रतिशत स्नातकोत्तर हैं. इनमें से कई तो एलएलबी, एम फिल व अन्य उच्च स्तरीय शिक्षा प्राप्त कर चुकी हैं. वैसे 16.94 प्रतिशत महिला सांसद ऐसी भी हैं जो दसवीं या उससे निचले स्तर की पढ़ाई करके ही लोकसभा

प्रिया दत्त

में आईं हैं.

इस समय सबसे कम उम्र (28 वर्ष) की मंत्री अगाथा संगमा हैं, जो मेघालय के तुरा से चुनाव जीत कर लोकसभा में आई हैं. उन्होंने एलएलबी किया हुआ है. उन्होंने हिंदी में राज्य मंत्री का शपथ ग्रहण कर सबको चकित कर दिया है. इस बार लोकसभा में आने वाली महिलाओं में पंजाब के होशियारपुर से कांग्रेस सांसद संतोष चौधरी भी हैं जो ग्रेजुएट हैं. वह दो करोड़ की संपत्ति की मालकिन भी हैं. वैसे पंजाब से इस बार चार महिलाएं लोकसभा में पहुंचीं हैं. इनमें पूर्व मुख्यमंत्री और कांग्रेस नेता अमरिंदर सिंह की पत्नी परनीत कौर भी हैं. स्नातक तक की पढ़ाई करने वाली परनीत कौर को विदेश राज्य मंत्री बनाया गया है. वह पहले भी लोकसभा सदस्य रह चुकी हैं. भटिंडा से अकाली दल की सांसद हरसिमरत कौर बादल हैं, जो मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल की बहू और उप मुख्यमंत्री सुखबीर सिंह बादल की पत्नी हैं. वह डिप्लोमाधारी हैं. मध्य प्रदेश से भी चार महिला सांसद बनी हैं. ये हैं इंदौर से भाजपा की सुषमा स्वराज, इसी पार्टी की इंदौर से सुमित्रा महाजन, ग्वालियर से यशोधरा राजे सिंधिया, बेतूल से ज्योति धुर्वे और कांग्रेस की ओर से शहडोल से राजेश नंदिनी सिंह और मंदसौर से मीनाक्षी नटराजन हैं. इनमें से सुषमा स्वराज और सुमित्रा महाजन जहां क़ानून से स्नातक हैं, वहीं ज्योति धुर्वे स्नातकोत्तर, राजेश नंदिनी सिंह स्नातक और मीनाक्षी नटराजन स्नातकोत्तर डिग्री धारी हैं.

इसी तरह पश्चिम बंगाल के बिशुनपुर से माकपा सांसद सुष्मिता बौरी जहां एल.एल.बी हैं, वहीं उत्तर प्रदेश के हरदोई से सांसद बनीं उषा वर्मा एमए, महाराष्ट्र के बारामती से सांसद बनने वाली शरद पवार की बेटी सुप्रिया सुले बी.एससी, मुंबई-उत्तर मध्य की कांग्रेस सांसद प्रिया दत्त स्नातक, छत्तीसगढ़ के दुर्ग से भाजपा सांसद करुणा शुक्ला एचएचएससी, वीरभूम से तृणमूल कांग्रेस की शताब्दी राय बीए- प्रथम वर्ष, हुगली से तृणमूल कांग्रेस की ही रत्ना डे एमबीबीएस, इसी पार्टी की काकली घोष (बरसत से) एमबीबीएस, माल्दा उत्तर से तृणमूल की मौसम नूर एलएलबी, रायगंज से कांग्रेस की दीपा दासमुंशी एमए, प्रतापगढ़ से कांग्रेस सासंद राजकुमारी रत्ना सिंह बी.कॉम, सपा की सुशीला सरोज (मोहन लालगंज) से एमए तक पढ़ी हुई हैं. रायबरेली से कांग्रेस सांसद सोनिया गांधी हैं, जिनके बारे में कुछ कहने की ज़रूरत ही नहीं है, वह विदेश में पली-बढ़ीं हैं. लेकिन लोकसभा में उत्तर प्रदेश की ही आंवला सीट का प्रतिनिधित्व करने वालीं और सोनिया गांधी की देवरानी मेनका गांधी अंतर स्नातक ही हैं. वह भाजपा सांसद हैं.

बिहार में सासाराम संसदीय सीट से चुनाव जीतने वाली कांग्रेस सांसद मीरा कुमार एम.ए.,एल.एल.बी की पढ़ाई कर चुकी हैं. राजनीति में आने से पहले वह भारतीय विदेश सेवा में अधिकारी थीं. वह पूर्व उप प्रधानमंत्री और बड़े दलित नेता बाबू जगजीवन राम की सुपुत्री हैं और समाजसेवा उनकी रगों में है. वह ओबीसी कोटा आरक्षण नीति की शुरू से समर्थक रही हैंऔर ग़रीब की बेटी की शादी में सरकार की ओर से 50 हज़ार रुपए दिए जाने की मांग करती रही हैं.

उधर, आंध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम से कांग्रेस सांसद 47 वर्षीया किल्ली कृपा रानी और बापतला से लक्ष्मी पनबका पोस्ट ग्रेजुएट हैं, तो विशाखापत्तनम से कांग्रेस सांसद दग्गूवती पुरंदेश्वरी को दो-दो स्नातक की डिग्री हासिल है. वह पिछले लोकसभा चुनाव में बापतला संसदीय क्षेत्र से जीतकर मानव संसाधन विकास मंत्रालय में राज्य मंत्री का भार संभाल रही थीं. इस बार भी उन्हें इसी मंत्रालय में फिर से राज्य मंत्री बनाया गया है. वह तेलुगु देशम पार्टी के संस्थापक एन.टी. रामराव की पुत्री हैं. लक्ष्मी पनबका वर्ष 1996, 1998 और 2004 में नेल्लोर से सांसद रह चुकी हैं. उन्हें पिछली बार की तरह इस बार भी स्वास्थ्य राज्य मंत्री बनाया गया है.

बोबली से लक्ष्मी बोचा ने दर्शनशास्त्र में एम.ए और पी.एच.डी किया हुआ है. उन्होंने कई सामाजिक कार्यों में हिस्सा लेकर भी अपना योगदान दिया है, जिसकी वजह से वह काफी लोकप्रिय हैं. राजनीति में उनकी शुरुआत ज़िला पंचायत से हुई. इसके बाद कई पदों पर रहने के उपरांत उन्हें ज़मीनी नेता के रूप में जनता ने स्वीकारा. टीआरएस के टिकट पर मेडक से जीतीं विजया शांति 10वीं पास हैं और उनके पास 27 करोड़ से अधिक की संपत्ति है. उन्होंने पिछले वर्ष हैदराबाद में प्रशासन द्वारा प्रवासी ग़रीब मज़दूरों को हटाने की कोशिश का जमकर विरोध किया था. उजाड़े जा रहे लोगों के साथ वह न सिर्फ़ खड़ी हो गई थीं, बल्कि प्रशासन के ख़िलाफ़ धरने पर भी बैठ गई थीं. उन्होंने आश्वासन दिया था कि तेलंगाना राष्ट्र समिति (टीआरएस) के सत्ता में आने के बाद ग़रीबों की सारी मुश्किलें हल हो पाएंगी. शायद जनता ने इस बार उन्हें विजयी बना कर एक कठिन परीक्षा में बैठने का मौका दे दिया है. उधर, असम में गुवाहाटी से भाजपा सांसद विजया चक्रवर्ती शिक्षाविद रह चुकी हैं. उन्होंने गुवाहाटी विश्वविद्यालय व बनारस हिंदू विश्वविद्यालय से अंग्रेजी भाषा में एम.ए किया है. उन्होंने असम साहित्य में भी काफी योगदान दिया है, नजल फिरंगिथी, अभिजान और कारागार नाम से उन्होंने तीन किताबें भी लिखी हैं. असम के लखीमपुर से कांग्रेस सांसद रानी नाराह भारत की महिला क्रिकेट टीम की सदस्य रह चुकी हैं. उन्होंने 1986 में क्रिकेट से रिटायरमेंट लिया और इसके बाद महिलाओं को इस खेल में आगे लाने की ख़ातिर विभिन्न पदों पर रहकर भरसक कोशिश करती रहीं हैं. इसके अलावा वह फिल्म प्रोडयूसर भी रह चुकी हैं. जहां तक शिक्षा की बात है, तो स्नातक हैं. चुनाव आयोग को दी गई जानकारी के मुताबिक वह केवल 23 लाख की संपत्ति की मालकिन हैं.

बिहार में सासाराम संसदीय सीट से चुनाव जीतने वाली कांग्रेस सांसद मीरा कुमार एम.ए.,एल.एल.बी की पढ़ाई कर चुकी हैं. राजनीति में आने से पहले वह भारतीय विदेश सेवा में अधिकारी थीं. वह पूर्व उप प्रधानमंत्री और बड़े दलित नेता बाबू जगजीवन राम की सुपुत्री हैं और समाजसेवा उनकी रगों में है. वह ओबीसी कोटा आरक्षण नीति की शुरू से समर्थक रही हैंऔर ग़रीब की बेटी की शादी में सरकार की ओर से 50 हज़ार रुपए दिए जाने की मांग करती रही हैं.

जहां तक कम पढ़ी-लिखी महिला प्रतिनिधियों की बात है, तो बिहार की एक और उत्तरप्रदेश की तीन महिला सांसदों के नाम सबसे ऊपर हैं. इनमें से सीतापुर की बसपा सांसद कैसर जहां आठवीं पास ही हैं, तो कैराना से इसी पार्टी की सांसद तब्बसुम बेग़म दसवीं पास हैं. रामपुर से सपा सांसद और फिल्म अभिनेत्री जयाप्रदा भी दसवीं पास ही हैं. सबसे कम पढ़ी बिहार में उजियारपुर की जद-यू सांसद अश्वमेध देवी पांचवीं पास ही हैं.

मज़ेदार बात यह है कि कई महिला सांसदों ने इस बार प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवारों को काफी अधिक वोटों से भी हराया है. गुजरात में भाजपा की पटेल जयश्री कानुभाई ने कांग्रेस के पटेल जीवाभाई अंबाला को 22,003 वोटों से हराया. गुजरात में ही दहोद की कांग्रेस सासंद डॉ. प्रभा किशोर डीजीओ, एम डी तक पढ़ी हैं. उन्होंने भाजपा प्रत्याशी दामौर सोमजीभाई पंजाभाई को 58,536 वोटों के अंतर से हराया. सूरत से भाजपा सांसद दर्शनाबेन विक्रमभाई जारदौस ने बी.कॉम किया हुआ है और उन्होंने कांग्रेस के गजेरा धीरभाई हरिभाई को 74,798 वोटों से हराकर लोकसभा में पहुंची हैं. इसी तरह हरियाणा में अंबाला से कांग्रेस सांसद और मनमोहन सरकार में कैबिनेट मंत्री कुमारी शैलजा के पास एम.फिल की डिग्री है. दिल्ली के दलित नेता चौधरी दलबीर सिंह के घर जन्मीं शैलजा ने सामाजिक भेदभाव को क़रीब से देखा व समझा है. पिता की राजनीतिक विरासत संभालने के पीछे यही मुख्य वजह भी रही है. वह पहली बार 1991 में सिरसा से सांसद बनी थीं. इसके बाद 2004 में अंबाला से सांसद चुनी गईं और इस बार भी वहीं से जीतकर संसद में पहुंची हैं. पिछली सरकार में भी वह मंत्री थीं और इस बार भी वह आवास व ग़रीबी उन्मूलन मंत्री हैं. हालांकि इस बार उन्हें पर्यटन मंत्रालय का दायित्व भी सौंपा गया है.

श्रुति चौधरी

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

उत्तर दक्षिणी दिल्ली से लोकसभा सदस्य और मंत्री बनने वाली कृष्णा तीरथ एम.ए, बी.एड हैं. उन्होंने भाजपा की मीरा कांवरिया को 1,84,443 वोटों से हराया. उन्हें मनमोहन सिंह की नई सरकार में राज्य मंत्री का पद दिया गया है. नागौर सीट से कांग्रेस सांसद बनने वाली ज्योति मिर्धा के पास एमबीबीएस की डिग्री है. प्रतिद्वंद्वी प्रत्याशी के मुक़ाबले वह 1,55,137 वोटों से विजयी हुई हैं. इसी तरह कन्याकुमारी में हेलेन डेविडसन 65,644 वोटों से जीतीं.

बिहार के शिवहर से भाजपा सांसद रमा देवी वैसे तो क़ानून से स्नातक हैं, लेकिन उन पर लगभग 13 लाख की देनदारी है. इतना ही नहीं, उनके ख़िलाफ़ धारा 332, 341, 342, 347, 353, 504 और 506 के तहत कई मुक़दमे भी दर्ज़ हैं. ग़ौरतलब है कि वह बिहार के बाहुबली नेता रहे ब्रजभूषण प्रसाद की विधवा हैं. पहले राजद में थीं और लालू-राबड़ी सरकार में मंत्री भी होती थीं. पिछला चुनाव हार जाने के बाद वह भाजपा में शामिल हो गईं. भाजपा ने उनका और उनके दिवंगत पति का प्रोफाइल देख कर शिवहर लोकसभा क्षेत्र से लवली आनंद के ख़िलाफ़ प्रत्याशी बना दिया. कांग्रेस प्रत्याशी के तौर पर चुनाव लड़ने वाली लवली आनंद भी एक दूसरे बाहुबली नेता आनंद

अनु टंडन

मोहन की पत्नी हैं. उधर, आंध्र प्रदेश के विजियानगरम की कांग्रेस सांसद झांसी लक्ष्मी बोचा के पास एम.ए. और पी.एचडी तक की डिग्री है, लेकिन उनके ख़िलाफ़ भी धारा 177 के तहत आपराधिक मामला दर्ज़ है. उन पर ग़लत जानकारी देने का आरोप है. महिलाओं के लिहाज़ से देखें तो पंद्रहवी लोकसभा का चुनाव कई दूसरे कारणों से भी महत्वपूर्ण माना जाएगा. यह पहला मौका था जब कुछ प्रोफेशनल महिलाओं ने भी बतौर निर्दलीय चुनाव मैदान में उतरी थीं. हालांकि वह जीत नहीं सकीं, लेकिन भारत में राजनीति के बदले चेहरे को रेखांकित अवश्य कर गईं. वे यह भी बता गईं कि राजनीति में आकर देश को नए जमाने के हिसाब से बदलने का हौसला वे भी रखती हैं. यानी मौका मिले तो बहुत कुछ किया जा सकता है. इस लिहाज़ से एबीएन एमरो की भारत में प्रमुख मीरा सान्याल का नाम महत्वपूर्ण है. चुनाव लड़ने के लिए उन्होंने नौकरी ही छोड़ दी थी. इसी तरह आईआईएम- हैदराबाद की छात्रा रह चुकीं और मशहूर नृत्यांगना मल्लिका साराभाई गांधीनगर में भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी के ख़िलाफ़

ज्योति मिर्धा

चुनाव मैदान में उतरी थीं. यह तो तस्वीर का एक और सुनहरा पहलू है. दूसरा पहलू उतना ही धूमिल है, जो गांव-देहात, ग़रीब-अल्पसंख्यक महिलाओं से सरोकार रखता है. पंचायत स्तर पर शानदार काम कर रहीं महिलाओं की लोकतंत्र की सबसे बड़ी पंचायत यानी संसद में भागीदारी आज भी लगभग शून्य है. जब तक संसद का संबंध सड़क पर रहने वालों से भी सीधे तौर पर क़ायम नहीं हो जाता, तब तक संसदीय लोकतंत्र को सफल कहना क्या उचित होगा ?

ritika.chauthiduniya@gmail.com

एम जे अकबर

क्या भारत में कभी आएगा मुस्लिम कोड बिल?

अब सत्ता प्रतिष्ठान पांच साल की स्थिरता के जनादेश से लैस हैं, तो एक वाजिब सवाल है कि भारत 2014 तक क्या बनना चाहता है? अगर इसका जवाब इतना सीधा होता तो सवाल ही क्यों पैदा होता. एक जवाब यह हो सकता है कि भारतीय ज़्यादा बेहतर और मुक़्त अर्थव्यवस्था चाहते हैं. यह जवाब ठीक भी है, लेकिन अपर्याप्त भी. 1947 से ही भारतीय ज़्यादा विकास दर की चाह रखते रहे हैं. ठीक वैसे ही जैसे आज़ादी की इच्छा. जिसके बारे में भारतीयों का विश्वास था कि यह ज़िंदगी को अधिक बेहतर बना देगी. पिछले साठ सालों में परिदृश्य एक-सा नहीं रह गया है. ग़रीबों और शोषितों को आज भी इस बार विश्वास कर पाना मुश्किल है कि सरकार को उनकी फ़िक्र अधिक है या मध्यम वर्ग की. तो 2009 का संदेश क्या है ?

भारतीय किसी भी चीज़ से ज़्यादा बढ़कर आर्थिक समानता चाहते हैं और एक आधुनिक देश में सांस्कृतिक आज़ादी की चाहत रखते हैं. ग़रीबी आधुनिकता विरोधी है. यह औपनिवेशिक इतिहास का कलंक है, जिसे हम भूल जाना चाहते हैं, लेकिन आधुनिकता पैसे से कुछ आगे की चीज़ है. बहुत से देश हैं जिनके पास पैसा तो है, चाहे वह संस्थानों की सूरत में हो या फिर क़िस्मत का नतीजा हो. लेकिन वे न तो आधुनिक हैं और न ही इन देशों से ऐसा कोई संकेत नज़र आता है कि ये आधुनिकता की ओर बढ़ रहे हैं.

आधुनिकता तो अपेक्षाओं का ताना-बाना है, जो विस्मृत होती सोच से लेकर लैंगिक समानता, हाईवे, अंग्रेजी स्कूल, चुनाव से लेकर एक अंजान से कस्बे में अख़बार की बेतहाशा ज़रूरत तक जुड़ा है. आधुनिकता का मतलब आदतों या परंपराओं को ठुकराना नहीं है. हुबली या कोट्टायम में नाश्ते की थाली में डोसे के साथ चपाती आराम से मौजूद रह सके. रामपुर में परांठे के साथ क्रोइसेंट मौजूद हों, मंगलूर के बार असल में सिर्फ़ शराब परोसने की जगह नहीं हैं. ये मोरल पुलिसिंग की ख़तरनाक छाया के ख़िलाफ़ पसंद और आज़ादी का विकल्प भी हैं.

किसी भी आधुनिक देश के चार आवश्यक अधिकार होते हैं. मूल और लिंग से ऊपर उठकर समानता, धर्मनिरपेक्षता, अभिव्यक्ति की आज़ादी और आर्थिक समानता. स्वाभाविक है कि हमारे देश में राजनीति प्रभावी ढंग से काम कर रही है, नहीं तो हर चुनाव के नतीजे नेताओं के लिए चौंकाने वाले क्यों साबित होते.

किसी भी आधुनिक देश के चार आवश्यक अधिकार होते हैं. मूल और लिंग से ऊपर उठकर समानता, धर्मनिरपेक्षता, अभिव्यक्ति की आज़ादी और आर्थिक समानता. स्वाभाविक है कि हमारे देश में राजनीति प्रभावी ढंग से काम कर रही है, नहीं तो हर चुनाव के नतीजे नेताओं के लिए चौंकाने वाले क्यों साबित होते.

अगर महात्मा गांधी राष्ट्रपिता हैं, तो जवाहर लाल नेहरू आधुनिक भारत के पिता हैं. भारत को आधुनिक भारत में तब्दील कर देने की उनकी कीमियागीरी असल में हिंदू कोड बिल के पास होने से जन्मी. यह शानदार विधेयक ख़ासे अंदरूनी विरोध के बावजूद अस्तित्व में आया और इसने हिंदू महिलाओं को रूढ़ियों की बेड़ियों से निकाला. अस्सी का दशक आते-आते ये महिलाएं भी राष्ट्र निर्माण में बराबर की हिस्सेदार हो गईं. नेहरू का यह आधुनिक दृष्टिकोण उनके नाती राजीव गांधी की कल्पनाओं में गहरे तक बसा था. राजीव की विचारधारा को लिबरेशन टेक्नोलॉजी भी कहा जा सकता है. देश का हर कंप्यूटर राजीव गांधी के इसी सपने का नतीजा है.

लेकिन जवाहरलाल और राजीव भी एक बड़ी विफलता के ज़िम्मेदार हैं. नेहरू ने देश के मुसलमानों को उस तोहफे से वंचित रखा, जो हिंदुओं को दिया गया था. कोई मुस्लिम कोड बिल नहीं लाया गया. यह बिल्कुल सही है कि उस समय मुस्लिम महिलाओं के अधिकार हिंदू महिलाओं से बहुत अधिक थे, लेकिन नेहरू ने इस स्थिति को पूरी तरह पलट दिया. लेकिन एक ऐतिहासिक घटनाक्रम ने राजीव गांधी को अपने नाना की ग़लती में सुधार का एक मौका दिया. और उनका शुरुआती रुझान वही था, जो किसी आधुनिक सोच वाले व्यक्ति का हो सकता है. लेकिन राजीव गांधी भी उन्हीं निहित स्वार्थों के शिकार हो गए, जिन्होंने उनके नाना को जकड़ लिया था. कांग्रेस के अंदर मुस्लिमों का एक मज़बूत तबका था, जिसके लिए यथास्थिति बहुत आरामदेह थी. यह बात तार्किक इसलिए नज़र आती है क्योंकि शाहबानो मामले के समय जिन लोगों ने राजीव गांधी के लिए उलटे-सीधे शब्दों का इस्तेमाल किया, वे आज की कांग्रेस में दिग्गज माने जाते हैं. और याद रखिए, उनके नज़रिए में कोई बदलाव नहीं आया है.

समझौते की क़ीमत किसी ताक़तवर को शायद ही कभी चुकानी पड़ती है. इसकी क़ीमत तो उन बच्चियों को चुकानी पड़ती है, जो पर्दे में लिपटी रहती हैं और जो अपनी आर्थिक या सामाजिक राह तलाशने लायक बनने से पहले जबरन शादी के चक्रव्यूह में धकेल दी जाती हैं. भारतीय मुस्लिम समुदाय में पर्दे के चलन के बढ़ने की तह में जाना होगा. यह धर्मनिरपेक्ष भारत का विरोधाभास है कि धर्मनिरपेक्षता की परिभाषा का मतलब अल्पसंख्यकों के अधिकारों का मतलब उन्हें रूढ़िवाद की ओर धकेलता है. नेता स्वीकार करते हैं कि सामुदायिक पहचान का मुखर होना असल में असुरक्षा से उपजा है. लेकिन उनका यह निष्कर्ष ख़ासा ख़तरनाक है. यह सरकार की ख़तरों को दूर करने और शैक्षिक व आर्थिक मोर्चे उपलब्ध न करा पाने की विफलता का नतीजा है. दर्दनिवारक असल में इलाज नहीं है. क्या राजीव के पुत्र राहुल गांधी शाहबानो मामले वाले दिन याद करेंगे या फिर सुधारों पर वोट को तरजीह देंगे ? मौजूदा समय की ख़ुशगवारी में हमें इस मुगालते में नहीं रहना चाहिए कि अतीत में जो गुज़र चुका है वह पीछे छूट गया है. ऐसा मौका आएगा और अगर हम नहीं लाएंगे तो बिना बुलाए आएगा.

भारत में हिंदू बहुल पाकिस्तान नहीं बनना चाहता. और यह भी नहीं समझ पाता कि पाकिस्तान मुस्लिम बहुल हिंदुस्तान बनने से क्यों परहेज करता है. यह पाकिस्तानी राष्ट्रवाद की आलोचना नहीं है. आज हर भारतीय इस बात पर या तो ख़ुश या फिर मुतमईन है कि पाकिस्तान अपनी मौत मर रहा है. जो सही दिशा में सोच रहे हैं, उन्हें इस बात की फ़िक्र है कि पड़ोसी देश 21वीं सदी की ओर जाए न कि 19वीं सदी के अंधकार में डूबा रहे. लेकिन भारत विकास के ऐसे मॉडल पर नहीं चल सकता, जिसमें कुछ हिस्सा आधुनिकता का हो और एक तबका क़बाइली मानसिकता की ओर बढ़ता रहे. भारत तब तक पूरी ताक़त के साथ आगे नहीं बढ़ सकता, जब तक भारतीय मुसलमान भी हिंदुओं, सिखों और ईसाइयों के साथ 2014 के तरक़्क़ी के सपने की ओर हमक़दम न हों.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रवि किशोर

कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न

यौन उत्पीड़न दो प्रकार के हो सकते हैं. पहला किसी का लाभ उठाना और दूसरा विपरीत कार्य परिस्थिति. पहला *क्विड प्रो क्यो* यानी किसी प्रलोभन या फ़ायदे के बदले शारीरिक शोषण करना है, जबकि दूसरे का संदर्भ ऐसी विपरीत स्थिति है जब काम करने का माहौल ही आक्रामक,विरोधी और निंदात्मक बन जाता है. दूसरे शब्दों में उत्पीड़न की एक भी घटना क्विड प्रॉ क्यू उत्पीड़न को स्थापित करने के लिए पर्याप्त है, जबकि विपरीत परिस्थिति में काम उत्पीड़न को स्थापित करने के लिए इस तरह की कई घटनाओं की ज़रूरत है. 1997 से पहले महिलाओं को कार्यस्थल पर यौन शोषण के अनुभव पर उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ इंडियन पीनल कोड के तहत शिकायत करनी होती थी.

हालांकि इसके बाद विशाखा बनाम राजस्थान राज्य के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने एक महत्पूर्ण फ़ैसला सुनाया. इस मामले में याचिकाकार्ता ने सुप्रीम कोर्ट में एक रिट दायर की थी, जिसमें कामकाजी महिलाओं के मौलिक अधिकार को संविधान के अनुच्छेद 14,19 और 21 के तहत सुनिश्चित करने की मांग रखी गई, क्योंकि ऐसी घटनाएं असामान्य नहीं हैं. इस समय लैंगिक न्याय पर काफी ज़ोर दिया जा रहा था, जिससे लोगों में जागरूकता भी बढ़ी और इस तरह के यौन उत्पीडन को रोकने के लिए काफी प्रयास भी किए जा रहे थे. यह याचिका उन सामाजिक कार्यकर्ताओं और एनजीओ के द्वारा दायर की गई थी जिसका मुख्य उद्देश्य समाज की भ्रांतियों की ओर ध्यान खींचना और लैंगिक समानता के वास्तविक सिद्धांत को स्थापित करना था. ताकि कामकाजी औरतों के कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को न्यायिक प्रक्रिया द्वारा रोकने के लिए क़ानून की ज़रूरत को पूरा किया जा सके.

याचिका दायर करने का तात्कालिक कारण राजस्थान के एक गांव में सामाजिक कार्यकर्ता के साथ हुआ सामूहिक बलात्कार था. इस पर सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि यह आपराधिक घटना है, जिसकी सुनवाई अलग आपराधिक न्यायालय में होगी, लेकिन उसने काम करने की जगह पर उत्पीड़न के मामले पर विस्तृत दिशा-निर्देश ज़ारी किए. इस घटना ने कामकाजी महिलाओं के लिए ख़तरों और यौन उत्पीड़न को लेकर सवाल खड़े कर दिए और यह भी स्पष्ट किया कि ऐसी घटनाओं को दोबारा होने से रोकने के लिए क़ानून की अनुपस्थिति में दूसरे विकल्प की व्यवस्था होनी चाहिए.

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस तरह की घटनाएं लैंगिक समानता के मौलिक अधिकार और जीने की आज़ादी का उल्लंघन हैं. यह संविधान के अनुच्छेद 14,15 और 21 का भी उल्लंघन है इसके साथ ही तार्किक रूप से यह कहीं भी काम करने की आज़ादी के मौलिक अधिकार अनुच्छेद 19-जी का भी उल्लंघन है. इस तरह इन उल्लंघनों का उपचार अनुच्छेद 32 की तरह होना चाहिए ताकि महिलाओं के ये मौलिक अधिकार सुनिश्चित किए जा सकें.

लैंगिक समानता यौन उत्पीड़न के साथ-साथ प्रतिष्ठा के साथ काम करने के अधिकार का भी बचाव करता है जो एक वैश्विक मानव अधिकार है. इसकी न्यूनतम आवश्यकता पर पूरे विश्व ने अपनी सहमति दे दी है. इस तरह अंतरराष्ट्रीय मान्यताएं और व्यवहार इनके विकल्प तय करने के उद्देश्य के लिए अच्छे मार्गदर्शक हो सकते हैं. लिंग विशेष के ख़िलाफ़ हिंसा की स्थिति में रोज़गार में समानता का अधिकार निश्चित रूप से ख़त्म हो जाता है. यौन उत्पीड़न में वे सभी चीजें शामिल हैं जैसे उत्तेजना बढ़ाने वाला व्यवहार, पोर्नोग्राफी दिखाना और शारीरिक संबंध बनाने के लिए प्रयास करना या कोई ऐसा शब्द या संकेत, जो इस तरह के यौन उत्पीड़न को बढावा देता हो. इस तरह का आचरण शर्मनाक है और इससे सेहत और स्वास्थ्य की समस्याओं भी हो सकती हैं. साथ ही यह भेदभावपूर्ण भी है, क्योंकि प्रताड़ित महिलाओं को लगता है कि इसका विरोध करने पर भविष्य में नियुक्ति और पदोन्नति में उन्हें दिक़्क़तों का सामना करना पड़ सकता है. सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस तरह की स्थिति में पीड़ित को हर तरह की क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिए. सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि भारत के सिविल और पीनल क़ानूनों में काम करने की जगह पर महिलाओं के साथ हो रहे यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए कठोर उपाय नहीं हैं और इसमें काफी वक़्त भी लगेगा. सुप्रीम कोर्ट ने यह महसूस किया कि कार्यस्थल पर कुछ ज़रूरी दिशा-निर्देश लागू करने की ज़रूरत है. लिहाजा कोर्ट ने इस मसले पर कुछ ज़रूरी दिशा-निर्देश भी दिए

1. कार्यस्थल पर मालिक व अन्य ज़िम्मेदार व्यक्तियों की ज़िम्मेदारियां : यह मालिक या दूसरे ज़िम्मेदार व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह जहां काम कर रहा है वहां किसी तरह के यौन उत्पीड़न को रोके, उसके ख़िलाफ़ कार्रवाई और उसके निवारण की प्रक्रिया की व्यवस्था बनाए.

2. परिभाषा : यौन उत्पीड़न तभी कहा जाएगा जब पीड़ित के साथ इस तरह के अपमानजनक व्यवहार किए जाएं

- शारीरिक संपर्क और छेड़छाड़
- शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए उकसाना
- आपत्तिजनक शब्द जो शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए उतेजित करें
- पोर्नोग्राफी दिखाना और किसी भी दूसरे प्रकार के संकेत और शब्द जो अपमानजक हों

3. रोकने के लिए कदम : प्राइवेट या सरकारी कार्यालयों में सभी मालिकों और महत्वपूर्ण व्यक्तियों को इसे रोकने के लिए आवश्यक कारगर क़दम उठाने चाहिए.

4. आपराधिक प्रक्रिया : जब इस तरह की घटना इंडियन पीनल कोड और किसी दूसरे क़ानून के तहत आती है तो कार्यालय के ज़िम्मेदार व्यक्ति को संबंधित अधिकारी से इसकी शिकायत करनी चाहिए. यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि यौन उत्पीड़न की शिकायत पर कार्रवाई में पीड़ित के साथ भेदभाव नहीं हो और न ही और परेशान किया जाए. पीड़ित के पास यह विकल्प होना चाहिए कि वह अपराधकर्ता या ख़ुद को स्थानांतरित करा सके.

5. अनुशासनात्मक कार्रवाई : अगर कहीं इस तरह की घटना घटती है और वहां इसके प्रति कोई नियम बना हो तो उसके तहत दोषी व्यक्ति के ख़िलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवाई की जानी चाहिए

6. शिकायत की व्यवस्था : यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए कोई ठोस व्यवस्था नहीं है. ऐसे में इसके लिए उस संस्था में एक शिकायत तंत्र की व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि पीड़ित की शिकायत पर तुरंत कार्रवाई की जा सके.

7. शिकायत समिति : शिकायत तंत्र को एक शिकायत समिति बनानी चाहिए जिसका नेतृत्व कोई महिला ही करे और उसके कुल सदस्यों की संख्या में महिला सदस्यों की संख्या आधे से कम नहीं होनी चाहिए. एक तीसरा पक्ष भी सम्मिलित होना चाहिए जिससे किसी वरिष्ठ के दबाव को आसानी से रोका जा सके.

8. कर्मचारियों की पहल : कर्मचारियों को चाहिए कि यौन उत्पीड़न के मामले को अपने सहभागियों के सामने उठाए. कर्मचारियों और प्रबंधन की बैठक में इस मसले पर खुलकर बातचीत होनी चाहिए

9. जागरूकता : कामकाजी महिलाओं को इस संबंध में नई सूचना या दिशा-निर्देशों की जानकारी सही तरीक़े से दी जाए.

10. अन्य व्यक्ति द्वारा उत्पीड़न : अगर यौन उत्पीड़न किसी थर्ड पार्टी या किसी बाहरी व्यक्ति के द्वारा होता है तो जो व्यक्ति या कर्मचारी पर कार्यालय की ज़िम्मेदारी हो वह उसके ख़िलाफ़ सभी ज़रूरी उचित क़दम उठा सकता है और वह पीड़ित व्यक्ति को मदद करने के लिए स्वतंत्र है.

केंद्र और राज्य सरकारों से इस संबंध में उचित क़दम उठाने और क़ानून बनाने के लिए अपील की गई, ताकि इन दिशा-निर्देशों को निजी क्षेत्रों में भी लागू किया जाए.

एपैरल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल बनाम एके चोपड़ा के केस में सुप्रीम कोर्ट ने इस मुद्दे पर चर्चा की कि क्या शारीरिक संबंध बनाना ही यौन उत्पीड़न की परिभाषा है. उच्च न्यायालय के फ़ैसले को पलटते हुए सुप्रीम कोर्ट ने इससे अलग व्यवस्था दी-

1. वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा महिला कर्मचारी के बगल में बैठना या फिर उसे छूने की कोशिश करना भी यौन उत्पीड़न है.
2. कार्यस्थल पर महिलाओं को शारीरिक संबंध के लिए प्रेरित करना, चाहे किसी भी तरीक़े से -शाब्दिक या सांकेतिक- या फिर छेड़छाड़ एक प्रकार का भेदभाव है. यह और भी गंभीर हो जाता है जब ऐसे प्रयासों को मना करने पर पीड़ित के कार्य में किसी तरह की बाधा पहुंचाई जाए.
3. जब कोई वरिष्ठ अधिकारी का अपने से नीचे की महिला कर्मचारी के साथ व्यवहार नैतिक न हो और उस कर्मचारी की इज़्ज़त को नुकसान पहुंचाए.

वैश्विक रूप से कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न ने लगभग सभी देशों का ध्यान खींचा है और बहुत देशों ने महिलाओं के काम करने की जगह पर उसके मान मर्यादा को बचाने के लिए क़ानून बनाए हैं. कुछ देश जैसे फिलीपींस, रूस और फ्रांस ने यौन उत्पीड़न को अपराध की श्रेणी में रखा है, जिसे आगे बलात्कार और अलग तरह के यौन हमले के मामलों में भी शामिल किया जा सकता है. अमेरिका में यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए दो तरह के संघीय क़ानून बने हैं जो-टाइटल-7 सिविल राइट एक्ट 1964 और टाइटल-9 एजुकेशन एक्ट, 1972 हैं. न्यूज़ीलैंड ने अपने लेबर कोड में संवैधानिक रूप से इसे रोकने का प्रयास किया है.

विशाखा मामले में सुप्रीम कोर्ट के इस अहम फ़ैसले ने कामकाजी महिला के अधिकारों को लेकर लैंगिक समानता और मान-मर्यादा के साथ काम करने से लेकर यौन उत्पीड़न को रोकने तक के लिए लंबा सफ़र तय किया है. सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इन दिशा-निर्देशों का अनुछेद 141 के तहत बने क़ानून की तरह हर कार्यस्थल पर पालन किया जाना चाहिए. फिर भी इस मुद्दे पर एक विस्तृत क़ानून बनाने की ज़रूरत है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

संपादक महोदय,

सबसे पहले तो आपको धन्यवाद देना चाहता हूं कि आपने इतना अच्छा अख़बार निकाला है. एक साप्ताहिक अख़बार को उचित रूप दिया है. अख़बार देख कर मुझे लगता है कि जैसे कई सालों से मेहनत हो रही हो. आपके अख़बार में ख़ास कर राजनीतिक मामलों को लेकर जो ख़बरें छपी हैं, वे क़ाबिल-ए-तारीफ हैं. केंद्र में सरकार बनाने के दौर का आपने बड़ा ही सटीक विश्लेषण किया और पिछली सरकार के इतिहास को पाठकों के सामने उजागर कर दिया. यह पाठकों के लिए बहुत दुर्लभ मौका था. उम्मीद करता हूं कि आगे भी इसी तरह रोचक और ज्ञानवर्धक अख़बार निकालते रहेंगे.

आपका
इमरान
अशोक नगर

आदरणीय संपादक जी,

मैं आपका साप्ताहिक अख़बार *चौथी दुनिया* का नियमित पाठक हूं. पिछले अंक से आपने *करियर दुनिया* के नाम से एक पन्ना शामिल किया, जो शिक्षित युवाओं के लिए बहुत ही फ़ायदेमंद और मार्गदर्शक है. शिक्षित युवा वर्ग पढ़ाई के बाद क्या करें, क्या न करें इसको लेकर उलझन में रहते हैं. अलग-अलग लोगों से अलग-अलग राय मिलती है. इसलिए और भी उलझन होती है. इस मौके पर इस तरह की जानकारी सही मार्गदर्शन करती होती है. उम्मीद करता हूं कि युवाओं के लिए ऐसा उपयोगी पन्ना आपके अख़बार में लगातार आते रहेंगे. धन्यवाद.

आपका
रोहित शर्मा
दिल्ली

संपादक महोदय,

अभी तक *चौथी दुनिया* का कलेवर बहुत पसंद आ रहा है. हालांकि उम्मीदें भी बढ़ गई हैं. विविध क्षेत्रों पर जानकारी देने वाले कुछ स्तंभ दें तो और अच्छा रहेगा. आशा है कि आप इसी तरह आगे बढ़ते रहेंगे.

आपका
आदिल अहमद
गुमला, झारखंड

जब तोप मुक़ाबिल हो

जनता को सरकार पर नज़र रखनी पड़ेगी

जनता की आवाज़ और उनकी समस्याओं को अब मीडिया में जगह नहीं मिलती, क्योंकि मीडिया सरकार और विपक्ष नाम की सत्ता की संयुक्त धुरी का हिस्सा बन गया है. मीडिया का काम जनता का ध्यान उसकी बुनियादी समस्याओं से हटाना है, जो काम सत्तर-अस्सी के दशक में सिनेमा ने किया, वही काम आज मीडिया कर रहा है. जनता को मीडिया से रत्ती भर भी आशा नहीं रखनी चाहिए, कि वह कभी उनके लिए आवाज़ बुलंद करेगा.

चुनाव हो गए, भाजपा हार गई, कांग्रेस की सरकार बन गई. कांग्रेस ख़ुश, मंत्री ख़ुश, कांग्रेस के सांसद नाख़ुश और भाजपा भी नाराज़. भाजपा के सहयोगी जद-यू ने उस पर हमला बोल दिया और लगता है कि जद-यू भाजपा से अलग रास्ता तलाश रही है. लेकिन इस सारी उठापटक में जनता कहां है? जनता के वे वर्ग कहां हैं, जिन्हें हर दलित, कमज़ोर और अल्पसंख्यक कह कर बुलाते हैं. एक अच्छी बात है कि मनमोहन सिंह की सरकार अपने लिए सौ दिन का एजेंडा या कार्यक्रम बना रही है. अब कामन मिनिमम प्रोग्राम की बात है ही नहीं, क्योंकि कांग्रेस के सहयोगी दल जिसमें डी.एम.के. व तृणमूल कांग्रेस प्रमुख हैं, दोनों का देशव्यापी नज़रिया है ही नहीं. एक का देश तमिलनाडु है और दूसरे का देश बंगाल है. इसलिए अब मनमोहन सिंह सरकार की दिशा और दशा को पहचानने के लिए उनके एजेंडे को ध्यान से देखना पड़ेगा.

पर हम जनता से ज़रूर कहना चाहते हैं कि उसे चेतने की ज़रूरत है. पिछले साठ सालों में मतदान तो किया, जिताया और हराया भी, लेकिन फिर अपने हितों पर ध्यान ही नहीं दिया. जो सरकार बनी वह क्या सोच रही है, क्यों सोच रही है और जो कर रही है वह देश के हित में या आम जनता के हित में है भी या नहीं. अक्सर सरकारों को यह भ्रम हो जाता है कि वे जो भी सोचते हैं वही देशहित है, वही आम जनता का हित है. सरकार इसलिए ऐसा सोचती है, क्योंकि उसे अपने हित और अपना दृष्टिकोण बताने के लिए जनता से कोई दिशा-निर्देश ही नहीं मिलता. राजनैतिक दल बोलते हैं पर उन पर सरकार ध्यान नहीं देती और मानती है कि वे विरोधी दल हैं, वे तो हर बात का विरोध करेंगे ही. अक्सर सरकारें वह करने लगती हैं, जो सरकार के हित में होता है लेकिन जनता के हित के विपरीत होता है. जनता के चेतन समूहों में कोई बात होती ही नहीं और वे जनता के एजेंडे पर सोचते ही नहीं.

जनता की आवाज़ और उनकी समस्याओं को अब मीडिया में जगह नहीं मिलती, क्योंकि मीडिया सरकार और विपक्ष नाम की सत्ता की संयुक्त धुरी का हिस्सा बन गया है. मीडिया का काम जनता का ध्यान उसकी बुनियादी समस्याओं से हटाना है, जो काम सत्तर-अस्सी के दशक में सिनेमा ने किया, वही काम आज मीडिया कर रहा है. जनता को मीडिया से रत्ती भर भी आशा नहीं रखनी चाहिए, कि वह कभी उनके लिए आवाज़ बुलंद करेगा. वे दिन गए जब ख़लील सौ फाख्ता उड़ाया करते थे. आज तो सत्ता की धुरी की चरणवंदना और जनता को गुमराह करना मीडिया का प्रथम कर्तव्य बन गया है. हां, जनता अगर बिगड़ जाए, विद्रोह पर उतारू हो जाए तो ज़रूर मीडिया में उसे जगह मिल सकती है. इसलिए जनता की तक़लीफ़, उसके भविष्य के लिए होने वाली बातचीत भी मीडिया में जगह पाएगी, सोचना ही दिन में सपना देखना जैसा होगा. अल्पसंख्यकों, दलितों और कमज़ोर वर्गों की बात करना तो भूल ही जाना चाहिए.

अब अगर जनता नहीं चेतेगी और अपनी परेशानियों को सरकार को नहीं बताएगी तो उसे निराशा के लिए तैयार रहना चाहिए. जनता के बारे में सोचने वाले बहुत से लोग हैं, पर सभी अलग-अलग हैं. ये एक साथ बैठ कर न सोचें कोई बात नहीं, पर अलग-अलग ही सही, सोचें तो. यह सबसे महत्वपूर्ण है. पंद्रह साला और दस साला योजना सोचने से बचना चाहिए. जनता को चाहिए कि वह अपनी बुनियादी समस्याओं की प्राथमिकता तय करे और उसके बाद उसके लिए एजेंडा बनाए और सरकार को अपनी तरफ़ से एजेंडा बताए तथा दबाव डाले कि सरकार उसे लागू करे.

आम जनता की समस्या जो तत्काल हल होनी चाहिए, वह है बेरोज़गारी, अशिक्षा और महंगाई. दरअसल शिक्षा के साथ अगर अशिक्षा दूर करने का उद्देश्य जोड़ दें तो रास्ता निकल सकता है. देश में हर जगह हाई स्कूल, इंटर और डिग्री कालेजों की भरमार है, जिसमें पढ़ने वाले छात्रों और शिक्षकों को ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रौढ़ शिक्षा और बाल शिक्षा के काम में अनिवार्य रूप से जोड़ना चाहिए. इससे क्रांतिकारी नतीजे सामने आएंगे.

इतना ही नहीं, ये स्कूल और कालेज स्थानीय कच्चे माल के आधार पर अपने यहां एक या दो उद्योग जोड़ सकते हैं जिससे बेरोज़गारी से लड़ने में मदद मिलेगी. इन विद्यालयों से निकलने वाला लड़का डिग्री हाथ में लेकर नौकरी की तलाश करने वाली भीड़ नहीं बढ़ाएगा तथा बाद में अपराधी गिरोहों का सदस्य नहीं बनेगा. इस स्कूलों और कालेजों में बने उत्पादन को भारत की सेना और पुलिस बल के लिए ख़रीदा जा सकता है, जो इस समय सबसे ज़्यादा खपत वाले संगठन हैं. सेना में हर चीज़ की ज़रूरत होती है. अगर यह लागू हो जाए तो पांच साल के भीतर देश की शक्ल बदल सकती है. हर ज़िले में एक मार्केटिंग सेंटर खुल सकता है, जो वहां बनाए जा रहे नौजवानों के प्रोडक्ट को बाज़ार में भेजे. बैंक उद्योगों के लिए सहयोगी भूमिका निभा सकते हैं. बड़े उद्योगों के लिए भी यह स्थिति फ़ायदे की है, क्योंकि अगर यह न हुआ तो देश में अराजकता की स्थिति, क़ानून-व्यवस्था की वजह से बनेगी और तब बड़े उद्योगपतियों को अपने उद्योग समेटने के बारे में सोचना पड़ेगा.

इसी तरह की न्याय व्यवस्था है, जिस पर तत्काल काम हो सकता है. जनता को चाहिए कि वह सरकार से कहे कि सुधार इस तरह के हों कि हर नागरिक को दस साल के अंदर अंतिम न्याय अर्थात सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला मिल जाए. पीढ़ियां गुज़र जाती हैं, न्याय नहीं मिलता. कैसे शासन, प्रशासन की ज़िम्मेदारी तय हो इस पर भी जनता को दबाव बनाना होगा. चाहे मंत्री हो या ज़िले का अधिकारी, समस्या और उसके समाधान के लिए उसे ज़िम्मेदार माना जाना चाहिए.

किसानों की समस्या और अल्पसंख्यकों की समस्या का समाधान अगर नहीं होता, तो देश में भुखमरी की स्थिति पैदा होगी और क़ानून-व्यवस्था की स्थिति बिगड़ेगी. मुसलमानों ने आडवाणी को केवल इस ही कारण वोट नहीं दिया कि वह भाजपा के हैं, बल्कि इसलिए नहीं दिया कि जो व्यक्ति प्रधानमंत्री बनना चाहता है वह कैसे देश के बीस प्रतिशत लोगों के साथ संवाद ही नहीं रखना चाहता, उन्हें विकास की मुख्यधारा में शामिल करने की बात तो बहुत दूर रह जाती है. यही बात कांग्रेस को सोचनी होगी कि वह यह बताए कि उसे इन वर्गों की चिंता है. इन वर्गों को, आम जनता को अपना एक तीन साला एजेंडा बनाना चाहिए और सरकार को देना चाहिए. साथ ही जनता को राष्ट्रीय स्तर पर ऐसी कमेटियां बनानी चाहिए जो सरकार के सौ दिन के एजेंडे को मानीटर करें, उस पर निगाह रखें तथा लोगों को बताएं कि सरकार अपने ही बनाए एजेंडे पर चल भी रही है या नहीं. यह बहुत महत्वपूर्ण है.

एक बात सरकार, कांग्रेस और राजनैतिक दलों से हम कहना चाहते हैं. अब लोग वैसे नहीं रह गए हैं जैसे दस साल पहले थे. संक्रमण काल का यह आख़िरी हिस्सा है और लोग समझने लगे हैं कि अच्छा क्या है और बुरा क्या है. इस बात को भाजपा से ज़्यादा और कांग्रेस से ज़्यादा कौन समझेगा. लोगों की समझदारी बढ़ी है तथा वे भावनात्मक सवालों से पेट के सवालों की ओर मुड़ गए हैं. लोगों का एजेंडा पेट से जुड़े सवालों का बनेगा और सरकार यदि अपने एजेंडे से पेट से जुड़े सवालों की पहचान नहीं करती तो उसे ख़ामियाजा भी भुगतना पड़ेगा.

पहली ज़रूरत यही है कि आम लोग चेतें और अपनी मानिटरिंग कमेटी राष्ट्रीय स्तर पर, प्रदेश स्तर पर और गांव के स्तर पर बनाएं, ताकि सरकार के कामकाज पर निगाह रखी जा सके.

संपादक
editor.chauthiduniya@gmail.com

मनीष कुमार

क्यों भाजपा का एजेंडा चला रहे हैं मनमोहन?

जिस बात का डर था, वही होता नज़र आने लगा है. जीत के नशे में कांग्रेस ऐसे लोगों के बहकावे में आ गई है, जिन्होंने सरकार को भ्रमित करना शुरू कर दिया है. एक बार फिर मनमोहन सिंह अपने 1991 वाले निजीकरण और उदारीकरण की राह पर चल पड़े हैं. वह भी इतने साल बाद, जब इस पर ही सवाल उठने लगे हैं कि क्या निजीकरण और उदारीकरण हमारे देश के लिए उपयुक्त हैं भी या नहीं. हक़ीक़त यह है कि मनमोहन सिंह ने देश की जनता को 1991 में जो सपने दिखाए थे, वे आज चूर-चूर हो चुके हैं. फिर भी सरकार उन्हीं ग़लतियों को दोहराने पर आमादा है, जिसकी वजह से एनडीए सरकार के पैर के नीचे से ज़मीन फिसली थी.

नई सरकार के राज में विनिवेश की गाड़ी पूरी रफ़्तार पकड़ने वाली है. कांग्रेस की सरकार अब वह सब करने वाली है जो पिछली सरकार के दौरान वामदलों के विरोध कारण नहीं कर सकी थी. आने वाले दिनों में केंद्र सरकार के एजेंडे में विनिवेश सबसे ऊपर रहने वाला मसला होगा. मनमोहन सरकार सरकारी कंपनियों में अपनी हिस्सेदारी बेचकर रक़म जुटाने की तैयारी में है. ख़बर तो यह भी है कि सरकार ने नवरतन कही जाने वाली 15 कंपनियों की सूची बना ली है, जिनमें उसकी हिस्सेदारी 90 फीसदी से भी अधिक है. इनमें से 10 कंपनियां मुनाफा दे रही हैं, जबकि पांच कंपनियां घाटे में चल रही हैं. जिन कंपनियों में विनिवेश की बात चल रही है उनमें भारत संचार निगम लिमिटेड, राष्ट्रीय इस्पात निगम, कोल इंडिया, हुडको, ईसीजीसी, भारतीय रेल वित्त निगम, नॉर्थ ईस्ट इलेक्ट्रिक पावर कॉर्पोरेशन लिमिटेड के नाम प्रमुख हैं.

मनमोहन सरकार ने अगले एक साल में सरकारी कंपनियों में हिस्सेदारी बेचकर 10,000 करोड़ रुपये जुटाने की योजना बनाई है. यह योजना न सिर्फ़ महत्वाकांक्षी है, बल्कि यह सरकार की बेचैनी भी दिखाती है. यूपीए सरकार पिछले पांच साल में इतनी बड़ी रक़म नहीं जुटा सकी थी. सरकार की जल्दबाजी का आलम यह है कि विनिवेश का ब्लूप्रिंट और कंपनियों की लिस्ट तैयार हो चुकी है जिनमें सरकार की हिस्सेदारी जल्द से जल्द बेची जा सकती है. सरकार ने बिजली, उर्वरक, जहाजरानी और कपड़ा जैसे अहम मंत्रालयों से उन कंपनियों की सूची सौंपने को कहा है, जिनमें बाज़ार पैसा लगाने के लिए दिलचस्पी दिखा सकता है. सरकार इस बात पर भी सोच रही है कि अगर बाज़ार में हालात सुधरते हैं तो सुयोग्य संस्थागत आवंटन यानी क्वालीफाइड इंस्टीट्यूशनल प्लेसमेंट जैसे विकल्पों पर विचार किया जा सकता है.

राजनीति और बाज़ार में क्या रिश्ता है, यह इस बात से साबित हो गया कि चुनाव परिणाम के आने के बाद 18 मई को अचानक सेंसेक्स 14,284 तक पहुंच गया. सेंसेक्स की ऐतिहासिक उछाल पर किसी भ्रम में आने की ज़रूरत नहीं है. यह देश की आर्थिक स्थिति की दिशा और दशा समझने का कोई मापदंड नहीं है. यह भी अजीब संयोग है कि 1992 में भी बजट पेश होने के बाद ही स्टॉक मार्केट में जबरदस्त उछाल आया था. कुछ साल बाद भी ऐसा ही हुआ था. बजट पेश होते ही सेंसेक्स में उछाल देखा गया. सच्चाई यह भी है कि दोनों ही बार स्टॉक मार्केट में बड़े-बड़े घोटालों की ख़बरें आईं. आशा है कि इस बार कोई घोटाला न हो. मार्केट का खेल निराला है. स्टॉक एक्सचेंज को अपनी उंगलियों पर नचाने वाले भी बहुत हैं. वे अपनी चाल से लोगों को बहकाने में माहिर हैं. उन्हें यह बात अच्छी तरह पता है कि सरकार में इस वक़्त ऐसे लोगों का बोलबाला है जो सरकारी कंपनियों का विनिवेश करना चाहते हैं. उन्हें यह भी पता है कि अगर मार्केट ने नई सरकार के आने पर कोई सिग्नल नहीं दे सका, तो विनिवेश नहीं हो पाएगा. उनकी जेबें नहीं भर सकेंगी. सेंसेक्स में इस बार के उछाल के बाद निवेशकों ने 46 सरकारी कंपनियों में पैसे लगाए.क्या स्टॉक एक्सचेंज का यह खेल वित्त मंत्रालय में बैठकर फैसले लेने वालों के लिए बिछाया गया जाल है या फिर मिलीभगत है? क्या मनमोहन सिंह जैसा अर्थशास्त्री स्टॉक मार्केट के छलावे से अनभिज्ञ हैं? अगर इसके बाद भी सरकार विनिवेश को आगे बढ़ाती है तो कहना पड़ेगा कि सरकार के फ़ैसले स्टॉक एक्सचेंज में बैठे शतरंज के खिलाड़ी तय करते हैं.

इस साल की शुरुआत में दूसरी वेतन समीक्षा समिति ने 59 ईकाइयों के विलय या निजीकरण की सलाह दी थी. मनमोहन सिंह के निशाने पर सबसे पहले ये 59 ईकाई ही हैं, जिनमें सरकारी हिस्सेदारी को बेचा जाएगा. उस वक़्त आने वाले चुनाव की वजह से सरकार ने इन सलाहों को ठंडे बस्ते में डाल दिया था. अब मनमोहन सिंह की सरकार चुनाव जीत चुकी है और वामपंथी प्रभावहीन हो चुके हैं, तो विनिवेश का एजेंडा लागू करने में सरकार को ज़्यादा परेशानी नहीं होने वाली है. सरकार तर्क देगी कि विनिवेश के ज़रिए राजकोषीय घाटा कम करने में मदद मिलेगी, जो 2008-09 में सकल घरेलू उत्पाद का 6 फीसदी से ज्यादा हो चुका है. क्या राजकोषीय घाटा को कम करने का सिर्फ़ विनिवेश ही एक तरीक़ा है? क्या मनमोहन सिंह और उनकी टीम में मौजूद इतने बड़े-बड़े अर्थशस्त्रियों के पास कोई नया तरीक़ा वाकई नहीं है ? क्या कोई नई योजना भी नहीं है? एक तरफ़ मनमोहन सरकार वोट पाने के लिए सरकारी कर्मचारियों का वेतन बढ़ा कर सरकारी ख़ज़ाने पर दवाब बढ़ा देती है. इसके लिए दलील दी गई कि निजी क्षेत्रों के मुक़ाबले सरकारी कर्मचारियों को काफी कम पैसा मिलता है. सरकार ने कर्मचारियों और अधिकारियों की तनख्वाह तो निजी कंपनियों के कर्मचारियों के बराबर कर दी, लेकिन उनको जवाबदेह बनाने में नाकाम रही. अगर ये कंपनियां घाटे में चल रही हैं या ये सही ठंग से काम नहीं कर रही हैं तो इन्हें ठीक करने की ज़रूरत है. क्या सरकार के पास इसका जवाब है कि जब सरकारी अधिकारी इन कंपनियों को चलाते हैं तो घाटा होता है और यही जब निजी हाथों में चले जाती हैं तो लाभ कमाने लगती हैं. अधिकारियों के वेतन बढ़ाने के साथ-साथ उन्हें जवाबदेह भी ठहराया गया होता तो सरकारी कंपनियां भी सुधर जातीं. लेकिन लगता है कि सरकार ही नहीं चाहती है कि उनके कर्मचारी ईमानदारी और जवाबदेही के साथ काम करें. यही वजह है कि सरकारी कंपनियों में मौजूद भ्रष्टाचार और अराजकता को दूर करने के बजाय सरकार ने विनिवेश का आसान रास्ता चुनना पसंद किया है.

मनमोहन सरकार ने अगले एक साल में सरकारी कंपनियों में हिस्सेदारी बेचकर 10,000 करोड़ रुपये जुटाने की योजना बनाई है. यह योजना न सिर्फ़ महत्वाकांक्षी है, बल्कि यह सरकार की बेचैनी भी दिखाती है. यूपीए सरकार पिछले पांच साल में इतनी बड़ी रक़म नहीं जुटा सकी थी. सरकार की जल्दबाजी का आलम यह है कि विनिवेश का ब्लूप्रिंट और कंपनियों की लिस्ट तैयार हो चुकी है जिनमें सरकार की हिस्सेदारी जल्द से जल्द बेची जा सकती है.

सवाल है कि अगर मनमोहन सरकार विनिवेश का एजेंडा वाकई लागू करती है तो यूपीए और एनडीए की सरकार में क्या फ़र्क़ रह जाएगा? एनडीए सरकार ने सरकारी कंपनियों के विनिवेश का काम ज़ोर-शोर से किया था. भारतीय जनता पार्टी ने विनिवेश को इतना महत्वपूर्ण समझ लिया कि उसके लिए एक अलग से मंत्रालय बना दिया. लेकिन पिछली यूपीए सरकार ने उस मंत्रालय को निष्क्रीय कर दिया. अब तो यही लगता है कि मनमोहन सिंह का फ़ैसला सामाजिक विकास या न्याय संगत नहीं था, उन्होंने वामदलों के दबाव में विनिवेश को ठंडे बस्ते में डाला था. गठबंधन की मजबूरी की वजह से विनिवेश मंत्रालय को ख़त्म करके उसे वित्त मंत्रालय के अधीन महज़ एक विभाग के रूप में समेट दिया और विभाग की ज़िम्मेदारी भी एक नौकरशाह को सौंप दी.

विनिवेश से जुड़े आंकड़ों पर ग़ौर करें तो इसमें वामदलों के प्रभाव का असर साफ नज़र आता है. पिछले पांच साल के कार्यकाल में यूपीए सरकार ने विनिवेश के ज़रिए 8,500 करोड़ रुपये जुटाए थे जो अटल बिहारी वाजपेयी सरकार के दौरान जुटाए गए 28,000 करोड़ रुपये से एक-तिहाई रक़म ही थी. 1991 में उदारवादी नीतियों को हवा देने के बाद से केंद्र सरकार ने 31 मई 2008 तक सरकारी कंपनियों में हिस्सेदारी बेचकर 53,423.03 करोड़ रुपये जुटाए हैं. 35,358.01 करोड़ रुपये जहां अल्पमत हिस्सेदारी बेचकर बनाए गए, वहीं 6,334 करोड़ रुपये रणनीतिक बिक्री से आए.

केंद्र में सत्ता के समीकरण बदलते ही विनिवेश मंत्रालय के पुनर्गठन की ज़मीन तैयार हो रही है. सरकार ने जुलाई 2010 तक विनिवेश के ज़रिए 10,000 करोड़ रुपये जुटाने का लक्ष्य तय किया है. अब जब इतनी गंभीरता से विनिवेश की बात चल रही है, तब ज़ाहिर है कि इसके लिए एक मंत्री भी चाहिए होगा. इसलिए विनिवेश मंत्रालय के दोबारा गठन की पूरी तैयारी हो रही है और उम्मीद भी यही करनी चाहिए कि योजना आयोग के उपाध्यक्ष और मनमोहन सिंह के निकटतम मित्र मोंटेक सिंह अहलूवालिया ही इस मंत्रालय की कमान संभालेंगे.

बहरहाल, विनिवेश एक विवादित विषय है. लेकिन एक बात जो समझ में आती है वह यह कि सरकारी कंपनियों पर मंदी का असर सबसे कम हुआ. इतना ही नहीं, कुछ कंपनियों ने तो बेहतर प्रदर्शन भी किया. ऐसे में इन कंपनियों का विनिवेश होता है तो यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा. लगता है कांग्रेस ने जीत का सही आकलन नहीं किया. लोगों ने मनमोहन सिंह सरकार को उन नीतियों के कारण वोट दिए, जिनका पिछले पांच सालों तक सरकार ने पालन किया. कहते हैं कि इंसान की असल पहचान तब होती है, जब वह शक्तिशाली होता है. कुछ आदतें ऐसी होती हैं, जो बदली नहीं जा सकती हैं. जैसे कि जमींदारी चली गई लेकिन जमींदारों की आदत नहीं गई. वे अपनी अय्याशी और वेश्याओं के नाच देखने के लिए ज़मीन बेचने लगे. उसी तरह सरकार भी अपनी आदतों, भ्रष्टाचार और फ़िज़ूलख़र्ची को ख़त्म करने के बजाए सरकारी कंपनियों को बेचने की तैयारी में है. भले ही बेचने का तरीक़ा पहले से अलग हो, लेकिन उससे फ़र्क़ क्या पड़ता है.

manish .chauthiduniya@gmail.com

कम अंकों से नहीं अटकते अवसर

प्रगति प्रज्ञा एक प्राइवेट बैंक में एक अच्छे ओहदे पर काम करती हैं. बारहवीं में कभी सेकेंड डिवीजन आने पर आस-पड़ोस में उनकी ख़ूब किरकिरी हुई थी, लेकिन आज वह दूसरों के लिए मिसाल बन गई हैं. बोर्ड में अच्छे मार्क्स न आ पाने का ग़म तो उन्हें भी बहुत हुआ था, पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और अपने पसंदीदा बैंकिंग क्षेत्र में शार्ट-टर्म कोर्स करके मंज़िल तक पहुंचने की पूरी कोशिश की. यही फ़ैसला प्रगति के लिए सबसे सही साबित हुआ और वह सबकी नज़रों में कामयाब बन गईं. ऐसा ही किस्सा आदित्य का भी है. कम अंक आने की वजह से उसे किसी अच्छे कॉलेज में एडमिशन नहीं मिल सका, तब उसने पत्राचार यानी डिस्टेंस लर्निंग से बीकॉम में दाख़िला ले लिया और साथ ही रिटेल सेक्टर में पार्ट-टाइम नौकरी कर ली. ग्रेजुएशन ख़त्म होते-होते वह करियर का ऊंचा मुक़ाम हासिल कर चुका था. वह कम अंक पाकर भी बेहद ख़ुश और अपने करियर से बेहद संतुष्ट है और कुछ ही साल में सफलता मिलने और सही रास्ता मिल जाने से उसका उत्साह काफी बढ़ा हुआ है.

ये दो उदाहरण इसके सबूत हैं कि कम अंक पाने से सफलता के रास्ते बंद नहीं होते, बल्कि सही फ़ैसला लेकर अपने भविष्य को उज्ज्वल बना सकते हैं.

ज़रूरी नहीं है कि बारहवीं में कम अंक आने की वजह से भविष्य का द्वार बंद हो जाता है या फिर अधिक अंक अर्जित कर लेने भर से ऊंचा मुक़ाम हासिल किया जा सकता है. पिछले कुछ वक़्त से जॉब और करियर के प्रति नज़रिया बदला है. पहले जहां नंबर और बेहतरीन प्रतिशत कैरियर का आधार बनते थे, वहीं अब सफलता की राहें बदल गई हैं. औसत विद्यार्थियों को कम अंक आने से निराश होने की ज़रूरत नहीं रह गई है. प्राइवेट नौकरियों के बहुतायत में आने से अंक से ज़्यादा तवज्जो क्रिएटीविटी को मिलने लगी है. आज कई ऐसे क्षेत्रों का विकास हुआ है जिनकी वजह से नौकरी के अवसर बढ़े हैं. मीडिया, रिटेल, मार्केटिंग, टूरिज़्म, इंटरटेनमेंट, कंस्ट्रक्शन, हॉस्पिटैलिटी, ट्रेवल एंड एयरलाइंस, एक्सपोर्ट इंपोर्ट, डिस्ट्रीब्यूशन एंड डिलीवरी, हेल्थ केयर, होटल व रेस्तरां, इंश्योरेंस, फार्मा, परचेज एंड सप्लाई, बीपीओ व कस्टमर सर्विसेज और कई ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें अधिक नंबरों की ज़रूरत नहीं होती. ऐसे क्षेत्रों में करियर बनाने के लिए शार्ट या लांग टर्म प्रोफेशनल कोर्स करने पड़ते हैं, जिनकी पढ़ाई बहुत मुश्किल नहीं होती है. ऐसे में ज़रूरी है इस बात पर ध्यान देना कि ये शार्ट-टर्म कोर्स कहां से करें. चूंकि ऐसे क्षेत्रों में नौकरी अपनी क़ाबिलीयत और क्रिएटीविटी पर निर्भर करता है, इसलिए नौकरी दिलाने का दावा करने वाले किसी इंस्टीट्यूट के चक्कर में पड़ना बेवकूफी ही साबित होगी. दिल्ली विश्वविद्यालय सहित कई प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों ने ऐसे शॉर्ट टर्म कराने शुरू किए हैं जिनके लिए एंट्रेंस टेस्ट देना होता है. लेकिन ऐसे कई संस्थान हैं जिनमें दाख़िला लिया जा सकता है. ऐसे में ज़रूरी है कि यह ध्यान रखा जाए कि ये विश्वविद्यालय यूजीसी से मान्यता प्राप्त हैं कि नहीं. प्रतिभावान और आर्थिक या सामाजिक रूप से कमज़ोर विद्यार्थी के लिए कोटे का भी सिस्टम है. एक-दो नंबर से पिछड़ते छात्र कोटे से भी कई विश्वविद्यालयों में जगह पा सकते हैं. किसी क्षेत्र में विशेष प्रतिभा रखने वाले छात्रों को भी दाख़िले में मदद मिलती है. दिल्ली विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय व अन्य जगहों पर भी कई तरह के कोटे की व्यवस्था है. इनमें खेल, शहर, सांस्कृतिक गतिविधियों, विशेष क्षमता, पिछड़ी जाति-जनजाति, अनुसूचित समुदाय प्रमुख व अन्य हैं. इनके ज़रिए भी अच्छे कॉलेजों में स्थान पाया जा सकता है.

ध्यान रखने की एक और बात है कि अगर शार्ट-टर्म कोर्स कर रहे हैं तो इन कोर्सों के साथ बारहवीं के बाद डिस्टेंस एजुकेशन के तहत किसी भी विषय में ग्रेजुएशन की डिग्री ज़रूर पूरी कर लें. यह इतना मुश्किल नहीं होता है और न ही कड़ी मेहनत करने की ज़रूरत होती है. इसका फ़ायदा यह है कि यदि आगे चलकर किसी कारणवश कोई परेशानी आने पर ग्रेजुएशन की डिग्री के तहत किसी और काम का चुनाव किया जा सकता है. ग्रेजुएशन की डिग्री अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्य है. इसके अलावा विश्वविद्यालयों द्वारा वोकेशनल कोर्सेस भी कराए जा रहे हैं, जिनमें 10वीं के बाद किसी अच्छे स्कूल में 11वीं-12वीं के लिए दाख़िला न मिलने पर एडमिशन लिया जा सकता है, इसकी पढ़ाई काफी प्रोफेशनल होती है जिसका फ़ायदा आगे की पढ़ाई में होता है. यदि बाद में बीटेक करने को इच्छुक हों तो वोकेशनल कोर्स के बाद प्रथम वर्ष के बजाय द्वितीय वर्ष में एडमिशन मिल जाता है. या फिर वोकेशनल कोर्स के बाद भी जॉब पाया जा सकता है. कुछ छात्र मेडिकल में रुचि होने के बावजूद अंक न आ पाने की वजह से डॉक्टरी नहीं कर सकते हैं, फिर भी इसी क्षेत्र में वे छात्र फीजियोथेरेपिस्ट, ऑक्यूपेशनल थेरेपिस्ट, ऑर्ट्रोमेंटेशन, फार्मेसी, बायोटेक्नोलॉजी, बायो-मेडिसीन, स्पीच थेरेपिस्ट आदि में करियर बना सकते हैं. इनमें पैसा भी बढ़िया कमाया जा सकता है और अपनी रुचि के हिसाब से काम करते हुए जीवन आरामदायक तरीक़े से जिया जा सकता है.

यूजीसी द्वारा जारी की गई फ़र्ज़ी विश्वविद्यालय की राज्यवार सूची

बिहार
- मैथिली विश्वविद्यालय, दरभंगा

दिल्ली
- वाराणशेय संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, उप्र, जगतपुरी , दिल्ली
- कर्मिशयल विश्वविद्यालय लिमिटेड, दिल्ली
- यूनाइटेड नेशंस यूनिवर्सिटी, दिल्ली
- वोकेशनल विश्वविद्यालय, दिल्ली
- एडीआर सेंट्रिक जुडिसीयल विश्वविद्यालय, एडीआर हाउस, 8 जे, गोपाल टावर, 25 राजेंद्र प्लेस, नई दिल्ली

कर्नाटक
- बड़ागंवी सरकार वर्ल्ड ओपन यूनिवर्सिटी एजुकेशन सोसाइटी, गोकाक, बेलगाम, कर्नाटक

केरल
- संत जॉन विश्वविद्यालय, किशनट्टम, केरल
- केसरवानी विद्यापीठ, जबलपुर, मध्य प्रदेश

महाराष्ट्र
- राजा अरेबिक विश्वविद्यालय, नागपुर, महाराष्ट्र

तमिलनाडु
- डी.डी.बी. संस्कृत विश्वविद्यालय, पुटुर, त्रिची, तमिलनाडु

पश्चिम बंगाल
- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ अल्टरनेटिव मेडिसीन, कोलकाता

उत्तर प्रदेश
- महिला ग्राम विद्यापीठ/विश्वविद्यालय (महिला विश्वविद्यालय), प्रयाग, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
- इंडियन एजुकेशन काउंसिल ऑफ यू.पी., लखनऊ, उप्र
- गांधी हिंदी विद्यापीठ, प्रयाग, इलाहाबाद, उप्र
- नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ इलेक्ट्रो कॉम्प्लेक्स होमियोपैथी, कानपुर, उप्र
- नेताजी सुभाष चंद्र बोस यूनिवर्सिटी (ओपन यूनिवर्सिटी), अचालतल, अलीगढ़, उप्र
- उत्तर प्रदेश विश्वविद्यालय, कोसी कलां, मथुरा, उप्र
- महाराणा प्रताप शिक्षा निकेतन विश्वविद्यालय, प्रतापगढ़, उप्र
- इंद्रप्रस्थ शिक्षा परिषद, इंस्टीट्यूशनल एरिया, खोड़ा, मकनपुर, नोएडा, फेज-II, उप्र.
- गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृंदावन, उप्र

विश्वविद्यालय

देश में मौजूद विश्वविद्यालयों को चार भागों में बांटा जा सकता है. ये हैं सेंट्रल यूनिवर्सिटीज, स्टेट यूनिवर्सिटीज, डीम्ड यूनिवर्सिटीज और प्राइवेट यूनिवर्सिटीज.

सेंट्रल : इसकी स्थापना संसद द्वारा पारित किए गए नियमों के आधार पर होती है. देश के 20 ऐसे यूनिवर्सिटीज के फंडिंग और व्यवस्था की ज़िम्मेदारी यूजीसी पर होती है. इनमें दिल्ली विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, जेएनयू, एएमयू इत्यादि हैं.

स्टेट : स्टेट यूनिवर्सिटी की स्थापना राज्य की विधानसभा द्वारा पारित नियमों से होती है. देश में 215 स्टेट यूनिवर्सिटीज हैं. यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, यूनिवर्सिटी ऑफ मद्रास, यूनिवर्सिटी ऑफ मुंबई देश की सबसे पुरानी स्टेट यूनिवर्सिटीज हैं.

डीम्ड : उच्च शिक्षा के ये नामी संस्थान यूनिवर्सिटी तो नहीं होते हैं, पर अपने शानदार शिक्षण रिकार्ड की वजह से इन्हें यूनिवर्सिटी का दर्जा दे दिया जाता है. इसके बाद इन्हें पूरी स्वायत्तता मिल जाती है. ये न सिर्फ़ अपना सिलेबस और कोर्स संरचना ख़ुद करते हैं बल्कि फीस निर्धारण और प्रवेश प्रक्रिया भी ख़ुद बनाते हैं. इस समय लगभग सौ डीम्ड यूनिवर्सिटीज देश में हैं. इनमें प्रमुख हैं नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बेंगलुरू इत्यादि.

प्राइवेट : उच्च शिक्षा के ऐसे संस्थान, जिनकी स्थापना राज्य या केंद्र के क़ानून के तहत किसी स्पॉन्सरिंग बॉडी द्वारा की जाती है वे प्राइवेट यूनिवर्सिटीज कहलाते हैं. ऐसी यूनिवर्सिटीज के पास यूजीसी की मान्यता भी होती है, जिससे इनके द्वारा दी जा रही डिग्री को मान्यता मिलती है. पिलानी स्थित बिड़ला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी को इस श्रेणी में रखा जा सकता है.

रीतिका सोनाली
ritika.chauthiduniya@gmail.com

नैनो टेक्नोलॉजी में बड़ा करियर

नैनो टेक्नोलॉजी यानी नज़र भी न आने वाले आकार की तकनीकी चीज़ों का विज्ञान. 21वीं सदी में यह विषय तकनीकी शोध के सबसे रचनात्मक पहलुओं में से एक बन गया है. ग्रीक भाषा में *नैनो* का अर्थ होता है-बौना. नैनोमीटर माप की बहुत छोटी ईकाई है. एक नैनो माप की चीज़ों की चौड़ाई मानव केश की चौड़ाई से 50,000 गुणा छोटी होती है. नैनो टेक्नोलॉजी का विकास 1959 में अमेरिकन फिजिसिस्ट रिचर्ड पी फेयमैम ने किया था. नैनो टेक्नोलॉजी विज्ञान का एक अनुपम हिस्सा है जो भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव-विज्ञान, इंजीनियरी इत्यादि से मिलकर बना है. नैनो टेक्नोलॉजी दरअसल मॉलीकुलर इंजीनियरिंग से उत्पन्न हुई शाखा है. इन दिनों नैनो टेक्नोलॉजी का कोर्स और व्यापक हो रहा है. नैनो टेक्नॉलॉजी के इस्तेमाल से विज्ञान फलीभूत हुआ है, जिसके ज़रिए रोज़मर्रा की चीज़ों के आकार को छोटा कर जीवन निर्वाह में सहूलियत बढ़ाई जा रही है, चाहे इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स हों या पहनावा-ओढ़ावा, स्वास्थ संबंधी या साज-सज्जा या रहन-सहन का तरीक़ा!

योग्यता-: इस क्षेत्र में करियर बनाने के इच्छुक लोगों को नैनो टेक्नोलॉजी विषय में एम टेक या एमएससी डिग्री हासिल करना आवश्यक है. इसके लिए भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, गणित और जीव विज्ञान में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान या गणित में से किसी के साथ 50 प्रतिशत अंकों से स्नातक होना अनिवार्य है. वैसे छात्र जो नैनो टेक्नोलॉजी में विशेष योग्यता प्राप्त करना चाहते हैं वे मेटेरियल साइंस, मेकैनिकल, बायो-मेडिकल, केमिकल, बायो-टेक्नोलॉजी, इलेक्ट्रॉनिक्स या कंप्यूटर साइंस से बीटेक की डिग्री हासिल कर, नैनोटेक्नॉलॉजी में एमएससी के लिए आवेदन कर सकते हैं. इसके अलावा पंचवर्षीय एमटेक कोर्स के लिए भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, मेटेरियल साइंस, केमिकल, बायो-टेक्नोलॉजी या कंप्यूटर साइंस से एमएससी कर कॉमन एंट्रेंस टेस्ट के लिए आवेदन कर सकते हैं.

कोर्स -: इस कोर्स में पढ़ाई के दौरान इन क्षेत्रों को प्रधानता दी जाती है-:

1. रोज़मर्रा के इस्तेमाल में आने वाली उपभोक्ता वस्तुओं का टिकाऊ, प्रभावी व सस्ता रूपांकन
2. इलेक्ट्रॉनिक चीज़ों की ज़्यादा मज़बूती और बहुआयामी विकल्पों की अभिकल्पन
3. सौर ऊर्जा का ज़्यादा संचार और इसकी ज़्यादा से ज़्यादा उपयोगिता
4. जैनेटिक दवाओं, नैनो टेक्नोलॉजी और विशिष्ट दवाओं का विकास
5. प्राकृतिक विज्ञान का नैनो टेक्नोलॉजी से संबंधित ये कोर्स विद्यार्थियों को विभिन्न तरीक़ों से जीवन के इस्तेमाल में आने वाली विभिन्न चीज़ों का नैनोस्केल पर संरचना करना सिखाते हैं.

संस्थान : हमारे देश में इस तरह के कई संस्थान हैं, जिनमें नैनो टेक्नोलॉजी का कोर्स कराया जाता है.

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, कानपुर, चेन्नई, गुवाहाटी, दिल्ली और मुंबई.
नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी, दिल्ली.
सॉलिड स्टेट फिजिक्स लैबोरेटरी, दिल्ली.
मद्रास विश्वविद्यालय गुंडी, तमिलनाडु, नैनोसाइंस में एमटेक की डिग्री.
जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली.
मौलाना आज़ाद नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, भोपाल, मध्यप्रदेश.
नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, एनआईटी, कुरुक्षेत्र, हरियाणा व राउरकेला, ओड़ीसा.
शास्त्रा विश्वविद्यालय: सेंटर फॉर नैनो टेक्नोलॉजी एंड एडवांस बायोमेट्रिक्स, तंजावुर, तमिलनाडु, कोर्स- नैनोसाइंस व टेक्नोलॉजी में पी.एचडी.
इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस: सेंटर ऑफ नैनो इलेक्ट्रॉनिक्स, बेंगलुरू, कर्नाटक, कोर्स- नैनोटेक्नॉलॉजी में पी.एचडी.

नौकरी के आसार -: नैनोस्केल साइंस व टेक्नोलॉजी क्षेत्र व्यापक हो रहा है. चूंकि इसका असर रोज़मर्रा की दिनचर्या पर पड़ता है, इसी वजह से इस क्षेत्र में नौकरी की संभावनाएं भी काफी हैं. इस क्षेत्र में विकास की बढ़ती संभावनाओं को देखकर काउंसिल ऑफ साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रीयल रिसर्च ने पूरे देश में 38 प्रयोगशालाएं बनाई हैं. जिनके पास नैनो टेक्नोलॉजी में एमएससी डिग्री है उनके लिए इस क्षेत्र में अपार संभावनाएं विकसित हो रही हैं. रोजमर्रा से सरोकार रखने वाले विभिन्न विभाग जिनमें रोजगार की संभावनाएं विकसित हुईं हैं वे निम्नलिखित हैं-:
(1) स्वास्थ, (2) कृषि, (3) पर्यावरण, (4) खाद्यान्न व पेय पदार्थ, (5) अंतरिक्ष व खगोलशास्त्र, (6) वस्तु विकास व प्रचार, (7) प्रशिक्षण व पाठ्यक्रम, (8) विश्वविद्यालयों और निजी अनुसंधान संस्थान में विकास व अनुसंधान, 9 जेनेटिक्स, 10 बायो टेक्नोलॉजी, (11) मीडिया व संचार, (12) फोरेंसिक साइंस व अन्य इनके अलावा विदेशों में भी नैनो टेक्नोलॉजिस्ट की मांग बहुत हो रही है.

वेतनानुमान : शुरुआत में सरकारी सेक्टर में 20,000 से 30,000 रुपये तक मिल सकते हैं. यह रोज़गार का वैसा क्षेत्र है जिसमें वेतन के अलावा पर्क्स और दूसरी सुविधाएं भी ख़ूब मिलती हैं. ख़ास क्वालीफिकेशन, अनुभव और काम को देखकर वेतन 6,00,000 से 12,00,000 सालाना तक मिल सकते हैं. निजी सेक्टर में क्रेन सॉफ्टवेयर इंटरनेशनल लिमिटेड, बेंगलुरू, मोनाड नैनोटेक प्रा. लिमिटेड-मुंबई, वेल्वियो नैनोटेक-बेंगलुरू, क्यूटेक नॅनोसिस्टम प्रा. लि.-बेंगलुरू, इनोवेशंस यूनिफाइड टेक्नोलॉजी, मुंबई जैसे बेहतरीन कंपनियों में इसी तरह अच्छे वेतन के साथ नौकरी पा सकते हैं. इनके अलावा रूस, जापान, चीन, जर्मनी और फ्रांस जैसे बड़े देशों ने इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर निवेश किया है. अमेरिका ने नेशनल स्कीम के तहत 2015 तक एक ट्रिलियन डॉलर और भारत सरकार ने एस एंड टी इनीसीएटिव्स इन नैनो टेक्नोलॉजी के तहत वर्ष 2007 में पांच सालों तक 100 करोड़ रुपए से ज्यादा के निवेश का प्लान जारी किया था.

सबसे ख़तरनाक ख़ुफ़िया संगठन : केजीबी

कौन थे कैंब्रिज फाइव

केजीबी के इतिहास में कैंब्रिज फाइव को उसका सबसे सफल मिशन कहा जा सकता है. द्वितीय विश्वयुद्ध के शुरुआती दिनों से लेकर पचास के दशक तक *कैंब्रिज फाइव* ने रूसी ख़ुफ़िया एजेंसी को कई महत्वपूर्ण जानकारियां दीं. ये पांचों युवक कैंब्रिज में पढ़ने वाले छात्र थे और कम्युनिस्ट विचारधारा से प्रभावित थे. बाद में ये सभी ब्रिटिश ख़ुफ़िया सर्विस से जुड़े और केजीबी के लिए डबल एजेंट का काम करते रहे. सबसे अजीब बात यह रही कि कुछ सालों तक इन डबल एजेंटों को ढूंढ़ने का काम इन्हीं के ज़िम्मे सौंपा गया. बाद में ख़ुलासा हुआ कि किम फिलीबी, डोनाल्ड मैकलेन, एंथनी ब्लंट और गाय बर्गेस इसके सदस्य थे, लेकिन इसके पांचवें सदस्य पर पर्दा पड़ा ही रहा. 1951 में इनके ख़ुलासे के बाद से ही पांचवें सदस्य की खोज चलती रही और ब्रिटेन के ख़ुफ़िया प्रमुख से लेकर तत्कालीन प्रधानमंत्री तक पर कैंब्रिज फाइव का सदस्य होने का आरोप लगा. कैंब्रिज फाइव इतिहास के सबसे बड़े और रोचक जासूसी प्रकरणों में हैं और शायद इसलिए इन्हें कई बार पर्दे पर फिल्मों और धारावाहिकों के तौर पेश किया गया है.

एक नवंबर 2006 को लंदन के यूनिवर्सिटी कॉलेज हॉस्पिटल में एक व्यक्ति आया. अचानक बीमार पड़ने की शिकायत कर रहे उस व्यक्ति की जब डॉक्टरों ने जांच की तो उनके लिए अचरज का ठिकाना न रहा, उस व्यक्ति के शरीर में रेडियो एक्टिव पदार्थ थे और उसका शरीर बड़ी तेज़ी से गल रहा था. उसे बचाने का कोई उपाय नहीं था. महज़ 22 दिन बाद उसकी मौत हो गई. वह व्यक्ति था एलेक्ज़ेंडर लीत्विंको, एक पूर्व रूसी ख़ुफ़िया एजेंट और जब उसकी भयानक मौत के पीछे की कहानी परत दर परत खुली तो एक ऐसा नाम सामने आया जिसने कभी पूरे विश्व को दहला रखा था. वह नाम था–केजीबी.

केजीबी यानी कोमितयेत गोसुदारस्त्वजेनोज बिज़ोपासनोस्ती, या सीधी सादी हिंदी में कहें तो सोवियत राज्य सुरक्षा समिति. लेकिन तीन अक्षरों के इस नाम का सही विस्तार दरअसल रहस्य, ख़ौफ़ और आतंक होगा. अपने समय में केजीबी को विश्व की सबसे ताक़तवर ख़ुफ़िया सर्विस के तौर पर जाना जाता रहा. उसके प्रभाव को इसी से समझा जा सकता है कि अपने अंत के क़रीब 12 साल बाद भी पूर्व सोवियत संघ की इस सीक्रेट एजेंसी का नाम आज भी अंतरराष्ट्रीय ख़ुफ़िया षड्यंत्रों से जुड़ा है. केजीबी अपने असर और नेटवर्क के साथ–साथ अपने काम के तरीक़े के लिए भी मशहूर था. इसमें तो कोई शक़ नहीं कि केजीबी दुनिया की अब तक की सभी ख़ूंख़ार ख़ुफ़िया एजेंसी रही है.

दरअसल 1954 में सोवियत संघ के आंतरिक और बाहरी सुरक्षा और ख़ुफ़िया जानकारी जुटाने के लिए केजीबी को गढ़ा गया. कई छोटे–छोटे सोवियत ख़ुफ़िया संगठनों को मिलाकर बनी केजीबी की पहली सफलता अमेरिकी परमाणु कार्यक्रम में सेंध मारने की थी. अपने सबसे प्रसिद्ध जासूसों *कैंब्रिज फाइव* की मदद से केजीबी ने अमेरिका के परमाणु प्रोजेक्ट में अपने दो जासूस घुसा दिए. केजीबी की इस सफलता ने उसे सोवियत संघ में और मज़बूत बना दिया. धीरे–धीरे केजीबी का काम सोवियत संघ के दुश्मनों के साथ–साथ उसके प्रमुख जोसेफ स्टालिन के दुश्मनों का सफाया करना भी हो गया.

सोवियत ब्लॉक में केजीबी अपने रवैए के कारण आतंक का पर्याय बन गई थी. सोवियत संघ से जुड़े देशों में रूस के ख़िलाफ़ उभरने वाले रोष और इस रोष से पनप रहे संगठनों को केजीबी ने ख़ास निशाना बनाया. व्हाइट आर्मी और तातर विद्रोहियों के ख़िलाफ़ केजीबी की तेज़ मगर क्रूर कार्रवाइयों ने उसे दुनिया की सबसे ख़तरनाक एजेंसी बना दिया. सोवियत ब्लॉक में केजीबी का नाम अब आदर और डर से लिया जाने लगा था.

हालांकि केजीबी अब तक ताक़तवर हो चुकी थी, लेकिन उसके सामने असल चुनौती अब आनी थी. शीत युद्ध के परवान चढ़ते ही अमेरिकी और सोवियत ख़ुफ़िया एजेंसियों में शह और मात का एक खेल शुरू हो चुका था. केजीबी ने इस खेल में आगे रहने के लिए हर हथकंडा अपनाया. यह खेल क़ानूनी और ग़ैर–क़ानूनी सभी तरीकों खेला जाना था. दोनों देश एक–दूसरे के अंदर जासूस भेजने और दूसरे के जासूसों को ख़ुद के साथ मिलाने में लगे रहे. केजीबी ने इस दौरान अमेरिकी ख़ुफ़िया तंत्र में अपना एक बहुत बड़ा जाल तैयार कर लिया. जोएल और एथेल रोसेनबर्ग नाम के दो जासूसों के नेतृत्व में केजीबी ने अमेरिका में अपना जाल फैला रखा था.

उधर सोवियत संघ में राजनीतिक विरोधियों के ख़िलाफ़ केजीबी का इस्तेमाल भी ज़ारी था. हंगरी और पोलैंड जैसे देशों में केजीबी ही कई राजनीतिक मौतों के लिए ज़िम्मेदार रही. निकिता ख़ुश्चेव के समय केजीबी इतनी मज़बूत हो चुकी थी कि उसे सरकार के अंदर की सरकार का नाम दे दिया गया.

इसी दौरान अमेरिकी सीआईए मज़बूत हो रही थी और उसने केजीबी पर शिकंजा कसना भी शुरू कर दिया था. इगोर गोएज़ंको और एलिजाबेथ बेंटली जैसे जासूसों के पाला बदल लेने से केजीबी का पूरा नेटवर्क ख़तरे में था, लेकिन केजीबी के तुरुप के लिए तुरुप के इक्के यानी *कैंब्रिज फाइव* की मदद से केजीबी का सफाया होते–होते रह गया. लेकिन अब उसकी ताक़त आधी रह गई थी. उधर सोवियत ब्लॉक और यूरोप में उसका असर और बढ़ता जा रहा था.

इसी बीच अक्टूबर 1958 में एक घटना हुई जिसने केजीबी के ख़ौफ़ को एक नई ऊंचाई तक पहुंचा दिया. रोमन कैथलिक चर्च के प्रमुख पोप पायस–बारहवें की मौत रहस्यमयी परिस्थितियों में हो गई. पोप अपनी सोवियत और कम्युनिस्ट विरोधी विचारधारा के लिए जाने जाते थे. किसी पोप का पोस्टमार्टम नहीं होता, इसलिए उनकी रहस्यमयी मौत के कारणों का पता नहीं चल पाया. लेकिन ख़ुफ़िया जानकारों के बीच यह फुसफुसाहट तेज़ थी कि इस मौत के पीछे केजीबी थी.

सच जो भी रहा हो, इतना तो तय था कि केजीबी की पहुंच की कोई सीमा नहीं थी. सोवियत संघ के अलावा दुनिया में कम्युनिस्ट सरकारों वाले देशों में उसे दूसरी सरकार का दर्जा मिला हुआ था. केजीबी अब दुनिया की सबसे शक्तिशाली एजेंसी थी.

लेकिन समय के साथ सोवियत संघ का सूरज डूबा और साथ में केजीबी का भी, राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचोव की उदार नीतियों से ख़फ़ा केजीबी ने उनकी सत्ता पलटने की असफल कोशिश की और यही उसकी आख़िरी भूल रही. हालांकि 1991 से ही केजीबी को ठंडे बस्ते में डाल दिया गया था, लेकिन 1995 में उसे आधिकारिक तौर से ख़त्म कर दिया गया. इसी के साथ सबसे मिथकीय ख़ुफ़िया संगठन दुनिया से समाप्त हो गया. यह दूसरी बात है कि अभी भी गाहे–बगाहे केजीबी का नाम ख़ुफ़िया गलियारों में सुनने को मिल ही जाता है.

आख़िर क्यों हो रहे हैं भारतीयों पर हमले?

क्या कसूर था मेरे बेटे का? आस्ट्रेलिया के एक अस्पताल में घायल पड़े श्रवण कुमार के पिता का सवाल जितना सीधा है, उसका जवाब देना उतना ही मुश्किल है. सच में क्या कसूर था श्रवण का, किसलिए उसे बुरी तरह पीटा गया? क्या महज़ इसलिए कि वह भारतीय था? उसका रंग भूरा था या उसकी ग़लती बस यह थी कि वह एक ऐसे देश से ताल्लुक रखता था जिसकी हैसियत तीसरी दुनिया के देश की है?

श्रवण के पिता सवाल पूछने वालों में अकेले नहीं हैं. ऐसी घटनाओं की शिकायतें पहले भी आती रही हैं, लेकिन इस बार यह मीडिया और लोगों की नज़रों में आ गया है. इस बार तो अमिताभ बच्चन ने भी श्रवण के ऊपर हुए हमले के विरोध में आस्ट्रेलिया के एक विश्वविद्यालय द्वारा दी जा रही डॉक्टरेट की मानद उपाधि नहीं लेने का फ़ैसला किया है.

इस तरह के हमले कतई नए नहीं हैं. दुनिया के विभिन्न हिस्सों में भारतीयों या भारतीय मूल के लोगों के ख़िलाफ़ हिंसा की वारदातें आम हैं. केवल आस्ट्रेलिया में ही पिछले एक साल में 100 से अधिक भारतीय छात्रों पर हमले हो चुके हैं. इस बार भारतीय क्रिकेटर हरभजन सिंह के भतीजे उपकार सिंह की भी आस्ट्रेलिया में हत्या कर दी गई. वह भी वहां एक छात्र के तौर पर ही रह रहा था. भारतीय छात्रों के साथ मार–पीट और अन्य घटनाएं ब्रिटेन, अमेरिका सहित अधिकतर पश्चिमी देशों में होती रही हैं. हाल में ही भारतीय डॉक्टर हनीफ़ मोहम्मद के ऊपर लगा आतंकवाद का आरोप भी कहीं न कहीं उनके रंग से और भारतीय मुसलमान होने से ही जुड़ा था. अमेरिका से अक्सर भारतीय छात्रों के मारे जाने की ख़बर आती रहती है. इन सबसे विदेश में रहने वाले भारतीयों और पढ़ने वाले छात्रों में असुरक्षा का भाव है.

सोचने वाली बात यह है कि आख़िर ऐसी स्थिति क्यों है? ऐसी स्थिति बनने के पीछे हम और हमारी सरकार ही ज़िम्मेदार है. हम भारतीय दुनिया की उभरती महाशक्ति होने का दावा तो करते हैं, लेकिन हमारे आमजन पूरी तरह से शक्तिहीन हैं. मुद्दा चाहे भारत के अंदर सुरक्षा का हो या बाहर, पता नहीं क्यों हमारी सरकार को कड़े रुख़ से परहेज रहता है. लगातार हमलों के बीच भी सरकार ने मज़बूत पहल नहीं की. इस तरह के हर हमले के बाद ऐसी घटनाओं से बचने के लिए छात्रों को सलाह–मशविरे दिए जाते हैं, लेकिन जिन देशों में ऐसे हमले हुए होते हैं वहां की सरकारों को भारत की ओर से कभी कड़े संकेत कतई नहीं दिए जाते. शायद हम और हमारी सरकार अभी भी अपनी औपनिवेशिक हीनभावना से उबर नहीं पाए हैं. सरकार को समझने की ज़रूरत है कि भारत अब साधारण देश नहीं रह गया है. भारतीय छात्रों के दम पर आस्ट्रेलिया जैसे देशों की शैक्षिक अर्थव्यवस्था चलती है. इतना ही नहीं, भारतीय छात्र दुनिया में सबसे ज़्यादा फीस देने वालों में हैं. दूसरे देशों को हमारी ज़रूरत है, न कि हमें उनके अहसानों की. भारत सरकार को समझना चाहिए कि अब वक़्त आ गया है कि हाथ पर हाथ धरे रहने के बजाय ऐसे देशों को कड़ी चेतावनी दी जाए और हमारे छात्रों की सुरक्षा सुनिश्चित करानी चाहिए. अगर ऐसा नहीं होता है तो राजनयिक संबंध तोड़ने जैसे विकल्पों पर विचार अवश्य होना चाहिए. आस्ट्रेलिया की सरकार को भी ऐसी घटनाओं के ख़िलाफ़ ठोस क़दम उठाने ही पड़ेंगे तभी अंतरराष्ट्रीय समुदाय में उसकी इज़्ज़त बनी रहेगी. आस्ट्रेलिया की सरकार को यह समझना चाहिए कि उसके लिए भारतीय छात्र काफी अहम हैं. साथ ही उसे ऐसी हिंसा के ख़िलाफ़ अपने क़ानूनों को और कड़े करने होंगे. अगर भारतीय छात्रों से कमाए जा रहे सालाना दो करोड़ डॉलर को बचाना है तो आस्ट्रेलिया को ठोस पहल करनी होगी. केवल बयानबाज़ी से अब काम नहीं चलने वाला.

... तो कायरों की तरह जीता है श्रीलंका !

श्रीलंका में तमिलों के ख़िलाफ़ सेना के तमाम जुल्मो–सितम के सच सामने आ गए हैं. निश्चय ही यह सच बीस हज़ार तमिलों के शवों के बीच विजय पताका लहराने वाले श्रीलंका के राष्ट्रपति राजपक्षे और उनकी सेना के प्रमुख फोंसेका के पक्ष में नहीं है. लंदन के अख़बार ने जो खुलासे किए हैं, वे अगर सच हैं तो यह भारत के लिए भी शर्मनाक घटना मानी जानी चाहिए. इसलिए कि संयुक्त राष्ट्र महासचिव बान की मून के स्टाफ प्रमुख के रूप में भारत के पूर्व राजनयिक विजय नांबियार काम कर रहे हैं और उन्हें तमिलों के नरसंहार के बारे में पता था और उन्होंने यह जानकारी विश्व समुदाय से गुप्त रखी. इसलिए विश्व बिरादरी अगर इस पूरे मामले की जांच की मांग कर रही है तो यह जांच हो ही जानी चाहिए. यह विशुद्ध रूप से मानवाधिकार हनन का मामला है, जिसकी इजाज़त किसी को भी नहीं मिलनी चाहिए. श्रीलंका सरकार को समझना चाहिए कि सुरक्षित क्षेत्र में निहत्थों के ख़िलाफ़ बहादुरी दिखाना मानवता के ख़िलाफ़ सबसे बड़ी कायरता मानी जाती है. यह ठीक है कि इस मामले में श्रीलंका का पक्ष भी सुना जाना चाहिए. श्रीलंका के विदेश मंत्री रोहित बोगोल्लागामा अगर यह कहते हैं कि तमिल विद्रोहियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई के दौरान नागरिक क्षेत्रों में भारी हथियारों के प्रयोग नहीं किए गए, तो वह सही हो सकते हैं. लेकिन जब तक जांच नहीं होती, तब तक किसी भी पक्ष की बात कैसे मानी या ख़ारिज़ की जा सकती है? दूसरे, जब श्रीलंका मानवाधिकारों के उल्लंघन के आरोपों की जांच स्वयं करना ही चाहता है, तो लगे हाथ इसमें अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों को भी शामिल कर लेने की समझदारी क्यों नहीं दिखाता. इस बारे में विदेश मंत्री बोगोल्लागामा का कहना है कि श्रीलंका एक स्वतंत्र और संप्रभु राष्ट्र है, जिसके अपने क़ानून हैं और अपनी न्यायपालिका है. वह इसे मनगढ़ंत बात मानते हैं कि श्रीलंका सेना ने तथाकथित सुरक्षित क्षेत्र में भारी हथियारों के प्रयोग किए. उनके मुताबिक, इस तरह के आरोप सरकार और सेना को केवल ग़लत ठहराने के लिए लगाए जा रहे हैं. लेकिन मानवाधिकार संगठनों का कहना है कि श्रीलंका के पूर्वोत्तर में भारी ख़ून–ख़राबा हुआ है. ऐसा नहीं है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकारी इसे सच नहीं मानते. वे मानते हैं, लेकिन उनके अनुसार विद्रोहियों के नियंत्रण वाले क्षेत्र में सरकारी सेनाओं के अंतिम सैनिक अभियान में लगभग सात हज़ार नागरिक ही मारे गए. उधर, लंदन में *टाइम्स* ने यह संख्या बीस हज़ार के आसपास कही है. एमनेस्टी इंटरनेशनल ने तो युद्ध अपराध जांच के लिए मदद बढ़ाने के लिहाज़ से संयुक्त राष्ट्र से अनुमानित आंकड़ा तक जारी करने को कहा है. एमनेस्टी इंटरनेशनल के एशिया प्रशांत निदेशक सैम जरीफ़ी ने कहा कि *टाइम्स* की पड़ताल एक जांच की वकालत करती है और संयुक्त राष्ट्र को इस सच के लिए सब कुछ करना ही चाहिए. बहरहाल, यहां सवाल सात हज़ार या 20 हज़ार की संख्या का ही नहीं, संयुक्त राष्ट्र की साख का भी सवाल है. उस पर श्रीलंका के मामले में सच छिपाने का आरोप लग रहा है. *टाइम्स* अख़बार के मुताबिक 23 मई को संयुक्त राष्ट्र महासचिव बान की मून के दौरे के लिए तैयारी की जानकारी देते समय संयुक्त राष्ट्र के अधिकारियों ने मून के स्टाफ प्रमुख विजय नांबियार को बताया था कि उनके पास जो प्रमाण हैं वे 20 हज़ार से अधिक लोगों के मारे जाने की आशंका की ओर संकेत देते हैं. ऐसे में अगर इस जानकारी को सचमुच जानबूझ कर छिपाया गया है, तो देर–सबेर इसकी आंच भारत पर भी आएगी ही. इसलिए कि लड़ाई के अंतिम चरण में बान की मून ने मध्यस्थता करने के लिए विजय नांबियार को कोलंबो भेजा था. लेकिन वह ख़ाली हाथ लौट आए, जिसके बाद मानवाधिकार हनन के आरोपों को दरकिनार कर तमिलों के ख़िलाफ़ हमले तेज़ करने के लिए श्रीलंका को अंतरराष्ट्रीय समुदाय से अनौपचारिक तौर पर हरी झंडी मिल गई. ग़ौरतलब है कि भारतीय विदेश सेवा में रहे नांबियार भारत सरकार में सुरक्षा सलाहकार की भूमिका निभा चुके हैं और उनके भाई सतीश नांबियार श्रीलंका सेना के सुरक्षा सलाहकार हैं. इसलिए यह सवाल उठेगा ही कि क्या संयुक्त राष्ट्र एक बार फिर शांति प्रक्रिया में अंतरराष्ट्रीय राजनीति का शिकार हुआ है? यह बड़ा सवाल है, जिसका छोटा जवाब देकर बचने की कोशिश नहीं करनी चाहिए.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मदद के नाम पर धूल झोंक रहा है अमेरिका

अक़्दस वहीद

अमेरिकी संसद के विदेश मामलों की समिति ने पाकिस्तान को आर्थिक सहायता के लिए दी जाने वाली रक़म में तीन गुना वृद्धि करते हुए मामले को अमेरिकी संसद के दोनों सदनों में बहस के लिए भेज दिया है. वहां से स्वीकृति मिलने के बाद लगभग 1.5 बिलियन डॉलर की सहायता राशि पाकिस्तान को अगले पांच साल तक अमेरिका द्वारा दी जाएगी. इस सहायता राशि को अमेरिकी कांग्रेस की मंज़ूरी से पांच साल से अधिक समय के लिए बढ़ाया भी जा सकता है.

अमेरिकी सीनेटर जॉन केरी और रिचर्ड लौगर के सर्वदलीय प्रस्ताव से तैयार किए गए इस विधेयक में पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता के लिए जो शर्तें रखी गई हैं, वह किसी भी लोकतांत्रिक देश के लिए शर्मसार करने वाली हैं. वहीं जॉन केरी इस बात का भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचार कर रहे हैं कि उनके प्रस्ताव में पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता राशि में किसी तरह की कोई शर्त नहीं रखी गई है. लेकिन वास्तविकता यह है कि इस विधेयक में अमेरिकी संसद द्वारा कई ऐसे प्रस्ताव दिए गए हैं जो किसी भी देश के लिए अपमानजनक हैं और जिन पर ग़ौर करना ज़रूरी है.

सबसे पहले तो अमेरिका इस प्रस्ताव और मदद की धनराशि के ज़रिए दुनिया भर को यह बताना चाहता है कि वह पाकिस्तान की जनता का हितैषी है और इतनी बड़ी धनराशि तो वह पाकिस्तान की जनता के बेहतर और सुरक्षित जीवन के लिए दे रहा है. यह अपने आप में हास्यास्पद है. सहायता धनराशि के इस प्रस्ताव को सदन में भेजते हुए अपनी प्रेस कॉफ्रेंस में समिति ने कहा कि इस क़ानून को बहुत ही सघनता से पारित करना होगा और इसे समय-समय पर ऑडिट भी करते रहना होगा. जिसके लिए समिति का तर्क है कि वह पाकिस्तान की जनता का हितैषी है और वह यह सुनिश्चित करना चाहती है कि इस सहायता धनराशि का सीधा फ़ायदा पाकिस्तान की जनता को मिले, जिसके लिए वह दी जा रही है. इसके ज़रिए अमेरिकी सरकार पाकिस्तान की जनता को क्या यह संदेश देना चाहती है कि पाकिस्तान सरकार और न्यायिक व्यवस्था नागरिकों के हितों को नहीं समझती. क्या पाकिस्तानी नागरिकों को उसका हक़ दिलाने को अब विदेशी सरकार अपना कर्तव्य मानेगी और वह अब पाकिस्तान सरकार की भूमिका में इस कदर आ जाएगी कि वह नागरिकों का नुमाइंदा बन जाए?

वहीं इस क़ानून की असलियत कुछ और ही कहानी बयान करती है. इस सहायता के पीछे अमेरिकी शर्तों पर ग़ौर करें तो तस्वीर ख़ुद-ब-ख़ुद साफ हो जाती है. अमेरिका चाहता है कि पाकिस्तान सरकार अमेरिकी जांच दल को इस बात की खुली छूट दे कि वह उन लोगों पर नज़र रख सके जो दुनिया भर में नाभकीय शस्त्रों की ख़रीद- फ़रोख्त में लिप्त हो सकते हैं. लिहाजा पाकिस्तान सरकार अमेरिकी ख़ुफ़िया एंजेंसी को पाकिस्तान में अपना नेटवर्क फैलाने की इजाज़त दे. अमेरिका चाहता है कि पाकिस्तान सरकार ऐसे लोगों को देश के बाहर यात्रा करने पर पाबंदी लगाए, जो भविष्य में किसी अन्य देश को न्यूक्लियर टेक्नोलॉजी बेच सकते हैं. विधेयक में इस संदर्भ का साफ मतलब है कि अमेरिका एक बार फिर से पाकिस्तान में एक हीरो की भूमिका अदा करने वाले ए. क्यू ख़ान पर शिकंजा कसना चाहता है.

इस विधेयक का दूसरा आपत्तिजनक पहलू पाकिस्तान को आतंकवाद को बढ़ावा देने वाले देशों की कतार में खड़ा करने का है. इस विधेयक के ज़रिए अमेरिकी सरकार चाहती है कि वह पाकिस्तान की आर्थिक और सैन्य मदद इसलिए करे, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पाकिस्तान ऐसे लोगों या समूहों की मदद नहीं कर रहा है जो पड़ोसी मुल्कों में आतंकवाद को चला रहे हैं. लिहाजा इस शर्त के ज़रिए अमेरिका यह साबित करना चाहता है कि पाकिस्तान सरकार अफ़ग़ानिस्तान और भारत में आतंकवाद को संचालित करता है और उसे अब यह बात क़बूल करके इस तरह के सभी संगठनों पर लगाम कसने और उन्हें ख़त्म करने की ज़रूरत है. अमेरिका चाहता है कि आज जब उसकी ख़ुद की नीतियों के चलते आतंकवाद दुनिया भर के लिए ख़तरा बन चुका है, ऐसे में वह सारी ज़िम्मेदारी पाकिस्तान के सिर पर डाल सके और तालिबान व अलक़ायदा जैसे संगठनों का पाकिस्तान से सीधा तार जोड़ सके. अमेरिकी कोशिश है कि वह दुनिया भर को यह साबित कर दे कि पाकिस्तान आज आतंकवादियों के लिए एक स्वर्ग बन चुका है. लिहाजा आतंक के ख़िलाफ़ उसकी जंग में पाकिस्तान एक बड़ा ख़तरा है, जिससे निपटने के लिए पूरी दुनिया को एक साथ होना ज़रूरी है.

इस विधेयक में यह भी प्रावधान है कि पाकिस्तानी सैनिकों को अमेरिकी ट्रेनिंग दी जाए. इस ट्रेनिंग प्रोग्राम में उन पाकिस्तानी सैनिकों को शामिल करने की बात है जो पाकिस्तान के न्यूक्लियर टेस्ट के बाद प्रतिबंध के चलते अमेरिका से ट्रेनिंग नहीं ले पाए. इसके ज़रिए अमेरिका चाहता है कि पाकिस्तानी सेना में वह अपनी पैठ सीधे तौर पर बना सके और ज़रूरत पड़ने पर देश की चुनी हुई लोकतांत्रिक सरकार को अलग करते हुए वह आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध में सेना से सीधे संपर्क में रह सके. इस विधेयक में यह भी साफ है कि अमेरिका को दी जाने वाली सैनिक सहायता सीधे तौर पर पाकिस्तान में आतंकी गतिविधियों को ख़त्म करने, आतंक के नेटवर्क का सफाया करने और वह भी तब दी जाए जब पाकिस्तान अपनी तरफ़ से इस आतंकी नेटवर्क को पूरी तरह समाप्त कर दे.

इन सभी शर्तों पर सावधानी पूर्वक ग़ौर करें तो साफ है कि इस विधेयक में कई ऐसी बातें कही गई हैं जो किसी भी पाकिस्तानी के लिए शर्मनाक है और वह किसी क़ीमत पर अमेरिका की इन शर्तों को मानने के लिए तैयार नहीं होगा. विधेयक की कुछ बातें सीधे पाकिस्तान को कठघरे में खड़ी करती हैं. इसमें एक साज़िश की बू आती है, जिसके तहत अमेरिका पाकिस्तानियों को आतंकवादी और आतंकवादियों के लिए एक सुरक्षित पनाहगार घोषित करना चाहता है. वे यह साबित करना चाहते हैं कि पाकिस्तान के राजनीतिज्ञों और सरकारी अफसरों पर भरोसा नहीं किया जा सकता. इसके साथ ही वे पाकिस्तान के कुछ अहम लोगों को देशद्रोही भी साबित करना चाहते हैं, जबकि देश की जनता उन्हें अपना मसीहा मानती है. मसलन, अमेरिका चाहता है कि वह एक बार फिर से डॉ. ए. क्यू. ख़ान पर अपना शिकंजा कसे और उनके ऊपर साफ तौर पर निगरानी रखे. सवाल यह उठता है कि अगर अमेरिका पाकिस्तान में इस कदर दखलंदाज़ी कर सकता है तो क्या हमारे हुक्मरानों को अमेरिका द्वारा इज़राइल को किए जा रहे न्युक्लियर टेक्नोलॉजी ट्रांसफर पर सवाल नहीं उठाना चाहिए या फिर ख़ुद अमेरिका को इस मामले में अपनी सफाई दुनिया के सामने नहीं रखनी चाहिए?

इन शर्तों के साथ अगर अमेरिका पाकिस्तान को आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध में मदद करना चाहता है तो यहां सवाल यह उठता है कि पाकिस्तान कैसे आतंकवादियों की चपेट में आ गया? क्या इसके लिए अमेरिका की नीतियां और अफ़ग़ानिस्तान में जारी नाटो का युद्ध कारण नहीं है? क्या इसके लिए अमेरिकी ड्रोन मिसाइलों का पाकिस्तान के रिहाइशी इलाक़ों पर गिराया जाना ज़िम्मेदार नहीं, जिसमें हज़ारों बेगुनाह पाकिस्तानी मारे जा रहे हैं. जबकि इस बात को ख़ुद अमेरिकी विदेश मंत्री हिलेरी मान चुकी हैं कि पाकिस्तान की इस हालत के पीछे तीस साल की अमेरिकी नीतियां ज़िम्मेदार हैं.

अफ़ग़ानिस्तान में अमेरिका के फैलाए आतंक और फिर उसके ख़ात्मे की कोशिश के चलते आज पाकिस्तान का नॉर्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रोविंस और क़बाइली इलाक़े आतंकवादियों का अड्डा बन चुके हैं. इस अंतरराष्ट्रीय समस्या से लड़ने के लिए पाकिस्तानी सेना मोर्चा संभाले हुए है. अब तक के इस युद्ध में हज़ारों पाकिस्तानी सैनिक और अफसर अपनी जान गंवा चुके हैं. क्या इन सैनिकों की क़ुर्बानी इसलिए है कि अमेरिका पाकिस्तानी सेना पर सवाल खड़ा करे और उस पर आतंकवादियों के साथ सांठगांठ का आरोप लगाए?

वहीं इस युद्ध का शिकार पाकिस्तानी नागरिक बन रहे हैं. लाखों की संख्या में आज पाकिस्तानी नागरिक अपना सब कुछ गंवा कर शरणार्थी कैंपों में रहने के लिए आ रहे हैं. इस युद्ध के चलते पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था आज चरमरा चुकी है. इन सबके बावजूद अमेरिका को पाकिस्तान एक आतंक को पनाह देने वाला देश लगता है.

अपने हज़ारों सिपाहियों की जान को दांव पर लगाकर और लाखों नागरिकों की जिंदगी को ख़तरे में डालकर जो देश आतंक के ख़िलाफ़ इस युद्ध में अपनी भूमिका अदा कर रहा है, क्या उसके लिए ऐसे शब्द सही हैं और क्या उस पर मुसीबत की इस घड़ी में ऐसी शर्तें लागू करने को उचित ठहराया जा सकता है? क्या दुनिया के तमाम देश महज़ तमाशा देखते रहेंगे और पाकिस्तान को अपनी समस्याओं से ख़ुद ही निज़ात पाना होगा? हमारी अमेरिका के साथ-साथ उन सभी देशों से अपील है कि उन्हें अपनी ग़लती के अहसास मात्र से कुछ नहीं होगा और अपनी ग़लतियों को पाकिस्तान के सिर मढ़ने से समस्या ख़त्म होने के बजाए और बढ़ ही सकती है. तालिबान के ख़िलाफ़ जारी इस जंग के इतिहास को देखा जाए तो इससे पहले भी जब-जब पाकिस्तान ने तालिबान के ख़िलाफ़ कार्रवाई की है, तालिबान और शक्तिशाली और आक्रामक तेवर के साथ उभरा है.

लिहाजा पाकिस्तान की आर्थिक मदद के साथ-साथ उन लाखों लोगों के पुनर्वास को प्राथमिकता देनी होगी जो सीधे तौर पर आतंक के ख़िलाफ़ इस पश्चिमी युद्ध से प्रभावित हो रहे हैं. आज इस युद्ध में वह घर-बार सहित अपनी रोजी-रोटी के लिए दर-दर भटक रहे हैं, और अगर उन्हें जल्द पाकिस्तान सरकार और अंतरराष्ट्रीय समुदाय से मदद नहीं दी गई तो उनके सामने एक तरफ़ भूख, लाचारी और बेबसी होगी और दूसरी तरफ़ एक ऐसी उम्मीद, जो इन्हें अपने पेट के लिए किसी भी रास्ते पर जाने को मजबूर कर देगी.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सभी फोटो- *पीटीआई*

अमेरिकी सीनेटर जॉन केरी और रिचर्ड लौगर के सर्वदलीय प्रस्ताव से तैयार किए गए इस विधेयक में पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता के लिए जो शर्तें रखी गई हैं, वह किसी भी लोकतांत्रिक देश के लिए शर्मसार करने वाली हैं. वहीं जॉन केरी इस बात का भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचार कर रहे हैं कि उनके प्रस्ताव में पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता राशि में किसी तरह की कोई शर्त नहीं रखी गई है.

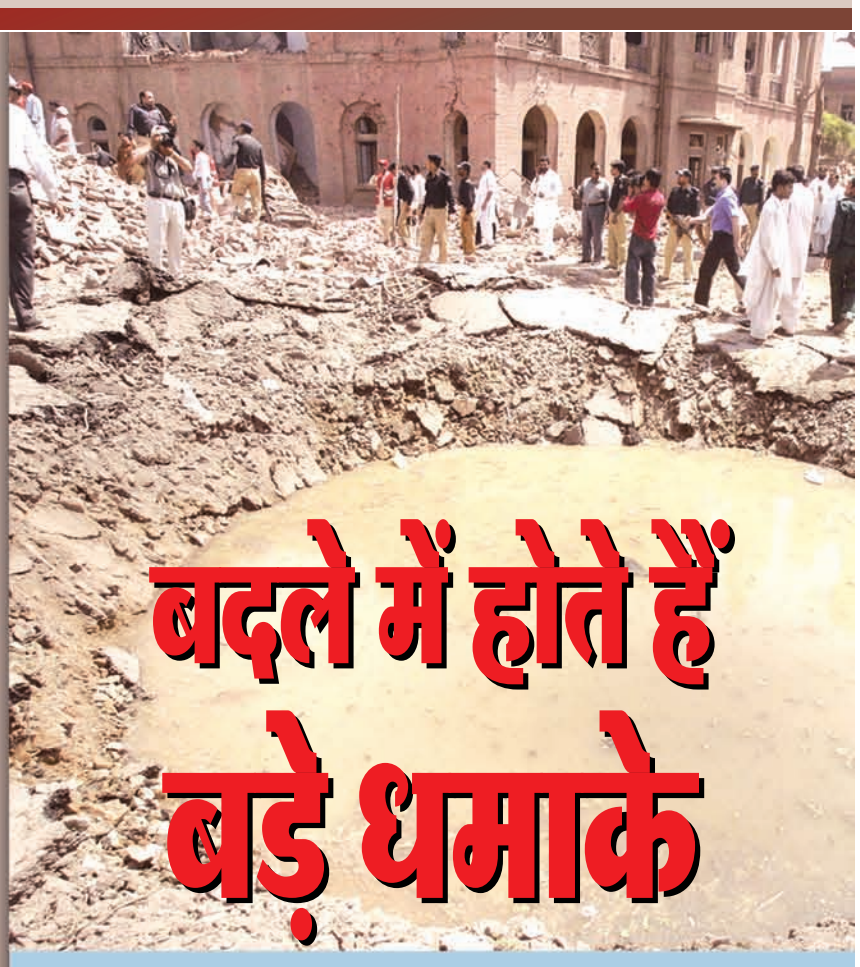

बदले में होते हैं बड़े धमाके

ऐतिहासिक शहर लाहौर में बीती 27 मई को हुए धमाके से आतंकवादियों ने पाकिस्तान सरकार को साफ चेतावनी देने की कोशिश की है कि वह अमेरिका के इशारे पर की जा रही कार्रवाई बंद करे. चेतावनी को प्रभावकारी बनाने के लिए ही हमलावरों ने पाकिस्तान की प्रमुख ख़ुफ़िया एजेंसी आईएसआई के मुख्यालय को चुना, जिसकी भूमिका इस अभियान में सबसे अहम है.

हमले की ज़िम्मेदारी लेने वाले तहरीक-ए-तालिबान ने धमकी दी है कि अगर अभियान को बंद नहीं किया गया तो इस तरह के और भी ख़तरनाक धमाकों से पाकिस्तान का हर शहर गूंज उठेगा. आईएसआई बिल्डिंग के सामने हुए धमाके में एक पुलिस स्टेशन, एक इमरजेंसी कॉल सेंटर के साथ-साथ आज़ादी से पहले की एक महत्वपूर्ण मार्केट की पुरानी सड़क और वहां मौजूद एक पेट्रोल पंप पूरी तरह ध्वस्त हो गए. इस हमले में 30 लोग मारे गए, जिनमें ज़्यादातर पाकिस्तानी सुरक्षा और ख़ुफ़िया कर्मी थे. सौ से भी ज़्यादा लोग घायल हो गए. हमले को अंजाम देने के लिए सौ किलो विस्फोटक का इस्तेमाल किया गया. आतंकियों के मंसूबे का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि विस्फोटक से भरी कार में धमाके करने से ठीक पहले उस पर सवार चार आतंकवादी एके-47 राइफलों से हमला करने के लिए गाड़ी से उतर गए और धमाके के साथ-साथ कई लोगों को गोलियों का शिकार बना लिया.

आईएसआई बिल्डिंग के बाहर तैनात गार्ड ने जवाबी गोलीबारी की, लेकिन वे कार में हुए धमाके की चपेट में आ गए. इसके चलते दो ख़ुफ़िया अधिकारी के साथ-साथ छह गार्डों की भी मौत हो गई.

लाहौर स्थित डिफेंस एक्सपर्ट हसन अस्कर रिज़वी का मानना है कि सरकार को तालिबान की तरफ़ से स्वात कार्रवाई के विरोध में हमले की आशंका पहले से थी. लेकिन सरकार को इतने ज़्यादा विस्फोटक के साथ हमले को अंजाम दिए जाने की उम्मीद नहीं थी. वहीं पाकिस्तान सेना से रिटायर हुए जनरल और डिफेंस एक्सपर्ट तलत मसूद का कहना है कि तालिबान पहले की ही तरह सुरक्षा एजेंसी और ख़ुफ़िया तंत्र को निशाना बना रहा है और पाकिस्तान को और भी अधिक सतर्क रहने की ज़रूरत है. मसूद का कहना है कि तालिबान अगले कुछ दिनों में और भी ठिकानों पर इससे बड़े हमले को भी अंजाम देने की ताक में है.

ग़ौरतलब है कि इसी साल मार्च में पंजाब प्रोविंस के सबसे बड़े और पुराने शहर लाहौर में, जिसे मुल्क की कल्चरल राजधानी कहा जाता है, में तालिबान दो बड़ी आतंकी वारदातों को अंजाम दे चुका है. सबसे पहले श्रीलंका की क्रिकेट टीम पर हमला किया गया, जो दुनिया भर में चर्चित हुआ और पाकिस्तान की अंतरराष्ट्रीय साख को करारा झटका लगा. वहीं महीने के अंत में लाहौर पुलिस एकेडमी पर तालिबानी कमांडो के दस्ते ने हमला किया. पुलिस अकादमी पर हुए हमले की ज़िम्मेदारी वजीरिस्तान स्थित तहरीक-ए-तालिबान के प्रमुख बैतुल्लह मेहसूद ने ली थी. हमलों की जांच कर रही पंजाब पुलिस का मानना है कि तालिबान ने पंजाब के क्षेत्रीय आतंकवादी संगठनों के साथ तालमेल कर इन हमलों को अंजाम दिया है. पुलिस का इशारा ख़ास तौर पर लश्कर-ए-जंघवी की तरफ़ है, जिसकी शुरुआत तो धार्मिक कट्टरपंथ के लिए की गई थी, लेकिन बाद में वह अलक़ायदा के प्रभाव में आ गया. अफ़ग़ानिस्तान में पाकिस्तान के राजदूत रहे रुस्तम शाह का मानना है कि पहले के आतंकी हमलों की जांच में हुई लापरवाही का नतीजा है कि आतंकवादी आसानी से किसी भी जगह को अपना निशाना बना लेते हैं.

इसके साथ ही पाकिस्तान का कमज़ोर प्रशासनिक ढांचा भी ऐसे हमलों को रोक पाने में नाकाम रहता है. स्वात में तालिबान के ख़िलाफ़ इस अभियान के शुरू होते ही जिस तरह से तालिबान ने हमले करने शुरू किए हैं उससे पाकिस्तान प्रशासन के सामने सबसे बड़ी समस्या सेना के अगले पड़ाव की घेराबंदी को लेकर है. ग़ौरतलब है कि सेना अब स्ताव और मिंगोरा के अधिकांश इलाक़ों को अपने क़ब्ज़े में करने के बाद वजीरिस्तान का रुख़ करने की तैयारी कर रहा है. वजीरिस्तान पाकिस्तान का वह इलाक़ा है जहां तालिबानियों ने सबसे अधिक आत्मघाती दस्तों के लिए भर्तियां की हैं. ऐसे में वजीरिस्तान की तरफ़ पाक सेना के रुख़ से यह भी कयास लगाए जा रहे हैं कि आत्मघाती हमले अचानक बढ़ सकते हैं. वहीं दूसरी बड़ी समस्या जो पाकिस्तान सेना के लिए तैयार हो रही है, वह यह कि जिन इलाक़ों में तालिबानियों के साथ संघर्ष चल रहा है, वहां से कई तालिबानी लड़ाके ख़ुद अपने हथियार छोड़ कर शरणार्थी कैंपों में चले गए हैं. वहीं कई लड़ाकों ने अपने परिवारों को सुरक्षित माने जा रहे इन शिविरों में भेज दिए हैं. सेना को आशंका है कि आम जनता के बीच छिपे ये लड़ाके किसी भी वक़्त पलटवार कर सकते हैं और वह मोर्चे पर तालिबानियों के लिए ख़ुफ़िया जानकारी भी जमा कर सकते हैं.

इन हालात में पाकिस्तान के तालिबान के ख़िलाफ़ चलाए जा रहे अभियान में काफी फूंक-फूंक कर क़दम रखना होगा. पाकिस्तानी सेना के लिए तालिबानियों से मोर्चा संभालने के अलावा आम नगरिकों की जानमाल की रक्षा करना भी है.

अक़्दस वहीद

feedback.chauthiduniya@gmail.com

अफ़ग़ानी तालिबान पाकिस्तानी तालिबान

नईमा परवेज़

स्वात, बुनेर और दीर में पाकिस्तानी फौज के ऑपरेशन ने अपना असर दिखाना शुरू कर दिया है. 27 मई को लाहौर और 28 मई को पेशावर और डेरा इस्माइल ख़ान में तालिबान ने बदले की कार्रवाई करते हुए चार सुसाइड हमलों में 40 लोगों को मौत के घाट उतार दिया. फौज की कार्रवाई में अब तक 25 लाख लोग बेघर हो चुके हैं और यह संख्या बढ़ती ही जा रही है. उधर पाकिस्तान के राष्ट्रपति आसिफ अली ज़रदारी और फौज के आला अफ़सरों ने दक्षिणी वजीरिस्तान में आर्मी ऑपरेशन शुरू करने के इशारे दिए हैं, और अगर यह सही है तो आने वाले दिनों में बेघर होने वालों की संख्या 40 लाख से अधिक हो जाने की संभावना है. पाकिस्तान में तालिबान के ख़िलाफ़ शुरू होने वाली इस कार्रवाई के बारे में आम तौर से यह सोचा जाता है कि ये सभी तालिबान 1994 में अफ़ग़ानिस्तान में उभरने वाले तालिबान का एक अंग हैं. लेकिन इस विषय को गंभीरता से देखने के बाद पता चलता है कि अफ़ग़ानिस्तान में उभरने वाले तालिबान और पाकिस्तान में पैदा होने वाले तालिबान का परिप्रेक्ष्य अलग-अलग हैं. अफ़ग़ानिस्तान में सोवियत संघ के ख़िलाफ़ अमेरिका के निर्देश पर पाकिस्तान ने बहुत से अफ़गान ग्रुपों और अरब से लाई गई सोवियत विरोधी तत्वों को इकट्ठा कर जिहाद का ऐलान किया था. अमेरिका ने पाकिस्तान के दक्षिणी और उत्तरी वजीरिस्तान, मोहमंद, बाजौर और खैबर में इन मुजाहिदीनों के लिए ट्रेनिंग सेंटर बनाए और उन्हें हर तरह की सुविधा प्रदान की गई. सोवियत संघ की अफ़ग़ानिस्तान से वापसी के बाद ये सभी ग्रुप अफ़ग़ानिस्तान में एक स्थिर सरकार बनाने पर सहमत नहीं हो सके और वहां गृह युद्ध शुरू हो गया. उधर पाकिस्तान में सोवियत फौज की वापसी तक क्लाशिनिकोव कल्चर फैल चुका था. दो ताक़तवर अफ़गानी जिहादी नेताओं-गुलबुद्दीन हिकमतयार और अहमद शाह मसूद-ने भी आपस में तलवारें खींच लीं और कुल मिला कर अफ़ग़ानिस्तान अराजकता में डूब गया. हालात इतने ख़राब थे कि अफ़ग़ानिस्तान जाने वाला कोई भी वहां हर 10 किलोमीटर पर लगे किसी एक जिहादी ग्रुप के बैरियर पर पैसा दिए बिना आगे नहीं जा सकता था. अफ़ग़ानिस्तान में अराजकता के इस माहौल में स्पिन बोल्डॉक में रहने वाले एक ग्रुप ने देश में शांति स्थापित करने के इरादे से 1994 में तालिबान की बुनियाद रखी और पहला काम यह किया कि स्मगलरों और अराजकता फैलाने वाले तत्वों का सफाया शुरू कर दिया. उनकी इस कार्रवाई ने अफ़ग़ानिस्तान के लोगों में उनकी धाक बैठा दी और धीरे-धीरे लोगों ने इस आंदोलन से जुड़ना शुरू कर दिया. पाकिस्तान में उस समय बेनज़ीर भुट्टो की सरकार थी और फौज के एक रिटायर्ड जनरल, नसीरुल्लाह बाबर उनके गृह मंत्री थे. पाकिस्तान को उस समय अफ़ग़ानिस्तान में अपने हितों की रक्षा के लिए एक ग्रुप की ज़रूरत थी और तालिबान में उन्हें वह क्षमता दिखाई दी. बाबर ने अमेरिकी ऑयल कंपनी के एक प्रतिनिधि और बाद में राजदूत बनने वाले रॉबर्ट ओकले के साथ तालिबान के नेता मुल्ला उमर से मुलाक़ात की और उनको हर तरह का संरक्षण देने का वादा किया. इस मुलाक़ात के कुछ ही समय बाद पाकिस्तानी फौज ने तालिबान को अपनी अमूल्य संपत्ति समझना शुरू कर दिया. तालिबान ने धीरे-धीरे पूरे अफ़ग़ानिस्तान को न केवल अपने कंट्रोल में कर लिया, बल्कि किसी हद तक शांति भी स्थापित कर दी. तालिबान की 1994 से लेकर 1997 तक की सभी कार्रवाइयों को अमेरिकी और पाकिस्तानी समर्थन प्राप्त था. अमेरिका की यह भी सोच थी कि अगर ज़रूरत पड़ी तो तालिबान आने वाले दिनों में ईरान के ख़िलाफ़ भी इस्तेमाल किए जा सकेंगे. अमेरिका से तालिबान के ताल्लुकात एक अमेरिकी तेल और गैस कंपनी को ठेका देने के मामले पर ख़राब हुए. उस वक़्त की अमेरिकी सहायक विदेश मंत्री रॉबिन राफेल अफ़ग़ानिस्तान में मुल्ला उमर के साथ नियमित संपर्क में थी और इस ठेके को लेकर उन्होंने मुल्ला उमर पर दबाव डाला. मुल्ला उमर ने किसी भी दबाव को निरस्त करते हुए वह ठेका अर्जेंटीना की एक कंपनी को दे दिया. यही वह कारण है, जिसके चलते तालिबान और अमेरिका में ठन गई और यही वजह थी कि पाकिस्तान में नवाज़ शरीफ़ की 1997 में बनने वाली सरकार से भी तालिबान के संबंध ख़राब हो गए. यह है पृष्ठभूमि अफ़गानी तालिबान के बनने और बिगड़ने की. बाद में क्या हुआ, वह एक अलग कहानी है.

पाकिस्तानी तालिबान के उभरने के परिप्रेक्ष्य बिल्कुल अलग हैं और उसे अफ़ग़ानी तालिबान का विस्तारित रूप समझना ग़लत होगा. पाकिस्तानी तालिबान कोई एक संगठित या संयोजित ग्रुप नहीं है, बल्कि यह 2004 में पाकिस्तानी फौज के दक्षिण वजीरिस्तान में होने वाले ऑपरेशन के बाद सामने आया, जब क़बाइली नौजवानों ने प्रतिक्रिया में फौज पर हमले शुरू कर दिए. बैतुल्लाह मेहसूद अपने आप को तहरीक-ए-तालिबान का अगुआ कहते हैं लेकिन उनके अपने इलाक़े में क़ारी जैनुद्दीन मेहसूद का ग्रुप उनके ख़िलाफ़ है. एक अनुमान के अनुसार बैतुल्लाह मेहसूद के पास लगभग 20 हज़ार लड़ाके हैं, जबकि इसी इलाक़े में मौलवी नाज़िर के पास भी 10 हज़ार लड़ने वाले जवान हैं. मौलवी नाज़िर के लड़ाके अहमदज़ई वज़ीर हैं और केवल यही ग्रुप अफ़ग़ानिस्तान के अंदर भी कार्रवाई करने में सक्षम है. यही वजह है कि अमेरिका द्वारा किए जाने वाले हमलों का निशाना भी अधिकतर यही ग्रुप रहा है. उत्तरी वजीरिस्तान में मौलाना सादिक़ नूर और हाफ़िज़ गुल के पास भी दस हज़ार के लगभग लड़ाके हैं. यहां जलालुद्दीन हक़्क़ानी का ग्रुप भी मौजूद है और उनके बेटे नसीरुद्दीन और बदरूद्दीन स्थानीय पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान में नाटो और अमेरिकी फौज के ख़िलाफ़ कार्रवाइयां करते हैं. बाजौर एजेंसी में मौलवी फक़ीर मोहम्मद और ज़िया उर रहमान के लड़ाकों की संख्या लगभग पांच हज़ार है. दारा आदम खेल के इलाक़े में मौलाना तारीक़ और खैबर में मौलवी हकीमुल्लाह का संबंध बैतुल्लाह मेहसूद ग्रुप से है. खैबर में मंगल बाग़ ने लश्कर-ए-इस्लाम नाम का ग्रुप बनाया, जिसे सरकारी मदद भी मिलती रही है. इस ग्रुप के मुखिया हाजी नामदार को बैतुल्लाह मेहसूद के लोगों ने मार दिया था. मोहम्मद में उमर ख़ालिद का ग्रुप सूबा सरहद के पूर्व मुख्यमंत्री आफताब शेरपाओ और आवामी नेशनल पार्टी के नेता असफंदयार वली पर हुए हमलों के लिए ज़िम्मेदार समझा जाता है. यह ग्रुप अफ़ग़ानिस्तान में विदेशी फौजों के ख़िलाफ़ लड़ने के बजाय पाकिस्तान में होने वाली लड़ाई को जिहाद समझता है. ओरकाकज़ाई में क़ारी शकील का ग्रुप बैतुल्लाह मेहसूद का समर्थक है, लेकिन यहां हदरी तालिबान के नाम से एक शिया ग्रुप भी मौजूद है जो क़ारी शकील के ख़िलाफ़ है. खुर्रम एजेंसी में हज़ारों लड़ाकों की मेहदी मिलिशिया भी मौजूद है, जो तालिबान के ख़िलाफ़ है लेकिन इसका असर सिर्फ़ पारा चिनार के आस-पास है. उत्तरी और दक्षिणी वजीरिस्तान में इन लड़ाकों के कम से कम छह महत्वपूर्ण ग्रुप मौजूद हैं जो फौजी ऑपरेशन के चलते एकजुट होने का फ़ैसला कर चुके हैं. इन सभी ग्रुपों का एजेंडा और पृष्ठभूमि स्वात के तालिबान से बिल्कुल अलग है. स्वात में फ़ैज़लुल्लाह के साथ लड़ने वालों की संख्या पांच हज़ार से ज़्यादा नहीं है. इन पांच हज़ार लोगों के ख़िलाफ़ शुरू होने वाले फौजी ऑपरेशन ने लगभग 25 लाख लोगों को बेघर कर दिया है. अब अगर इन सभी इलाक़ों में आर्मी ने ऑपरेशन शुरू किया तो इससे दो गुने लोग अपना इलाक़ा छोड़ने पर मजबूर होंगे. इतनी बड़ी संख्या में लोगों के बेघर होने के बाद पाकिस्तान के हालात क्या होते हैं, यह कहना मुश्किल है लेकिन जानकारों के अनुसार आसार अच्छे नहीं हैं न सिर्फ़ पाकिस्तान के लिए, बल्कि पूरे दक्षिण एशिया के लिए.

अफ़ग़ानिस्तान में सोवियत संघ के ख़िलाफ़ अमेरिका के निर्देश पर पाकिस्तान ने बहुत से अफ़गान ग्रुपों और अरब से लाई गई सोवियत विरोधी तत्वों को इकट्ठा कर जिहाद का ऐलान किया था. अमेरिका ने पाकिस्तान के दक्षिणी और उत्तरी वजीरिस्तान, मोहमंद, बाजौर और खैबर में इन मुजाहिदीनों के लिए ट्रेनिंग सेंटर बनाए और उन्हें हर तरह की सुविधा प्रदान की गई.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ज़रा हट के

नए नासा प्रमुख से होगी बहुत उम्मीद

दुनिया की सबसे उन्नत अंतरिक्ष एजेंसी को नया मुखिया मिल गया है. अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने जनरल चार्ल्स बोल्डन को अमेरिका की राष्ट्रीय अंतरिक्ष एजेंसी (नासा) का नया प्रमुख नियुक्त किया है. बोल्डन पूर्व अंतरिक्ष यान कमांडर हैं और चार बार अंतरिक्ष में जा चुके हैं. बोल्डन नासा के 50 साल के इतिहास में पहले अश्वेत प्रमुख होंगे. चार्ल्स बोल्डन, रिचर्ड टूली के बाद ऐसे दूसरे नासा प्रमुख होंगे जो अंतरिक्ष यात्री रह चुका हो. परेशानियों से जूझ रही नासा के सर्वोच्च पदों पर पूरा बदलाव करते हुए राष्ट्रपति बराक ओबामा ने लोरी ग्रोवर को बोल्डन के बाद यानी नंबर दो के रूप में नियुक्त किया है. नासा के इन नए प्रमुखों के सामने कई बड़ी चुनौतियां हैं. नासा की उपयोगिता और काम के तौर-तरीक़ों की हाल के समय में बहुत आलोचना हुई है. ऐसे में बोल्डन की सबसे बड़ी चुनौती नासा के भविष्य को लेकर फैली अनिश्चिताओं को ख़त्म करने की होगी. इसके अलावा उन पर नासा के बजट को नियंत्रित करने, अन्य अंतरिक्ष एजेंसियों से सहयोग बढ़ाने और अंतरिक्ष शिक्षा के प्रसार की ज़िम्मेदारी भी होगी. नासा के सामने चांद पर जाने वाली पहली एज़ेंसी की चालीस साल पुरानी इमेज से आगे बढ़ने की चुनौती है और उम्मीद है बोल्डन के आने से नासा और विश्व के अंतरिक्ष कार्यक्रमों में सकारात्मक परिवर्तन बढ़ेगा.

चालीस फीसदी और बढ़ेगा कार्बन प्रदूषण

ग्लोबल वार्मिंग के लिए सबसे ज़्यादा ज़िम्मेदार गैस कार्बन डाई-ऑक्साइड की दर 2030 तक चालीस फीसदी और बढ़ जाएगी. अमेरिकी सरकार की एक रिपोर्ट के मुताबिक ,अगर वातावरण में कार्बन की बढ़ती दर रोकने के कारगर और जल्द उपाय नहीं किए गए तो आने वाले सालों में यह डेढ़ गुना तक बढ़ सकता है. इस रिपोर्ट में कहा गया है कि अगले दो दशकों में कार्बन की दर और बढ़ेगी क्योंकि विश्व आर्थिक मंदी से उबरने की कोशिश में जुटा होगा. इतना ही नहीं, कार्बन छोड़ने के सबसे अधिक ज़िम्मेदार भारत और चीन जैसे देश होंगे. हालांकि इस दौरान ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों जैसे पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा और जलीय ऊर्जा का प्रयोग बढ़ेगा, लेकिन ये स्रोत विकास कर रही अर्थव्यवस्थाओं के लिए काफी नहीं होंगे. इसलिए ऊर्जा के पुराने स्रोतों पर दबाव और बढ़ेगा. ऐसे में यह ज़रूरी है कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन पर ख़ास नज़र रखी जाए. अमेरिकी सरकार कांग्रेस में एक ऐसा प्रस्ताव लाने की सोच रही है जिससे ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन को अगले दल सालों में 20 फीसदी तक और 2050 तक 80 फीसदी तक कम किया जा सकता है. इस रिपोर्ट में भविष्य में तेल के दामों में भी अस्थिरता की भविष्यवाणी की गई है. तेल की क़ीमतों का बढ़ना-घटना विश्व की राजनीतिक और आर्थिक सेहत पर बड़ा असर डालता है.

औरतों से कमज़ोर हैं पुरुष!

यह तो सदियों पुरानी बहस है कि आख़िर पुरुषों और महिलाओं में मज़बूत और कमज़ोर कौन है. इज़राइल के रॉबिन मेडिकल सेंटर के वैज्ञानिकों की मानें तो इस होड़ में महिलाएं आगे हैं. यहां के वैज्ञानिकों का दावा है कि उनका रिसर्च यह साबित करता है कि मर्द कमज़ोर हैं. दरअसल नवजात बच्चों की सेहत और जन्म का अध्ययन कर ये वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि नवजात लड़के, लड़कियों के मुक़ाबले संक्रमण और बीमारियों के शिकार ज़्यादा आसानी से बन जाते हैं. इसके अलावा उनके जन्म में भी परेशानी होने का ख़तरा ज़्यादा रहता है. इसके अलावा, बड़े होने पर भी पुरुषों में महिलाओं के मुक़ाबले बीमारियों का ख़तरा अधिक रहता है. साथ ही बीमारी से उबरने की क्षमता के मामले में भी महिलाएं ही आगे हैं. सीधे कहें तो महिलाएं ज़्यादा मज़बूत हैं. हमारे समाज में लड़कों को ज़्यादा मजबूत समझा जाता है और इसीलिए उनपर ज़्यादा दवाब भी होता है. इसी वजह से वे ज़्यादा जोख़िम उठाते हैं और शारीरिक श्रम भी करते हैं, लेकिन इसका यह अर्थ कतई नहीं है कि वे ज़्यादा मजबूत हैं.

भारतीय मूल की काव्या ने जीती स्पेलिंग बी

प्रतिभा में भारत कही कोई जवाब नहीं है. इसे सही स्पेलिंग के मामले में भारतीयों की उपलब्धियों ने फिर साबित किया है. तभी तो लगातार तीसरे साल ऑल-अमेरिकी स्पेलिंग बी प्रतियोगिता में भारतीय मूल के बच्चों ने जीत दर्ज़ की है. इस साल भारतीय मूल की काव्या शिवशंकर ने लगभग एक करोड़ अमेरिकी बच्चों को पछाड़ कर यह प्रतियोगिता जीती. पिछले साल भी एक भारतीय समीर मिश्रा ने यह ख़िताब जीता था.इस साल स्पेलिंग बी के सेमीफाइनल में पहुंचे 41 बच्चों में से 14 भारतीय मूल के थे. आख़िरी तीन फाइनलिस्टों में भी दो भारतीय थीं. काव्या के साथ भारतीय मूल की ऐश्वर्या और अमेरिकी टिम रूइटर बचे थे. आख़िरी राउंड में काव्या ने लाओडिसियन शब्द की सही स्पेलिंग बताकर ख़िताब जीत लिया. वैसे स्पेलिंग बी में भारतीय बच्चों का जीतना अब एक आम बात हो गई है. काव्या पिछले दस सालों में यह प्रतियोगिता जीतने वाली सातवीं भारतीय मूल की छात्रा हैं. दरअसल भारतीय मूल के अमेरिकी घरों में इस तरह की प्रतियोगिताओं के लिए बच्चों को बहुत तैयारी कराई जाती है. बच्चों पर भी इस तरह की प्रतियोगिता जीतने का भारी दबाव रहता है. भारतीय परिवारों में यह दबाव शायद अमेरिकी समाज में एक जगह बनाने की कोशिश है. वजह जो भी हो, लेकिन इतना तो तय है कि स्पेलिंग के मामले में भारतीयों ने अपनी श्रेष्ठता साबित कर दी है.

वारशिप बन गई चट्टान

समुद्र में खड़ी एक चट्टान और उस पर दूर-दूर से आकर टकराती लहरें, यह नज़ारा बेहद ख़ूबसूरत होता है. साथ ही ऐसी चट्टानों के आसपास समुद्री जल जीवन का एक विशाल संसार विकसित होता है. लेकिन बढ़ते प्रदूषण और अत्यधिक मछली पकड़ने के कारण यह जलजीवन अब तबाह होता जा रहा है, समुद्र में ऐसी प्राकृतिक भित्ति (रीफ) चट्टानें अब कम होती जा रही हैं. घटती चट्टानों की कमी को पूरा करने का वैज्ञानिकों ने एक नया उपाय निकाला है. यह उपाय है कृत्रिम रीफ बनाने का इस उपाय के तौर पर ही अमेरिकी वैज्ञानिकों ने मैक्सिको की खाड़ी के तट पर एक विशाल अमेरिकी वारशिप को डुबो दिया है. कभी अमेरिकी नौसेना का लड़ाकू जहाज रहा यूएसएनएस जनरल होयट एस. वैनडनबर्ग अब समुद्र में एक नई ड्यूटी पर तैनात रहेगा. इस डूबे हुए जहाज को एक कृत्रिम रीफ के रूप में विकसित करने की कोशिश हो रही है. वैज्ञानिकों का मानना है कि इससे समुद्री जीवों को एक नया ठिकाना मिलेगा. इससे बचे हुए प्राकृतिक रीफ पर दवाब भी कम होगा. इस काम के लिए कई बेकार हो चुकी वारशिप का अध्ययन किया गया था, लेकिन अपनी घुमावदार पाल और आकार के कारण वैनडनबर्ग ने बाज़ी मार ली. वैसे इसके चयन में इस बात का भी योगदान रहा कि वाइरस नाम की एक फिल्म में भी यह वारशिप नज़र आया था.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

जतन के धनी हैं जतिन दास

प्रदीप कुमार

मौजूदा दौर के बेहद सुलझे हुए चित्रकार जतिन दास हर रोज़ अपने स्टूडियो में किसी न किसी कलाकृति पर काम करते रहते हैं. कलाकृतियों की रचना प्रक्रिया को समझने की कोशिश में जुटे रहते हैं. इसके लिए दुनिया भर की कलात्मकता का विस्तृत अध्ययन करते हैं. इतना ही नहीं, इन सबके बाद भी वह कुछ अलग करने के लिए वक़्त निकाल ही लेते हैं. अपने गृह राज्य उड़ीसा में जतिन दास को सेंटर ऑफ आर्ट्स को स्थापित करने के लिए काफी समय देना होता है. इसके अलावा लाह की कलाकृतियों के संकलन के लिए भी जतिन के पास समय होता है. क़रीब 6500 से अधिक भारतीय पंखों का उनका संकलन तो दुनिया भर में मशहूर हो चुका है. अब उसे वह दिल्ली सरकार की मदद से म्यूजियम का रूप देने में जुटे हैं. विभिन्न कला विश्वविद्यालयों में व्याख्यान देने के लिए समय देना होता है. जतिन इतना सब कुछ कर रहे हैं, वह भी 67 साल की उम्र में. कहीं कोई थकान नहीं. यह अहसास भी नहीं कि अब बहुत हुआ. क्योंकि हर पल कुछ न कुछ करने की बेचैनी उनमें हमेशा रहती है. समकालीन दौर में भारतीय फोटोग्राफी को एक नई ऊंचाई देने वाले रघु राय बीते 40 सालों से जतिन दास को इसी रूप में तल्लीन देखते हैं. ख़ुद रघु राय के लिए फोटोग्राफी उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम है, लेकिन वह जतिन दास के बारे में यही बात दावे से नहीं कह पाते. ललित कला अकादमी के कार्यक्रम-कला पर कलाकार-में वह जतिन दास से पूछ बैठते हैं- मुझे आपकी कला में एक दोहराव का बोध होता है, ऐसा लगता है कि रोज़-रोज़ काम करने से ही यह दोहराव हो रहा है. ऐसे में आप रोज़ाना क्यों कलाकृति बनाते हैं? क्यों नहीं एक दिन कह देते हैं कि अब कुछ दिन-महीने कोई कलाकृति नहीं बनानी? ये सवाल किसी कलाकार को विचलित कर सकते हैं, लेकिन जतिन दास इन सवालों का जवाब ख़ुद नहीं तलाश पाए हैं. वह कहते हैं-मैं तो बस ब्रश उठाता हूं और कैनवस पर काम शुरू कर देता हूं. जब तक कलाकृति पूरी नहीं होती, अंदर एक बेचैनी रहती है. मुझे इसका भी अहसास नहीं हो पाता है कि यह पिछली कलाकृति से कितनी अलग है और कितनी मिलती-जुलती है. यह सिलसिला पिछले 50 सालों से जारी है. यानी जतिन दास के लिए कहीं कलाकृति बनाना कोई रूटीन तो नहीं बन गया? यह सवाल रघु राय के मन में भी उठता है. वह पूछते हैं-जतिन, आप कलाकृति बनाने से पहले कोई थीम नहीं सोचते, कुछ नया करना है, यह विचार नहीं आते? क्या कलाकृति बनाने से पहले कोई रूपरेखा आपके दिमाग़ में नहीं होती? दरअसल ये सवाल कलाकार के अंदर से कुछ निकालने की कोशिश है. जतिन इसके जवाब में कहते हैं-कलाकृति बनाने से पहले कोई रूपरेखा दिमाग़ में नहीं होती. हां, बनाना शुरू करते ही अपने आप ब्रश और दिमाग़ चलने लगते हैं. वैसे भी जतिन की पहचान थिमेटिक कलाकार की नहीं रही है. वह किसी थीम और सब्जेक्ट पर काम करने में दिलचस्पी नहीं दिखाते, बल्कि उनकी कोशिश हमेशा एक कॉनसेप्ट पर कलाकृतियां बनाने की रही हैं.

हालांकि इतने सक्रिय होने के बावजूद नौ साल बाद उनकी पहली प्रदर्शनी-अर्थ बाडीज़ या मिट्टी के जीव-नई दिल्ली में पिछले दिनों लगी. तैल, एक्रॉलिक और वाटर कलर्स से बने चित्र और कोंटे (चाक) से बने रेखाचित्रों की यह प्रदर्शनी इंडिया हैबिटेट सेंटर में नौ दिनों तक चली. इस बाबत जतिन कहते हैं-अपने देश में आजकल सब कुछ जल्दी में निपटाने का चलन है, तो इसका असर कला बाज़ार पर भी पड़ा है. वैसे यही प्रदर्शनी जब यूरोप में लगेगी तो दो-तीन महीने तक चलेगी. अपनी इस प्रदर्शनी के बारे में जतिन कहते हैं कि वह प्रदर्शनियों को ध्यान में रखकर कलाकृति नहीं बनाते. लेकिन काफी लंबा अरसा गुज़र जाने के कारण ही उन्होंने प्रदर्शनी लगाई.

जतिन दास के काम का विषय अब तक आकृति परक और खासकर मानवाकृतियां रही हैं. वह अपनी कला पर ज़्यादा कुछ कहने से बचने की कोशिश करते हैं. काफी कुरेदने पर कहते हैं- मैं अपने चित्रों में मनुष्यों के दर्द, उनकी पीड़ा, उनकी बदहाली, उनके गुस्से को चित्रित करने की कोशिश करता हूं, लेकिन आप उसे परिभाषित नहीं कर सकते हैं. इसलिए कि मेरे विचार से थीम पर पेंटिंग नहीं होती, बल्कि आप एक कॉनसेप्ट के तहत चित्रांकन करते हैं. अर्थ बाडीज या कहें मिट्टी के जीव नामक इस प्रदर्शनी में तैल चित्र और एक्रॉलिक तो ध्यान खींचते ही हैं लेकिन नज़रें रेखांकन पर जाकर ठहरती हैं. जतिन कहते हैं, रेखांकन अपने आप में पूरी पेंटिंग होती है. कला प्रेमियों में भी रेखांकन को लेकर कहीं ज़्यादा उत्सुकता देखने को मिली है. प्रदर्शनी में एक रेखांकन है-ज्ञानी. काले चाक से बने रेखांकन में मानवकृति के ज्ञानी होने का प्रतिबिंब हर कोण से झलकता है. एक-एक रेखा बारीक और प्रभावी दिखती है. एक रेखांकन है-शक्ति. नाम से ही ज़ाहिर है कि इसमें शक्ति का भाव प्रदर्शित होता है. श्वेत बैकग्राउंड में मैरून रेखांकन, हाथ की उंगलियों तक का अंकन जतिन के काम की बारीकी को दर्शाते हैं.

जतिन की एक वाटर कलर्स पेंटिंग है-जुनून. पूरा चित्र गहरे कत्थई रंग का बना है. उस पर काली और मैरून रेखाओं से मानवाकृति के अंगों को इंगित किया गया है. जुनून एक हद तक सनक को भी कहते हैं. यह चित्र एक जुनूनी के मनोभाव को पूरी तरह बताने में सफल रहा है. वाटर कलर्स से अपने लगाव के बारे में वह कहते हैं कि पिछले 12 सालों से वाटर कलर्स में लगभग रोज़ काम कर रहा हूं. ख़ास बात यह है कि वह अपने वाटर कलर्स पेंटिंग के लिए एसिड फ्री पेपर का उपयोग करते हैं. एक्रॉलिक कलाकृतियों में वह मानवीय हावभाव को शिद्दत से उकेर पाने में कामयाब रहे हैं. दुख, विरह, उत्सुकता, स्तब्धता इत्यादि मनोभावों को चित्रित करने वाली उनकी कलाकृतियां चमत्कृत करती हैं. उनकी इन कलाकृतियों में मिट्टी का प्रयोग कहीं अधिक हुआ है. मिट्टी के कहीं हल्के तो कहीं गहरे रंगों का बाहुल्य उनकी इस प्रदर्शनी में बख़ूबी दिखता है. कहीं गुलाबी मिट्टी तो कहीं काली मिट्टी. इन तमाम कलाकृतियों में त्रिआयामी आभास उत्पन्न होता है. बिल्कुल एक मंजे हुए शिल्प की तरह. इस बार उनके चित्रों में रेखांकन भले कम दिख रहे हों, लेकिन हर चित्र में एक लयात्मक गतिशीलता अवश्य दिखती है.

जतिन बताते हैं कि वह न्यूडनेस की मानसिकता से कलाकृति नहीं बनाते हैं. वह तो बस ईश्वर की काया को चित्रित करते हैं. हालांकि उनके चित्रों में महिलाएं और पुरुष दोनों ही नग्न रूप में चित्रित होते हैं.

इस बार भी जतिन के चित्रों में न्यूडनेस अपनी जगह क़ायम है. कला की दुनिया पर नज़र रखने वाले लोगों को याद होगा-2007 में मुंबई में जब जतिन ने *बाडी एंड लाइन* नाम से एकल प्रदर्शनी लगाई थी, तो स्थानीय पुलिस ने उन्हें एक नोटिस लगाने को कहा था कि यहां 18 साल से कम उम्र के लोगों का प्रवेश वर्जित है. दास कहते हैं, कला जगत में 20-30 साल पहले ऐसा नहीं होता था, यह आधुनिक बदलाव है. लेकिन इसका असर बहुत अधिक नहीं पड़ा है. मैं आज भी अपनी कलाकृतियों को कपड़े नहीं पहनाता. लेकिन कलाकार की नज़र से देखने पर आपको किसी न्यूडनेस का आभास नहीं होता है. हालांकि रघु राय जतिन से पूछते हैं कि क्या कोई ख़ास वजह है इस न्यूडनेस के पीछे. तो जतिन बताते हैं कि वह न्यूडनेस की मानसिकता से कलाकृति नहीं बनाते हैं. वह तो बस ईश्वर की काया को चित्रित करते हैं. हालांकि उनके चित्रों में महिलाएं और पुरुष दोनों ही नग्न रूप में चित्रित होते हैं. अपनी इस न्यूड पेंटिंग के प्रति रुझान पर जतिन दास कहते हैं, जेजे स्कूल ऑफ आर्ट्स में अध्ययन के दौरान ही उन्होंने लगातार पांच साल तक इस पर काम किया और बाद में भी यही जारी रहा. पेंटर और कला समीक्षक यशोधरा डालमिया भी जतिन की कलाकृति की इस विशेषता की ओर इंगित करते हुए कहती हैं कि हो सकता है कि जतिन जिस कॉनसेप्ट पर काम कर रहे हैं उसकी एक पहचान यही बन गई है. हालांकि जतिन इसे अपनी स्टाइल नहीं मानते हैं. वह कहते हैं कि कोई भी कलाकार बस काम करता है. कलाकार या कलाकृति की कोई स्टाइल नहीं होती, वह बस एक काम होता है.

जतिन दास अपनी इस प्रदर्शनी के बाद दिल्ली सरकार की मदद से नेशनल पंखा म्यूज़ियम की रूपरेखा बनाने में जुट गए हैं. उनके पास 6500 से ज़्यादा पंखों का संग्रह है. और यह संग्रह आज भी जारी है. जतिन के काम को काफी क़रीब से देखने वाली उनकी संवेदनशील बेटी और प्रतिभाशाली अभिनेत्री-निर्देशिका नंदिता दास कहती हैं- एक एनर्जी का फ्लो है बाबा के अंदर, जो उनसे इतना कुछ करा पाता है. वह हर पल कुछ न कुछ करने में लगे रहते हैं. अपनी दुनिया में मगन. 67 साल की उम्र हो चुकी है, लेकिन वह आज भी 16-17 घंटे काम में जुटे रहते हैं. शायद यही ख़ूबी है जो जतिन दास को कला की दुनिया में एक अलग पहचान देती है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मेरी दुनिया.... ...धीर

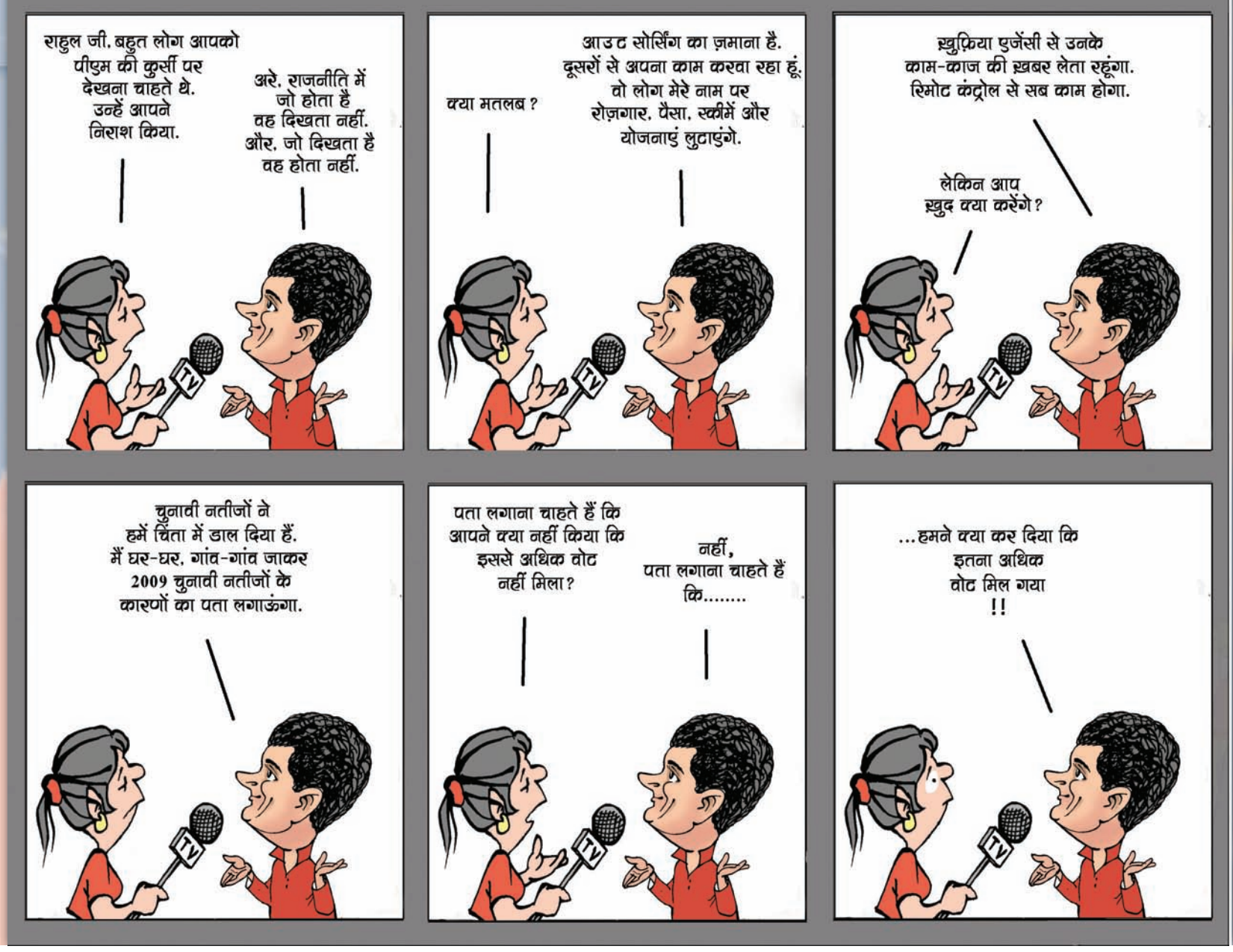

राशिफल

(8 जून से 14 जून तक)

मेष 21 मार्च से 20 अप्रैल

इस सप्ताह आप बहुत कुछ करना चाहते हैं और इसमें सफल भी रहेंगे. सभी गतिविधियों के पीछे आपका एक उद्देश्य है, जिसके लिए आप बेहतर योजनाएं और सही रास्ते तय कर रहे हैं. आप अपने फ़ैसलों पर भरोसा रखिए. व्यवसाय में नई शुरुआत से पहले कुछ अड़चनों को दूर करें.

वृष 21 अप्रैल से 20 मई

समय के साथ चलने की आपकी आदत, नए विचार, आपकी दृढ़ता आपको सफलता के रास्ते पर आगे ले जाएगी. किसी से प्रतिरोध का सामना करना पड़ सकता है. व्यावसायिक मामलों में एक से अधिक हितकारी बदलाव हो सकते हैं. उम्मीद से ज़्यादा मज़बूती मिलेगी.

मिथुन 21 मई से 20 जून

व्यर्थ के काम में समय बर्बाद न करें. बेहतर होगा अगर इस समय का प्रयोग अपने को तैयार करने में लगाएं. यह समीक्षाओं, भविष्य की योजनाएं बनाने और अपनी क्षमताओं पर सोचने का वक़्त है. व्यवसाय में आप नई परिस्थितियों को फ़ायदे के लिए इस्तेमाल कर सकेंगे.

कर्क 21 जून से 20 जुलाई

प्रभावशाली लोगों से मिलना और नए रिश्ते जोड़ना आपके लिए अच्छा रहेगा. छुट्टियों के मज़े उठाएं लेकिन अगर आप काम कर रहे हैं तो आपको गुणवत्ता बढ़ाने की ज़रूरत है. व्यवसाय में आप उन तरीक़ों पर ध्यान दें जिनके बल पर आपने अपने निवेशों की सुरक्षा सुनिश्चित की थी.

सिंह 21 जुलाई से 20 अगस्त

इस सप्ताह आपके सामने असल चुनौती यह है कि योजना और कार्यान्वयन का संतुलन कैसे बनाएं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि जो कुछ आप चाहते हैं वह आप को मिल ही जाएगा. व्यवसाय में जो नई योजना बना रहे हैं, उसका फ़ायदा अवश्य मिलेगा.

कन्या 21 अगस्त से 20 सितंबर

इस सप्ताह आप जो चाहते हैं वह आप को मिल जाएगा. चाहे आप काम कर रहे हों या छुट्टी मना रहे हों, आपके दिमाग़ में नए-नए विचार आएंगे. लेकिन यह फ़ैसला आप को लेना होगा कि वर्तमान समय में कौन-सा विचार आपके लिए बेहतर और महत्वपूर्ण है.

तुला 21 सितंबर से 20 अक्तूबर

इस हफ़्ते आप कुछ नया करने की सोच रहे हैं. इस सप्ताह आपको मौका मिलेगा और आप अपने विचार से लोगों को प्रभावित कर देंगे. आपकी आकांक्षा और उद्देश्य में बदलाव आएगा. आप अपने फ़ैसले पर क़ायम रहेंगे और उसी पर आगे बढ़ेंगे. व्यवसाय में आपको लाभ मिलेगा और आय भी बढ़ेगी.

वृश्चिक 21 अक्तूबर से 20 नवंबर

आप भविष्य को ध्यान में रख कर कुछ नया करेंगे. इसमें आपको सफलता मिलेगी. आप कार्यों को अपनी प्राथमिकता के अनुसार करते हैं, जिससे आप अपनी योजनाओं को गति प्रदान कर पाने में सफल रहेंगे. इस समय नई योजनाओं को लेकर व्यस्त रहेंगे. एक महत्वपूर्ण और नई ज़िम्मेदारी मिल सकती है.

धनु 21 नवंबर से 20 दिसंबर

आपको अपनी प्रतिभा के बल पर सफलता अवश्य मिलेगी. आप अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए नए तरीक़े का उपयोग करेंगे . समझदारी और दिमाग़ से काम करने के कारण कामयाबी ज़रूर मिलेगी. लोगों के बीच स्थान मज़बूत बना रहेगा. अपना ध्यान व्यवसाय पर केंद्रित करें. इससे लाभ होगा.

मकर 21 दिसंबर से 20 जनवरी

आत्मपरीक्षण के लिए अच्छा समय है. काम करने के तरीक़े में बदलाव लाना होगा. पुराने संबंध तोड़ने की कोशिश न करें, बल्कि जोड़ें. यह आपके भविष्य के लिए अच्छा रहेगा. नए संबंध और नई संभावनाओं से प्रेरित होकर आप आत्मविश्वास के साथ काम करेंगे. व्यवसाय में आय के नए स्रोतों के बारे में सोचना होगा.

कुंभ 21 जनवरी से 20 फरवरी

इस सप्ताह आप अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए सतत प्रयास करेंगे. व्यवहार में लचीलापन और स्थिरता की बदौलत आप अपनी स्थिति में सुधार लाएंगे और जो सोचा है उसे पाने में सफल भी रहेंगे. भाग्य भी साथ देगा. समय पर सफलता भी मिलेगी. व्यवसाय में नई संभावनाएं बनी हुई हैं.

मीन 21 फरवरी से 20 मार्च

समझदारी और सही तरीक़े के इस्तेमाल से ही आपको फ़ायदा पहुंच सकता है. आपका काम करने का तरीक़ा बिल्कुल अलग है. लोगों से संबंध बनाना आपके लिए उपयोगी रहेगा. आपके काम से सीनियर काफी ख़ुश रहेंगे और आपको नई ज़िम्मेदारी भी मिल सकती है .

बीनू संदल

feedback.chauthiduniya@gmail.com

शायर और अदाकारा का बेजोड़ अफ़साना

अनंत विजय

संस्मरण हिंदी में अपेक्षाकृत नई विधा है, जिसका आरंभ द्विवेदी युग से माना जाता है. परंतु इस विधा का असली विकास छायावादी युग में हुआ. इस काल में *सरस्वती, सुधा, माधुरी, विशाल भारत* आदि पत्रिकाओं में कई उल्लेखनीय संस्मरण प्रकाशित हुए. आगे चलकर छायावादोत्तर काल में तो यह विधा पूरी तरह से एक स्वतंत्र विधा के रूप में ही स्थापित हो गई. संस्मरण साहित्य की सबसे अनमोल निधि वे पत्र-पत्रिकाएं हैं, जिनमें संस्मरणात्मक लेख नियमित रूप से प्रकाशित हुए या होते रहे. न सिर्फ हिंदी के लेखकों ने बेहतरीन संस्मरण लिखकर इस विधा को स्थापित किया, बल्कि कुछ विदेशी विद्वानों ने भी हिंदी में अच्छे संस्मरण लिखे. प्रसिद्ध रूसी विद्वान ये. पे. चेलीशेव का संस्मरण *निराला : जीवन और संघर्ष के मूर्तिमान* आज भी पाठकों की स्मृति में है.

पिछले कुछ वर्षों में राजेंद्र यादव द्वारा संपादित *हंस* और अखिलेश के संपादन में निकलने वाली पत्रिका *तद्भव* में कई बेहतरीन संस्मरण छपे. चाहे वे काशीनाथ सिंह के संस्मरण हों या रवींद्र कालिया के या फिर कांति कुमार जैन के. *तद्भव* की लोकप्रियता का एक बड़ा कारण इसके शुरुआती अंकों में छपे संस्मरण ही रहे. सारे के सारे संस्मरण ख़ूब पढ़े और सराहे गए. संस्मरणों पर गाहे-बगाहे ख़ूब विवाद भी हुए. संस्मरणों में आमतौर पर लेखकीय ईमानदारी की ज़रूरत होती है जो न केवल लेखक की विश्वसीनयता को बढ़ाती है, बल्कि लेख को भी एक ऊंचाई भी प्रदान करती है. लेकिन संस्मरण लेखन में हाल के दिनों में जिस स्तरहीनता का परिचय मिलता है वह चिंता का विषय है. हाल के दिनों में अगर हम हिंदी में लिखे जा रहे संस्मरणों पर नज़र डालें तो इस विधा को हिंदी के लेखकों ने व्यक्तिगत झगड़ों को निपटाने का औजार बनाकर इस्तेमाल करना प्रारंभ कर दिया. इससे फ़ौरी तौर पर तो लेखक चर्चा में आ गया, लेकिन चंद महीनों बाद न तो लेखक का और न ही लेख का कोई नामलेवा ही बचा. लेकिन पिछले दिनों उर्दू के मशहूर नग़मानिगार कैफ़ी आज़मी की बेग़म और अपने जमाने की मशहूर अदाकारा शौकत कैफ़ी ने अपनी आपबीती-*याद की रहगुज़र*-लिखी जो संस्मरण के अलावा शौकत और कैफ़ी की एक ख़ूबसूरत प्रेम कहानी भी है.

याद की रहगुज़र लगभग डेढ़ सौ पन्नों में लिखा गया वह अफ़साना है, जिसे अगर कोई पाठक एक बार पढ़ना शुरू कर दे तो फिर बीच में छोड़ नहीं सकेगा, ऐसा मेरा मानना है. शौकत की पैदाइश 1928 की है. वह हैदराबाद के एक ऐसे मुस्लिम परिवार में पैदा हुई, जिसका माहौल उस दौर के आम मध्यवर्गीय मुसलमान परिवार जैसा ही था. यह वह दौर भी था जब लड़कों की पैदाइश पर लड्डू बांटे जाते थे तो लड़की की विलादत को अल्लाह की मर्ज़ी मान लिया जाता था. लेकिन शौकत ख़ानम इस मामले में ज़रा भाग्यशाली थीं, क्योंकि उनके पिता अपने परिवार के विचारों के उलट बेहद तरक़्क़ीपसंद इंसान थे और लड़कियों की तालीम और उनकी आज़ादी के हिमायती थे. बावजूद अपने परिवार के सख्त विरोध के, उन्होंने अपनी तीनों बेटियों की तालीम का इंतज़ाम किया. नतीजा यह हुआ कि शौकत का बचपन बेहतर और तरक़्क़ी पसंद लोगों की सोहबत में बीता. आज़ादी के चंद महीने पहले की बात है जब फरवरी में हैदराबाद में तरक़्क़ीपसंद लोगों का एक सम्मेलन हुआ. उसमें कैफ़ी आज़मी, मजरूह सुल्तानपुरी , सरदार जाफरी आदि ने शिरकत की थी. उसी दिन रात में एक मुशायरे में शौकत ख़ानम और कैफ़ी ने एक-दूसरे की आंखों में अपना भविष्य देख लिया. यह भी एक बेहद दिलचस्प वाक़या है. जैसे ही मुशायरा ख़त्म हुआ तो लोगों का हुजूम कैफ़ी, मजरूह और सरदार जाफरी की तरफ लपका. शौकत ने एक उड़ती नज़र कैफ़ी पर डाली और सरदार जाफरी से ऑटोग्राफ लेने चली गईं. इतनी भीड़ में भी कैफ़ी ने अपनी इस उपेक्षा को भांप लिया और जब शौकत ने कैफ़ी की तरफ ऑटोग्राफ के लिए कॉपी बढ़ाई तो शायर ने अपनी उपेक्षा कॉपी पर उतार दी-

वही अब्रे-जाला चमकनुमा वही, ख़ाकेबुलबुले-सुर्ख़-रू ज़रा राज बन के महन में आओ
दिले घंटा तुन तो बिजली कड़के धुन तो फबन झपट के लगन में आओ.

इस शेर से नाराज़ होकर जब शौकत ने कैफ़ी से इसकी वजह जाननी चाही तो कैफ़ी ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया कि आपने भी तो पहले जाफरी साहब से ऑटोग्राफ लिया. इसके बाद तो शौकत ख़ानम, कैफ़ी की पुरकशिश शख्सियत पर सिहरजदा हो गईं और मोहब्बत और आशिक़ी का बेहद रूमानी सिलसिला चल निकला और लंबे-लंबे ख़तो-किताबत भी शुरू हो गई. कैफ़ी मुंबई में रहते थे तो शौकत अपने पिता के साथ औरंगाबाद में. शौकत के हाल-ए-दिल का पता उनके पिता को चल चुका था और शौकत ने भी कैफ़ी से शादी करने की अपनी मंशा पिता पर ज़ाहिर कर दी थी. पिता ने बेटी को कहा कि मुंबई चलकर देख लेते हैं, फिर कोई फ़ैसला लेते हैं. दोनों चल पड़े मुंबई. वहीं घटनाचक्र कुछ इस कदर चला कि कैफ़ी की हालत का पता लगाने गए पिता ने बेटी की मर्ज़ी को देखते हुए उसी वक़्त दोनों का निकाह करा दिया. शादी हुई

सज्जाद ज़हीद के घर और उनकी बेग़म रज़िया ने शौकत की मां की भूमिका निभाई और बाराती बने जोश मलीहाबादी, मजाज, कृष्ण चंदर, साहिर लुधियानवी, इस्मत चुगताई और सरदार जाफरी जैसे तरक़्क़ीपसंद लोग. यहां एक बात ग़ौर करने लायक है कि उस दौर में भी शौकत के अब्बाजान कितने तरक़्क़ीपसंद और आज़ाद ख़याल थे कि बेटी के प्यार के लिए पूरे परिवार की नाराज़गी मोल लेते हुए निकाह करा दिया और बेटी को उसके शौहर के पास छोड़ अकेले घर लौट आए.

जब शादी हुई थी तो उस वक़्त कैफ़ी कम्यून में रहते थे और त्रैमासिक *नया अदब* के संपादक थे. शौकत ने कम्यून के कमरे को घर का रूप देना शुरू किया. यह पूरा क़िस्सा बेहद दिलचस्प है. कैफ़ी की संगत और कम्यून के माहौल ने शौकत को भी इप्टा में सक्रिय होने के लिए प्रेरित कर दिया. शौकत ने सबसे पहले भीष्म साहनी के ड्रामे में काम किया. इस ड्रामे से शौकत को ख़ूब सराहना मिली. सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था, घर में बेटे के रूप में एक चराग़ भी रोशन हो चुका था कि अचानक साल भर का बच्चा टी बी का शिकार होकर काल के गाल में समा गया. इस विपदा से शौकत बुरी तरह टूट गईं. अपने इस पहाड़ जैसे दुख से उबरने की कोशिश में जब ग़मजदा शौकत को पता चला कि वह फिर से मां बनने जा रही हैं तो उनकी ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा. लेकिन जब शौकत की पार्टी (तब तक शौकत वामपंथी पार्टी की सदस्यता ले चुकी थीं) को इसका पता लगा तो पार्टी ने गर्भ गिरा देने का फ़रमान जारी कर दिया. यह वामपंथ का बेहद अमानवीय चेहरा है जो इस पार्टी के लोकप्रिय न होने का एक बड़ा कारण है. लेकिन शौकत जब अड़ गईं तो इस मसले पर पार्टी की बैठक बुलाई गई और तमाम बहसों और शौकत के कड़े रुख़ को भांपते हुए पार्टी को झुकना पड़ा. शौकत को बच्चा पैदा करने की अनुमति मिली. कम्युनिस्ट पार्टी के इस अमानवीय चेहरे पर से गाहे-बगाहे उसके सदस्य ही पर्दा उठाते रहते हैं. किसी भी विचारधारा के ठस होने की यह इंतहा है कि उसके सदस्य बच्चा पैदा करें या न करें यह भी पार्टी की बैठक में तय होती है. अकारण नहीं है कि वाम दलों को देश में ज़्यादा लोकप्रियता हासिल नहीं हुई और वे महज़ तीन राज्यों में सिमट कर रह गए और इस लोकसभा चुनाव में तो इस विचारधारा को जनता ने आईना भी दिखा दिया. इस आपबीती के बाद की दास्तान कैफ़ी और शौकत के संघर्ष की कहानी है. कैफ़ी की लगातार हौसला आफ़जाई के बाद शौकत नाटकों में और सक्रिय हो गईं और लगातार सफलता की सीढ़ियां चढ़ बुलंदी पर पहुंच गईं. एक अदाकारा के रूप में शौकत की और शायर के रूप में कैफ़ी की शोहरत बढ़ने लगी. शौकत को नाटकों के अलावा फिल्मों में काम मिला तो कैफ़ी ने भी कई बेहतरीन नग़मे लिखे. शोहरत और उससे आए पैसे को कैफ़ी और शौकत एन्जॉय कर रहे थे कि एक दिन इस हंसते-खेलते परिवार को किसी की नज़र लग गई और कैफ़ी साहब बुरी तरह बीमार हो गए. फिर शौकत ने अपने बच्चों के साथ मिलकर अचानक आए इस विपदा को भी मित्रों के सहयोग से झेला. इसके अलावा इस आपबीती में कैफ़ी के उत्तर प्रदेश के अपने गांव मिजवां के लिए किए गए कामों का और अपने गांव और इलाक़े की बेहतरी के लिए कैफ़ी की बेचैनी का भी विस्तार से विवरण है. साथ ही शौकत के पृथ्वी थिएटर के दिनों के भी दिलचस्प और रोचक क़िस्से हैं. कुल मिलाकर अगर हम इस आपबीती पर विचार करें तो हम कह सकते हैं कि यह एक अद्भुत प्रेम कहानी है. अफ़साना है दो दिलों का, जो तमाम दिक़्क़तों और संघर्षों के बावजूद एक-दूसरे को दिलो जान से फिदा कर देते हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सिर्फ़ भौतिक शरीर ही नहीं हैं हम

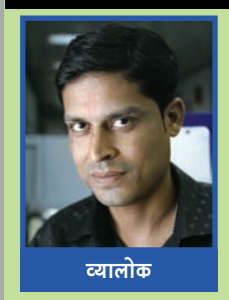

व्यालोक

सनातन धर्म के सबसे मूल तत्व में एक यह है कि हम आत्म हैं, न कि केवल भौतिक शरीर. आत्म का अर्थ होता है-सत्य तत्व. यह दुनियावी अस्तित्व से परे एक मूल तत्व है. जैसे किसी मकान में रहनेवाला मकान मालिक कहलाता है, वैसे ही मानव शरीर में उपस्थित मूल तत्व को आत्म या आत्मा कहते हैं. जब हमारा शरीर पुराना और मरम्मत के लायक नहीं रह जाता है, तब आत्म घर छोड़ देती है, इसी को दुनियावी शब्दों में कहा जाता है कि व्यक्ति की मृत्यु हो गई-*वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोपराणि...*यानी जिस तरह कपड़े पुराने हो जाने पर उनको बदल कर दूसरे कपड़े पहने जाते हैं, उसी तरह शरीर के जर्जर होने पर आत्मा भी दूसरा चोला धारण कर लेती है.

आत्म का अर्थ यह है कि आत्मा भौतिक शरीर, भावनाएं, बाह्य मस्तिष्क या व्यक्तित्व ही नहीं है. हरेक मानव शरीर-धार्मिक, भौगोलिक, लैंगिक, रंग या समुदाय के विभेद के- वास्तव में एक आत्मा है, जो एक भौतिक शरीर में है. आत्मा चूंकि आत्यंतिक तौर पर पवित्र और दिव्य है, इसीलिए हरेक इंसान ही दरअसल दिव्य है. कोई भी व्यक्ति पैदाइशी तौर पर पापी नहीं होता, बल्कि अज्ञानतावश ही परिस्थितियों का शिकार बन जाता है. इसी को माया कहते हैं. जिस तरह अंधकार का अंत प्रकाश के उदय के साथ ही हो जाता है, उसी तरह किसी व्यक्ति का भ्रम ग़ायब हो जाता है, जब वह आत्मज्ञान पा लेता है-अप्पदीपो भव.

आत्मोपनिषद में आत्मन या पुरुष को त्रिस्तरीय कहा गया है. पहला, बाह्य आत्मा या भौतिक स्वरूप, दूसरा अंतरात्मन यानी आंतरिक व्यक्तित्व और तीसरा परमात्मन यानी अधिभौतिक सत्य. समग्रता के लिए आवश्यक है कि ज्ञान की हमारी पूरी व्यवस्था इस तथ्य पर आधारित होनी चाहिए कि मनुष्य केवल शरीर नहीं है, बल्कि चेतना है. यानी जीवंत ऊर्जा जो आत्मज्ञान के योग्य है और जो मस्तिष्क और स्मरणशक्ति का मालिक है. शरीर तो केवल मनुष्य की चेतना का अस्थायी निवास है. हरेक व्यक्ति अपनी संपूर्ण यात्रा और विकास के दौरान इस निवास के अंदर-बाहर होता है. अपने पुराने शरीर को छोड़ एक नए शरीर में जाता है. सभी योनियों में एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने की यही प्रक्रिया संसार कहलाती है. सनातन धर्म बताता है कि चेतना हरेक योनि में मौजूद रहती है, आत्म हरेक जीव में है, फिर भी इसका स्तर बदलता रहता है. जड़ पदार्थों और पौधों में यह सबसे छिपा हुआ रहता है, बल्कि व्यावहारिक तौर पर तो सोया होता है. मानवों में यह सतत जाग्रत और चेतन होता है. चेतना का यह विकास छह स्तरों में होता है- जलचर, पादप, सरीसृप और कीड़े-मकोड़े, पक्षी, जानवर और मानव. सनातन धर्म में संसार को कष्ट का कारण बताया गया है,जिसे आगे चलकर बुद्ध ने अपने दर्शन में पूरे विस्तार से बताया. संसार दरअसल चार समस्याओं का दुष्चक्र है-जन्म, बीमारी, बुढ़ापा और मृत्यु. आत्म दरअसल स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर तीनों में ही रहता है. इन तीनों ही शरीरों में आत्मा रहती है. मानव शरीर में तीनों की एक साथ उपस्थिति होती है, लेकिन इनका ज्ञान वस्तुतः हमारी चेतना पर ही निर्भर करता है.

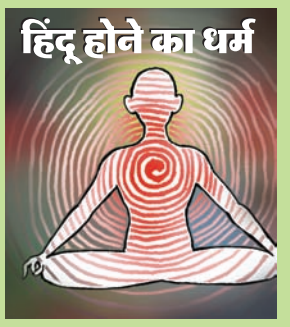

vyalok.chauthiduniya@gmail.com

मुसलमान

आबिद सुरती

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि इक़बाल की तलाश में भेसाड़िया मुंडागली तक पहुंच गया. क्या इक़बाल क़ानून के हत्थे चढ़ जाएगा? आगे पढ़िए इस अंक में...

मुंडागली से निकलकर वह पालागली में आया और मस्ज़िद में दाख़िल होकर वज़ू क्या : पांव धोए, कुहनी तक हाथ धोए, मुंह धोया और जमात के साथ नमाज़ पढ़कर दस मिनट में फिर लौट आया.

अब तक गटर के एक-एक कोने को छानकर भेसाड़िया दो सी.आई.डी. वालों के साथ अब्बासी मंज़िल में दाख़िल हो चुका था. तीसरा सी.आई.डी. वाला दारू के अड्डे पर खड़े होकर सतर्कता से पहरा दे रहा था. तल-मंज़िले के कमरों की तलाशी ली जा रही थी. चाली में लोगों की काफ़ी भीड़ इकट्ठी हो गई थी.

भीड़ में से रास्ता बनाते हुए इक़बाल पहली मंज़िल पर आया. यह तय था, घर में रखी बोरियों को जल्द से जल्द रफ़ा-दफ़ा करने की ज़रूरत थी. लेकिन बोरियां डाले कहां? खिड़की से पीछे की गटर में फेंके तो धमाका होगा. बोतलें ख़ाली करके शराब मोरी में बहा देने का भी समय नहीं था. एक-एक बोरी में तीन-तीन दर्जन बोतलें थीं. कुल मिलाकर डेढ़ या दो हज़ार बोतलें गटर में बहा देने में उसके अपने बारह बज जाने का ख़तरा था. तल-मंज़िले के घरों की तलाशी पूरी करके पुलिसवाले ऊपर आने वाले थे. इक़बाल की कोठरी पहली मंज़िल पर थी. अगर घर में से तस्करी की शराब बरामद हो, तो न सिर्फ़ उसके बल्कि उसकी मां गुलबानू के हाथों में भी हथकड़ियां पड़ जाएं और वह मां को सुरक्षित रखना चाहता था.

अम्मी! आख़िर उसने कह दिया, तुम बाहर चली जाओ, यह मकान छोड़कर निकल जाओ.

गुलबानू अभी तक पुलिस की तलाशी से अनजान थी. इसलिए पूछा, क्यों?

इक़बाल ने संक्षेप में सारी बातें समझाकर कहा, जल्दी करो, अम्मी! अब तक तल मंज़िले की तलाशी पूरी हो चुकी होगी. पुलिस ऊपर आने ही वाली है.

गुलबानू ने बेटे की ओर ग़ौर से देखा. सी.आई.डी. वाले नीचे के आख़िरी दो घरों की तलाशी ले रहे थे. उनकी आवाज़ अब स्पष्ट होती जा रही थी. कच्ची नींद से जगे किराएदार पुलिस पर लानतें बरसा रहे थे.

अम्मी! अब सोचने का समय नहीं है. इक़बाल अधीर हो उठा.

गुलबानू वहीं की वहीं स्थिर होकर खड़ी रही. फिर धीरे से पूछा, यह काला लिबास तुझे दिखाई देता है ?

पति के इंतकाल के बाद गुलबानू काले कपड़े पहनने लगी थी- काला लंबा फ्रॉक और काली ओढ़नी.

कल तेरे पापा का चालीसवां है. इक़बाल के चेहरे पर उलझन देखकर गुलबानू ने स्पष्ट किया, और जब तक चालीसवां पूरा नहीं होता, इस चौखट से बाहर क़दम नहीं रख सकती.

इक़बाल कांप उठा, लेकिन अम्मी!

वह कुछ कहे इससे पहले गुलबानू बोल उठी, भले मेरे हाथ में हथकड़ियां पड़ें, इस घर से बाहर मैं कहीं नहीं जाऊंगी.

इंस्पेक्टर भेसाड़िया सी.आई.डी. वालों के साथ पहली मंज़िल पर आया और सीढ़ियों के पास ही दोनों कोठरियों के दरवाज़े भड़भड़ा उठे. जैसे ही दरवाज़े खुले कि एक-एक कोठरी में एक-एक सी.आई.डी. वाला दाख़िल हो गया.

तीसरी कोठरी इक़बाल की थी. अंदर से दरवाज़ा बंद कर अपने दोनों छोटे भाइयों को बगल में लेकर वह बैठ गया. उसकी सांस अधर में अटकी थी. कभी वह मोरी के पास हाथ में तस्बीह (माला) लिए बैठी मां को निहारता था, तो कभी दरवाज़े को. इसके पहले ऐसा कभी नहीं हुआ था. कभी भी पुलिस से साबक़ा नहीं पड़ा था.

भीड़ में से रास्ता बनाते हुए इक़बाल पहली मंज़िल पर आया. यह तय था, घर में रखी बोरियों को जल्द से जल्द रफ़ा-दफ़ा करने की ज़रूरत थी.

ज़ीने के पीछे की दोनों कोठरियों की तलाशी पूरी कर दोनों सी.आई.डी. आगे बढ़े. एक सी.आई.डी. इक़बाल के कमरे की कुंडी खटखटाने गया तो भेसाड़िया ने उसे रोका.

क्यों, साहब? उसने आश्चर्य व्यक्त किया.

यह काला पर्दा देख रहे हो?

बंद दरवाज़े के बाहर झूलते पर्दे पर उसने एक नज़र डाली और फिर भेसाड़िया की ओर देखने लगा.

इसका मतलब जानते हो? इस बार प्रश्न के साथ भेसाड़िया ने सी.आई.डी. वालों को उत्तर भी दिया, इस घर में किसी की मौत हुई है. घर में शोक है और उसकी मर्यादा का पालन करना चाहिए.

बंद दरवाज़े के पीछे इक़बाल ने ये शब्द सुने और अपने माथे का पसीना पोंछा. वह बाल-बाल बचा था. उसने मां को देखा. मोरी के पास बैठकर वह अभी भी तस्बीह के दाने फिरा रही थी.

इंस्पेक्टर भेसाड़िया वापस जाते समय चंदू के साथ शराब के अड्डे में काम करने वाले लड़के को भी लेता गया. अब उसने उन दोनों पर दबाव डालना शुरू किया, ख़ासतौर से लड़के पर.

कान खोलकर सुन ले, बेटा-मेज पर पड़े पेपरवेट से खेलते हुए भेसाड़िया ने कहा, चंदू को ज़मानत पर छुड़ाने के लिए दस लोग आगे आएंगे, पर तेरा हाल कोई नहीं पूछने वाला. हां, अगर तू सच-सच बता देगा तो मैं ख़ुद तुझे छोड़ दूंगा.

लड़का उसके सामने चुपचाप देखता रहा.

बोल, रात दो बजे ट्रक भरकर जो बोरियां आती हैं वे कहां जाती हैं?

लड़का अब भी ख़ामोश था. इंस्पेक्टर भेसाड़िया खड़ा होकर उसके सामने आया. उसके सिर के बाल पकड़ सख्ती की और अपनी आवाज़ कड़ी करके फिर वही प्रश्न दुहराया, अगर तू मुंह नहीं खोलेगा तो मैं मुंह खुलवाना भी जानता हूं. अपनी भौंहे तंग कर उसने बाल खींचे. लड़के का चेहरा ऊपर हो गया. उसकी आंखों के सामने भेसाड़िया के बड़े-बड़े दीदे आए, नाक से नाक का स्पर्श हुआ, वह डर गया. इक़बाल का नाम उगलते उसे देर नहीं लगी. इंस्पेक्टर भेसाड़िया सिर पकड़कर बैठ गया.

दसवीं जमात में पढ़ने वाला कोई विद्यार्थी तस्करी के दलदल में घुटनों तक उतर सकता है, इस बात पर उसे यक़ीन नहीं हो रहा था.

अब उसने चंदू को बुलाकर नए सिरे से पूछताछ शुरू की.

इक़बाल कौन है ?

वह झेंप गया. जिस राज़ को छिपाने के लिए उसने लॉकअप के बाहर तमाचे और अंदर घूंसे खाए थे, वही रहस्य आज खुल गया था. फिर भी उसने तेल और तेल की धार देखने का फ़ैसला किया.

कौन इक़बाल, साहब!

अचानक भेसाड़िया ने कांच का पेपरवेट उठाकर दे मारा. चंदू ने झुकना चाहा और पेपरवेट उसके कंधे से टकराया. उसके मुंह से आह निकल गई. पेपरवेट नीचे गिर गया. दूसरे ही क्षण उसने अपने मांसल कंधे को हाथ से पकड़ लिया-जैसे हाथ रखने से कंधे में उठ रही पीड़ा शांत हो जाएगी.

घंटे-भर तक भेसाड़िया ने उसे धमकाया, डराया, फटकारा पर उसने अपना मुंह न खोला तो न ही खोला. अंत में भेसाड़िया ने लड़के को छोड़ दिया और अज़ीज़ दिलीप को संदेश भिजवाया.

शाम को पांज बजे भूगोल का पेपर पूरा करके इक़बाल स्कूल से बाहर निकला तो उसकी नज़र अज़ीज़ दिलीप पर पड़ी. इक़बाल का इंतज़ार करते हुए वह भीमपुरा में स्कूल की इमारत के सामने खड़ा था.

बच्चू! उसने विनती की, तुझे भेसाड़िया साहब से जाकर मिलना पड़ेगा.

जवाब देने से पहले इक़बाल ने पल-भर सोचा, फिर बोला, मेरी परीक्षा चल रही हैं.

तू नहीं जाएगा तो चंदू की ज़मानत भी नहीं होगी. उसने फिर कहा, भेसाड़िया ने सख्त चेतावनी दी है. ज़मानत के लिए मैंने अपने आदमी को दो बार भेजा. पर दोनों बार भेसाड़िया ने उसे दरवाज़ा दिखा दिया.

इक़बाल ने डरते-डरते सही बात बता दी, मुझे कुछ करेंगे तो नहीं न?

मैं हूं न! उसने आश्वासन दिया.

दूसरे दिन आधे दिन का पेपर था. दोपहर के बाद छुट्टी थी. स्कूल से छूटकर इक़बाल पैदल बोरीबंदर पहुंचा. ए.सी.बी. के प्रधान कार्यालय की इमारत पर एक नज़र डाली तो उसका दिल दो धड़कनें चुक गया.

किसी तरह दिल थामकर वह इमारत के प्रवेशद्वार से आगे बढ़ा और पूछताछ करते हुए इंस्पेक्टर भेसाड़िया के केबिन तक पहुंच गया. दरवाज़े पर भेसाड़िया के नाम की तख्ती देखकर तसल्ली कर ली. फिर जैसे धीरे से दरवाज़ा धकेलकर शेर की मांद में नज़र डाली.

भेसाड़िया ने सिर ऊपर उठाया, कौन?

जी...मैं इक़बाल. कहते हुए अंदर क़दम रखा और आंखें झुकाकर दरवाज़े के पास खड़ा हो गया.

पल भर भेसाड़िया उसे एकटक देखता रहा. सामान्यतः उसके सामने शतिर बदमाश, ख़तरनाक, ख़ूनी, भाड़े के हत्यारे, डाकू और लुटेरे खड़े होते थे. उनकी जगह सफ़ेद कमीज़ और खाकी निकर पहने एक भोला-भाला विद्यार्थी खड़ा था. हाथ में किताबें-कॉपियां थीं. कमीज़ में स्याही-पेन लगी हुई थी, सीने पर स्कूल का बैज चमक रहा था.

बैठ. मेज पर पड़ी फाइल बंद करते हुए उसने सामने की कुर्सी की ओर इशारा किया. आगे बढ़कर इक़बाल चुपचाप कुर्सी पर बैठा और सोच-विचारकर अपनी पाठ्य-पुस्तकें मेज पर रखीं.

बेटा, तेरा नाम क्या है ?

इक़बाल हुसेनअली रूपाणी.

क्या करता है ?

पढ़ता हूं, साहब.

मेरा नाम जानता है ?

दरवाज़े पर पढ़ा.

कभी अख़बार में भी पढ़ा है ?

कई बार, साहब. और यह सच था. इंस्पेक्टर भेसाड़िया की हिम्मत और बहादुरी के कारनामे उन दिनों अख़बारों में मोटी सुर्खियों के साथ छपते थे.

मैं वही भेसाड़िया हूं. गर्व से कहते हुए उसने पाठ्य-पुस्तकों के ऊपर रखी प्रोग्रेस-बुक (प्रगति-पुस्तिका) उठा ली. कुछ पन्ने पलटे. साल-भर के तीन तीन टर्मिनल एक्ज़ाम्स के नतीजे देखे. मानो आंखों को धोखा हुआ हो. ऐसे अपनी तसल्ली के लिए उसने इक़बाल को नए सिरे से देखा और एक बार फिर इम्तहान के नतीजों पर नज़रें झुकाईं. **(अगले अंक में जारी)**

अगर करते हों बिस्तर से काम...

क्या देर रात तक लैपटॉप के साथ बिस्तर में बैठे रहना आपकी आदत है? क्या आप ऑफिस के ज़रूरी काम तकिए पर सिर टिकाए निपटाते हैं? अगर हां, तो आप अकेले नहीं हैं. एक सर्वे के मुताबिक भारत के आधे से ज़्यादा कामकाजी लोग अपने बिस्तर में ही काम निपटाते हैं. सर्वे के हिसाब से लोग रोज़ाना लगभग दो से छह घंटे अपने लैपटॉप को लेकर बिस्तर में घुसे रहते हैं. ऐसा सिर्फ़ देर रात तक काम करने वालों के साथ ही नहीं है. सच तो यह है कि आजकल मोबाइल और लैपटॉप सभी के बिस्तरों में जगह बनाते जा रहे हैं. अपने दिन की शुरुआत से ही ये गैजेट लोगों की ज़िंदगी में दखल देने लगते हैं. ब्लैकबेरी और आई-फोन जैसे गैजेट्स के आने के बाद तो यह ट्रेंड और भी ज़्यादा बढ़ गया है. एक विदेशी न्यूज़ एजेंसी के पत्रकार रोहित शर्मा कहते हैं-मेरे लिए दिन की शुरुआत अपने मोबाइल पर मैसेज के साथ-साथ रात भर की ख़बरों के आरएसएस फीड चेक करने से होती है. मैं महत्वपूर्ण ख़बरों और लेखों को रात में पढ़ने के लिए मार्क कर लेता हूं. रात में सोने से पहले उन ख़बरों को पढ़ लेता हूं. हां, कभी-कभी आख़िरी वक़्त तक काम निपटाने के लिए रात में भी देर तक काम करना पड़ता है. रोहित जैसी हालत कई कामकाजी लोगों की है. रात में देर तक जागकर कंप्यूटर पर काम करना मजबूरी भी है और कुछ लोगों की आदत भी. हालांकि यह तरीक़ा न तो सुरक्षित है और न ही सेहत के लिए उचित ही. रात में देर तक कंप्यूटर या मोबाइल स्क्रीन पर आंखें गड़ाए रखना, आंखों के लिए तो हानिकारक है ही अनिद्रा और कमज़ोरी का भी कारण बन जाता है. कई लोगों को तो देर तक काम करने की ऐसी आदत लग जाती है कि वे काम न होने पर भी सो नहीं पाते. मनोवैज्ञानिक भी इस तरह रात को काम करने की आदत को बीमारी मानते हैं. साथ ही इससे जीवनसाथी या सहयोगियों के साथ रिश्तों पर भी बुरा असर पड़ता है.

इतना ही नहीं, घर पर काम करने की आदत सुरक्षित भी नहीं है. काम से जुड़े महत्वपूर्ण डाटा को घर के कंप्यूटर या लैपटॉप पर रखना परेशानी का कारण बन सकता है. वैसे आजकल कंपनियां भी यह समझ रही हैं कि एक तय टाइम-टेबल का जमाना नहीं रहा. तभी वह अपने कर्मचारियों को काम को घर ले जाने की छूट दे रही हैं, लेकिन साथ ही वे ऐसे उपाय भी कर रही हैं जिनसे उनका डाटा सुरक्षित रहे. अधिकतर लोग, जो घर पर काम करते हैं वह इंटरनेट या अन्य नेटवर्कों से जुड़ने के लिए वायरलेस नेटवर्क का प्रयोग करते हैं. हालांकि वायरलेस नेटवर्क का प्रयोग करने वाले लोगों में से आधे से ज़्यादा यह जानते हैं कि यह तरीक़ा असुरक्षित है, लेकिन उनका कहना है कि घर पर बिस्तर पर लेटकर काम करने के मज़े के लिए यह ख़तरा उठाया जा सकता है. अगर आप भी घर पर काम करने के आदी हैं तो कुछ सुरक्षा उपाय हैं, जिनका पालन ज़रूर करना चाहिए.

- ✓ अगर आपके मोबाइल या लैपटॉप में ज़रूरी जानकारियां हैं, ख़ासकर आपकी कंपनी से जुड़ी हुईं, तो डाटा सुरक्षा क़ानून के तहत उसकी सुरक्षा ज़रूरी है. आपको अपनी कंपनी के आईटी विभाग से अपने डिवाइस को सुरक्षित करा लेना चाहिए.
- ✓ हमेशा एक मज़बूत पासवर्ड का प्रयोग करें- हो सके तो अंकों, संकेतों और अक्षरों का मिला-जुला पासवर्ड बनाएं.
- ✓ सभी नेटवर्क कनेक्शंस पर नज़र रखें. ध्यान दें कि आपके सिस्टम तक किसकी पहुंच है.
- ✓ ब्ल्यूटूथ या वाई-फाई जैसे डिवाइस को खुला न छोड़ें, जिनसे कोई भी आपके कंप्यूटर या मोबाइल तक पहुंच न सके.
- ✓ और अपने बिस्तर का इस्तेमाल उस काम के लिए करें जिसके लिए उसे बनाया गया है. अगर नींद न आए तब भी लैपटॉप और मोबाइल से दूर रहें.

यूएसबी मिट्ठू बोले राम-राम

अब कंप्यूटर के सामने बैठे-बैठे लोगों का वक़्त कैसे निकल जाता है, पता ही नहीं चलता. ऐसे में जब अपनों से भी मिलने का समय नहीं मिलता हो, तब पेट्स रखने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता. अगर आप गैजेट्स और पेट्स दोनों के शौक़ीन हैं तो मज़ेदार यूएसबी तोता आपके इस शौक़ के लिए बेहतरीन कांबिनेशन है. यह मशीनी पेट बिना खाए-पीए आपका मनोरंजन भी करता है और इससे काम में नुकसान भी नहीं होता. पेपे यूएसबी पैरट दरअसल यूएसबी (यूनिवर्सल सीरियल बस) की बाहरी मेमोरी से जुड़ा है. यह तोता असली तोते की तरह ही यह आपकी हर आवाज़ को दोहराता है. बस इसे अपने कंप्यूटर या लैपटॉप के यूएसबी पोर्टल से जोड़िए और यह आपकी बोली हुई बातों को दोहराता है. हां, अगर आप अपने पालतू फैंसी तोते को ऑफिस पार्टी में ले जाना चाहते हैं तो ध्यान रखें अपने बॉस की बुराई उसके सामने न करें. चूंकि यह बैटरी से भी चलता है इसलिए इसे कहीं लाने-ले जाने में कोई परेशानी नहीं होगी. यह ख़ूबसूरत और प्यारा सा रट्टू तोता अमैजन कंपनी की ओर से बाज़ार में उतारा गया है, जिसकी क़ीमत केवल 5000 रुपये है.

सप्ताह की वेबसाइट : ट्विटर डॉट कॉम

अपनी बढ़ती लोकप्रियता से पश्चिमी देशों में धाक जमा चुका ट्विटर अब भारत में फैलता जा रहा है. बिना कंप्यूटर और इंटरनेट कनेक्शन के दुनिया से जुड़े रहने की जो सुविधा इस वेबसाइट में है उसे भारतीय युवा बहुत पसंद कर रहे हैं. आपको बस इसकी साइट पर जाकर अपना मोबाइल नंबर रजिस्टर करना होगा और आप जुड़े जाएंगे ट्विटर से अपने मोबाइल के ज़रिए ट्विटर की लोकप्रियता ने मोबाइल ब्लगिंग को एक नया शब्द दे दिया है-ट्विट.

पहनने वाले गैजेट्स

सामान्य टाई और ग्लव्स को देखकर कोई नहीं कह सकता कि आप किसी सीक्रेट मिशन पर हैं. यह सीक्रेट मिशन है, सामने वाले की सारी सीक्रेट जानकारियां निकाल लेना. आप चाहे इसका प्रयोग दोस्तों के साथ मज़े के लिए करें या बॉयफ्रेंड पर नज़र रखने के लिए गिफ्ट करें, पर है यह बड़े काम की चीज़. स्पाई गैजेट के रूप में स्पेशल टाई एकदम साधारण टाई जैसी दिखती है. इसमें छिपा पिनहोल चार गीगाबाईट कैमरा इसे ख़ास बनाता है. यह कैमरा 352*288 रीजोल्यूशन पर 12 फ्रेम प्रति सेकेंड रिकॉर्डिंग करता है. यह वीडियो रिकॉर्डिंग एवीआई फॉरमेट में होती है. इसकी अंदरूनी मेमोरी दो जीबी है. इसमें रिकार्ड किए गए वीडियो को कंप्यूटर में भेजना बेहद आसान है. बस इस टाई को यूएसबी पोर्ट से जोड़ दीजिए. यह बेहतरीन स्पाई गैजेट टाई रिमोट कंट्रोल के साथ भी आता है. इससे आप बिना हाथ लगाए रिकॉर्डिंग शुरू या बंद कर सकते हैं. है न कमाल! इतना ही नहीं, यह एक पंथ-दो काज भी करता है. यूएसबी ग्लव्स यानी ठंड से बचाने वाले दस्ताने अब गैजेट का रूप ले चुके हैं. ठंड में दफ़्तर में कंप्यूटर पर काम करते हुए उंगलियों जब ठंडी पड़ जाती हैं, तब लोग अक्सर हाथ सहलाते रहते हैं, पर अब ऐसे दस्ताने बाज़ार में आ गए हैं जो कंप्यूटर से जोड़ देने पर गर्म हो जाते हैं और हाथों को भी गर्म रखते हैं. इन दस्तानों के अंदर हीट जेनेरेटर होते हैं और यूएसबी से इनमें ऊर्जा प्रवाहित होती है, जिससे गर्मी का अहसास होता है. ये दोनों गैजेट जापानी कंपनी ब्रांडो की हैं.

गूगल बनाम बिंग

इंटरनेट के सबसे ज़्यादा इस्तेमाल होने वाले सर्च इंजन के तौर पर गूगल की बादशाहत को कड़ी टक्कर मिलने वाली है. कभी सर्च इंजन के मामले में सबसे आगे रहने वाले माइक्रोसॉफ्ट (एमएस) ने अपना खोया हुआ ख़िताब पाने के लिए एक जोरदार खिलाड़ी को मैदान में उतारा है. तीन जून से माइक्रोसॉफ्ट का नया सर्च इंजन *बिंग* बाज़ार में आ गया है. *बिंग* शब्द *बिंगो* का छोटा रूप है. माइक्रोसॉफ्ट का दावा है कि यह अब तक का सबसे एडवांस्ड सर्च इंजन है. इसमें सर्च के साथ-साथ सर्च हिस्ट्री, विशेष सर्च जैसी सुविधाएं भी हैं. इनके अलावा एमएस की कई सुविधाएं जैसे कैश बैक भी इस पर मिलेंगी. एमएस के सीईओ स्टीव बामर का दावा है कि यह सर्च इंजन हर सेकेंड बन रही वेबसाइट्स से भी जानकारियां देगा. एमएस इससे पहले एमएसएन सर्च, विंडोज सर्च और लाइव सर्च जैसे सर्च इंजन ला चुकी है. फ़िलहाल सर्च इंजन के बाज़ार पर गूगल का क़ब्ज़ा है. उसके पास जहां बाज़ार का 81 फीसदी हिस्सा है, वहीं याहू लगभग 10 और एमएस लाइव सर्च चार फीसदी का हिस्सा रखते हैं. अब माइक्रोसॉफ्ट बिंग से यह आंकड़ा बदलने की ताक में है.

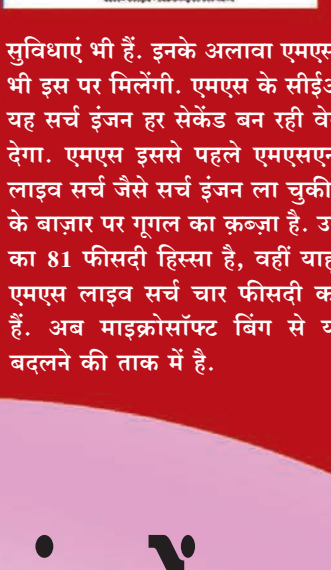

आपके पालतू के लिए...

घर में जानवर पालना आज फ़ैशन बन गया है. लेकिन उसकी सफाई और रखरखाव का काम कम झंझट वाला नहीं है. उसे सैर कराने बाहर ले जाने पर उसके पैरों में लगे कीचड़ और मिट्टी की सफाई काफी मुश्किल हो जाती है. ऐसे में आपकी परेशानी को कम करने के लिए पौप्लंगर बाज़ार में उतारा गया है. दरअसल यह एक डिब्बा है जिसमें प्लास्टिक के ब्रश लगे होते हैं. उसमें कोई भी क्लीनिंग सोप, शैंपू या डिटरजेंट डाल कर अपने पालतू जानवर के गंदे पैर को डालें. उसमें लगा ब्रश उसके पैरों को तुरंत साफ कर देगा. इसमें ब्रश बेहतरीन क्वालिटी के होते हैं, जो नुकसान पहुंचाए बिना उसे साफ करता है. इसके बाद गंदे पानी को बाथरूम या बेसिन में गिरा दें, फिर खेलना शुरू करें अपने पालतू के साथ. इससे आपके पालतू को गंदगी से होने वाले इंफेक्शन से तो बचाया जा ही सकता है, साथ ही आपका घर, कार या फर्नीचर भी गंदा नहीं होगा.

घरेलू नुस्ख़ों से संवारें त्वचा

मौसम के साथ-साथ त्वचा में बदलाव तो आता है ही. गर्मी में तो हाल और बुरा हो जाता है. तेज़ धूप और गर्म हवाएं त्वचा को काफी नुकसान पहुंचाती हैं. इस मौसम में पसीने की चिपचिपाहट का भी सामना करना पड़ता है.

वैसे गर्मी में अपने आप को तरोताज़ा महसूस करने तथा अपनी त्वचा की देखभाल करने के कुछ घरेलू उपाय हैं, जिन्हें आजमाया जा सकता है.

गर्मियों में आप एक गिलास पानी में दो चम्मच चाय डालकर अच्छी तरह उबाल लें और छानकर ठंडा करें. फिर इस पानी को किसी बोतल में भरकर फ्रिज में रख लें. जब भी आप धूप में बाहर निकलें तो पहले फ्रिज से निकालकर चाय वाले इस पानी को अपने चेहरे और हाथ-पैरों में लगा लें. इससे तेज़ धूप से आपकी त्वचा झुलसेगी नहीं.

- गर्मियों के दिनों में कम से कम दो बार ठंडे पानी से रगड़-रगड़ कर स्नान अवश्य करें.
- साफ और धुले हुए सूती कपड़े पहनें.
- दिन भर में 3-4 बार चेहरे को अच्छी तरह से साफ करें.
- गर्मी के मौसम में ककड़ी, खीरा, संतरा या मौसमी का रस निकाल लें. इसके रस को ट्रे में डालकर फ्रिज में जमने के लिए रख दें. फिर इस बर्फ़ को चेहरे पर मलें. ऐसा सप्ताह में दो-तीन बार करने से चेहरा दमक उठेगा. यह रोमकूपों को खोलने में और मुंहासों के लिए भी लाभदायक होता है.
- गर्मियों के दिनों में ब्लीचिंग न कराएं. इससे त्वचा काली हो जाने का ख़तरा रहता है.
- कच्चे आलू को छीलकर उसे कस लें या कूट लें और उसे काली पड़ रही त्वचा पर लगाएं. इससे त्वचा मुलायम और साफ हो जाएगी.
- मलाई और गुलाब जल को साथ मिलाकर हल्के हाथों से मसाज करते हुए त्वचा पर लगाएं. यह त्वचा को चमकदार तथा कोमल बनाने में मदद करेगा.
- दूध और शहद मिलाकर धीरे-धीरे गर्दन, हाथ व पैरों की मालिश करें. इससे त्वचा मुलायम हो जाएगी.
- पपीते के गूदे को मसलकर आप फेस पैक भी बना सकती हैं. साथ ही इसे त्वचा पर मलने से जमा हुए मैल से छुटकारा भी पाया जा सकता है.
- मलाई और गुलाब जल को मिला कर हल्के हाथों से मसाज करते हुए त्वचा पर लगाएं. इससे त्वचा चमकदार और मुलायम बनी रहेगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

क़ायम रहेगा कप पर क़ब्ज़ा !

भारत के पास जो टीम है, उसमें यह क्षमता है कि वह विश्व की किसी भी टीम को धूल चटा दे. भारतीय प्रशंसकों की उम्मीद भी यही होगी. पिछली बार जब भारतीय टीम ट्वेंटी-20 विश्व कप में उतरी थी तो उसके पास महज़ एक मैच का अनुभव था. लेकिन जब टीम ने खेलना शुरू किया तो सब देखते रह गए. पूरे विश्व कप में भारतीय टीम ने शानदार खेल दिखाया और बड़ी-बड़ी टीमों को धूल चटा दी. तब भारत के पास एक युवा टीम थी. उस टीम के कई खिलाड़ियों के लिए यह पहला अंतरराष्ट्रीय अनुभव था, दूसरे शब्दों में कहें तो वे क्रिकेट में नए-नवेले थे. फिर भी टीम ने आस्ट्रेलिया और साउथ अफ्रीका जैसी धुरंधर टीमों को पछाड़ कर विश्व कप जीत लिया. तब से अब तक बहुत कुछ बदल गया है. जो नए थे, वे अनुभवी हो गए हैं. ट्वेंटी-20 का खेल भी कोई नया नहीं रह गया है.

कहते हैं कि ख़ुद पर भरोसा हो तो सफलता मिलती ही है. इस बात में अगर थोड़ी भी सच्चाई हो तो भारतीय क्रिकेट टीम को इस ट्वेंटी-20 विश्व कप में जीतने से कोई रोक नहीं सकता. फ़िलहाल भारतीय टीम के पास न तो विश्वास की कमी है, न फार्म की और न ही मैच की सूरत बदल देने वाले धमाकेदार खिलाड़ियों की. भारतीय टीम के लिए दोबारा विश्व विजेता बनना आसान तो नहीं होगा, लेकिन जिस अंदाज़ में भारतीय टीम पिछले कुछ दिनों से खेल रही है, बहुत मुश्किल भी नहीं होगा. धोनी के धुरंधरों के पास इतिहास दोहराने का सुनहरा मौका है. भारतीय टीम इंग्लैंड विजय के लिए तैयार है.

भारत के पास जो टीम है, उसमें यह क्षमता है कि वह विश्व की किसी भी टीम को धूल चटा दे. भारतीय फैन्स की उम्मीद भी यही होगी. पिछली बार जब भारतीय टीम ट्वेंटी-20 विश्व कप में उतरी थी तो उसके पास महज़ एक मैच का अनुभव था. लेकिन जब टीम ने खेलना शुरू किया तो सब देखते रह गए. पूरे विश्व कप में भारतीय टीम ने शानदार खेल दिखाया और बड़ी-बड़ी टीमों को धूल चटा दी. तब भारत के पास एक युवा टीम थी. उस टीम के कई खिलाड़ियों के लिए यह पहला अंतरराष्ट्रीय अनुभव था, दूसरे शब्दों में कहें तो वे क्रिकेट में नए-नवेले थे. फिर भी टीम ने आस्ट्रेलिया और साउथ अफ्रीका जैसी धुरंधर टीमों को पछाड़ कर विश्व कप जीत लिया. तब से अब तक बहुत कुछ बदल गया है. जो नए थे, वे अनुभवी हो गए हैं. ट्वेंटी-20 का खेल भी कोई नया नहीं रह गया है. आईपीएल जैसे टूर्नामेंटों ने टी-20 को क्रिकेट का नया पर्याय बना दिया है. सो इस बार मुक़ाबले के लिए टीम और बेहतर तरीक़े से तैयार है. अगर टीम पर एक नज़र डालें तो साफ है कि भारत के टक्कर की टीम किसी के पास नहीं है. कप्तान धोनी के पास अनुभव और जोश से भरपूर टीम है. भारत की टीम खेल के हर विभाग में मज़बूत नज़र आती है. उसे चाहिए तो एक बार फिर भाग्य का थोड़ा-सा साथ और अपने प्रशंसकों की शुभकामनाएं.

सलामी जोड़ी

भारत के पास दुनिया की सबसे ख़तरनाक सलामी जोड़ी है. जहां वीरेंद्र सहवाग किसी भी गेंदबाज़ी आक्रमण को तहस-नहस करने की ताक़त रखते हैं, वहीं उनके जोड़ीदार गौतम गंभीर आक्रमण व रक्षात्मक दोनों तरीक़ों के खेल में माहिर हैं. यह जोड़ी पिछले साल की विश्व की सबसे सफल जोड़ी रही. अगर इनका बल्ला बोला, तो आधी जंग हम यहीं जीत लेंगे.

कप्तान

महेंद्र सिंह धोनी. एमएसडी- मास्टर स्किमर एंड डेवलपर. धोनी की मौजूदगी ने भारत की टीम में एक नई जान भर दी है. मैदान पर हमेशा शांत नज़र आने वाले धोनी के तरकश में कई तीर हैं और उनका इस्तेमाल वह बड़ी चतुराई से करते हैं. सबसे बड़ी बात है कि टीम में उनकी इज़्ज़त है और वह सबको साथ लेकर चलते हैं. अपनी बल्लेबाज़ी और विकेटकीपिंग से टीम के लिए वह काफी योगदान करते हैं. ऐसे में क्रिकेट में विश्व फ़तह करने निकली भारतीय सेना का उनसे बेहतर जनरल नहीं हो सकता. ज़ाहिर है, भारत की टीम में वह क्षमता तो है ही जिससे विश्व कप पर क़ब्ज़ा क़ायम रखा जा सके. टीम में वह विश्वास, जोश और जुनून भी है जो जीत के लिए ज़रूरी है. विशेषज्ञों की भी राय यही कि धोनी के नेतृत्व में टीम पूरी क्षमता से खेली, तो इतिहास दोहराएगा ज़रूर.

मध्यक्रम

अगर सलामी जोड़ी के बाद भी कोई कसर रह गई तो भारत के पास मध्यक्रम में दुनिया का सबसे आक्रामक बल्लेबाजों की फौज है. रोहित शर्मा, सुरेश रैना, युवराज सिंह, रवींद्र जडेजा जैसे खिलाड़ी मध्यक्रम में हैं. रोहित शर्मा पिछले विश्वकप में उभरे थे, अब वह टी-20 के माहिर हो चुके हैं. आईपीएल-2 में डेक्कन चार्जर्स की जीत में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही. अब तो वह बल्ले के साथ-साथ गेंद से भी कमाल दिखा रहे हैं. उधर सुरेश रैना के बारे में हम ही नहीं विज़डन भी कह चुकी है कि वह भविष्य के सितारे हैं. आईपीएल में वह टॉप फार्म में रहे थे.

अब विश्वकप में भी उनसे इसी तरह के प्रदर्शन की उम्मीद है. फिर आते हैं युवराज सिंह. वह कितने ख़तरनाक हैं यह स्टुअर्ड ब्रॉड से बेहतर कौन बता सकता है, जिनके एक ओवर में युवी ने छह छक्के ठोके थे. युवराज में इतनी प्रतिभा है कि वह अकेले मैच जिता सकते हैं. किसी भी गेंदबाज़ी को संभलने से पहले नेस्तानाबूत कर देना उनकी पुरानी आदत है. वहीं रवींद्र जडेजा छुपे रुस्तम साबित हो सकते हैं. उनमें भी ग़ज़ब की क्षमता है. यह बल्लेबाज़ बल्ले से रन जोड़ने के साथ-साथ क्षेत्ररक्षण में भी रन बचाते हैं. इतने मज़बूत मिडिल आर्डर के दम पर भारत किसी भी गेंदबाज़ी का सामना करने को तैयार है.

ऑलराउंडर्स

और पठान बंधुओं की अनदेखी कौन कर सकता है? युसूफ और इरफान जब चलते हैं तो 11 पर भारी पड़ते हैं. यह जोड़ी गलियों से आगे निकलकर अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर धमाल मचा रही है. बड़े शॉट्स लगाने और साझेदारियां तोड़ने में माहिर इन भाइयों से भारतीय टीम को वह बढ़त मिल जाती है, जो टी-20 में जीत के लिए बेहद ज़रूरी है. मैच पलटने की यह क्षमता उन्हें हर विरोधी टीम के लिए एक ख़तरा बनाता है.

गेंदबाज़ी

आईपीएल-2 ने साबित कर दिया कि गेंदबाज़ भी इस खेल का नतीजा पलट सकते हैं. भारतीय टीम में इस आईपीएल में कमाल दिखाने वाले प्रज्ञान ओझा और आरपी सिंह तो हैं ही, अनुभवी ज़हीर ख़ान और हरभजन सिंह भी हैं.

साथ में ईशांत शर्मा और प्रवीण कुमार जैसे युवा गेंदबाज़. जितनी धार और संतुलन इस गेंदबाज़ी आक्रमण में है, उतना आज तक किसी भी भारतीय आक्रमण में नहीं देखा गया.

ज़हीर ख़ान की चोट की ख़बरों से भी इसकी धार पर कोई ख़ास असर पड़ता नहीं दिख रहा. आईपीएल ने दिखाया है कि कम स्कोर को भी बचाया जा सकता है और ऐसे में भारत का यह आक्रमण अहम साबित होगा.

एक के साथ दूसरा विश्व कप फ्री

इंग्लैंड में पांच जून से सिर्फ़ एक टीम के क्रिकेटरों की भिड़ंत दूसरी टीम से नहीं होगी. वहां क्रिकेट की जंग क्रिकेट से भी होगी. ट्वेंटी-20 के कार्यक्रम इस तरह बना दिए गए हैं कि पुरुष और महिला क्रिकेट के विश्व कप एक साथ पड़ गए हैं. इस तरह क्रिकेट के इतिहास में पहली बार महिलाओं और पुरुषों का विश्व कप एक साथ आयोजित होगा. इतना ही नहीं, महिलाओं और पुरुषों के टी-20 विश्व कप के सेमीफाइनल और फाइनल मुक़ाबले भी एक ही दिन और एक ही मैदान पर खेले जाएंगे. कहा जा सकता है कि इंग्लैंड में टी-20 विश्वकप के दौरान हो रही यह घटना खेल आयोजनों के लिए ऐतिहासिक होगा. यह दूसरी बात है कि पुरुष विश्व कप के तमाम तामझाम के बीच कम ही लोगों का ध्यान इस बात पर जाए, लेकिन महिला क्रिकेट के लिए तो यह ख़ास अवसर है ही. पहले महिला टी-20 विश्वकप का आयोजन पुरुषों के विश्वकप के साथ कर आईसीसी ने यह तो साबित कर दिया है कि उसके लिए दोनों आयोजन बराबर ही हैं. वैसे बहुत कम लोगों को यह पता होगा कि विश्व कप के आयोजनों के मामले में महिलाएं पुरुषों से आगे रही थीं. महिलाओं का पहला एकदिवसीय विश्वकप पुरुषों के पहले विश्वकप से दो साल पहले हुआ था, यानी 1973 में. इस तरह कम से कम विश्वकप के आयोजनों के मामले में महिलाएं आगे रही हैं. अब महिलाओं के क्रिकेट को भी बराबरी का प्लेटफार्म देकर आईसीसी ने सार्थक पहल की है और इसके लिए आईसीसी और इंग्लैंड एंड वेल्स क्रिकेट बोर्ड की सराहना की जानी चाहिए. उम्मीद है कि इस आयोजन से सिर्फ़ महिला क्रिकेट को ही नहीं, पूरे क्रिकेट परिदृश्य को फ़ायदा होगा. उम्मीद यह भी है कि मीडिया इसे भी पुरुष विश्व कप जितनी ही तरजीह देगा. प्रशंसक भी दोनों विश्वकपों का बराबर मज़ा उठाएंगे और यह आयोजन भी उतना ही रोचक और सम्मानजनक होगा, जितना कि पुरुष विश्वकप.

बार्सिलोना बना यूरोपियन फुटबॉल का बादशाह

फुटबॉल में यूरोपीय बादशाहत का फ़ैसला हो गया है. बार्सिलोना ने अपनी बादशाहत साबित कर दी. इसके साथ ही यह विवाद भी ख़त्म हो गया कि रोनाल्डो और लायनल मेसी में से कौन बेहतर फुटबॉलर है. निश्चय ही बार्सिलोना को यूएएफए चैंपियनशिप का ख़िताब दिला कर मेसी ने अपना लोहा मनवा लिया है.

बीती 26 मई की देर रात को रोम के ओलंपिको स्टेडियम में एक टीम यूरोपियन फुटबॉल के शिखर पर खड़ी थी, तो दूसरी का सपना टूट चुका था. बार्सिलोना की टीम के मैनचेस्टर यूनाइटेड को हराकर चैंपियंस लीग का ख़िताब जीतने के साथ ही यूरोपीय फुटबॉल के सबसे बड़े मुक़ाबले का नतीजा आ गया. यह नतीजा आश्चर्यजनक भले न रहा हो, लेकिन उम्मीद के उलट ज़रूर रहा.

फुटबॉल को समझने, देखने और पसंद करने वालों में अधिकतर ने मैनचेस्टर की जीत की उम्मीद लगा रखी थी. यूरोपीय बादशाहत की इस टक्कर के बाद जब नतीजा निकला तो काग़ज़ पर मज़बूत समझी जा रही मैनचेस्टर यूनाइटेड की टीम अपना ख़िताब गंवा चुकी थी. पूरी लीग में दबदबा बनाए रखने वाली टीम आख़िरी मौके पर फेल हो गई.

इस मुक़ाबले में बार्सिलोना की 2-0 की जीत से यह भी साबित हो गया कि खेल में जीत-हार का कोई फार्मूला नहीं हो सकता. सिर्फ बड़े नामों की मौजूदगी जीत की गारंटी नहीं हो सकती. जीत के लिए खेलना और बेहतर खेलना ज़रूरी होता है. बार्सिलोना के लिए यह जीत दोहरी ख़ुशी लाई है. स्पेन की घरेलू फुटबॉल लीग में पहले नंबर पर रहने के बाद अब बार्सिलोना फुटबॉल क्लब ने यूरोप में भी परचम लहरा दिया है. बार्सिलोना की टीम ने स्पेनिश लीग *सेरी ए* में जहां सभी टीमों को बड़े अंतर से पीछे छोड़ दिया था, वहीं चैंपियंस लीग में उसने यूरोप भर की बेहतरीन टीमों के ख़िलाफ़ शानदार खेल दिखाया है. हालांकि जिन टीमों से उसका मुक़ाबला रहा, वे टीमें स्टार खिलाड़ियों से भरी थीं लेकिन बार्सिलोना की अपनी स्टार तिकड़ी-थियेरी हेनरी, लायनल मेसी, सोमुअल एटो-उन पर भारी रही.

सानिया ने ढूंढ़ लिया पार्टनर

कभी सिंगल्स तो कभी डबल्स खेलती सानिया मिर्ज़ा ने असल जीवन के पार्टनर को ढूंढ़ लिया है. रूसी टेनिस स्टार मरात साफिन से लेकर बॉलीवुड स्टार शाहिद कपूर तक से आए दिन नाम जुड़ने से परेशान सानिया ने हैदराबाद के ही एक कारोबारी मोहम्मद सोहराब मिर्ज़ा से ख़ुद को जोड़ लिया है. पिछले दिनों दोनों की सगाई भी हो गई. अब उनकी शादी भी जल्द ही हो जाएगी.

सानिया के पिता इमरान मिर्ज़ा के मुताबिक दोनों परिवारों में वर्षों का दोस्ताना रहा है. सोहराब और सानिया बचपन से एक-दूसरे को जानते भी रहे हैं. सानिया के प्रशंसकों के लिए अच्छी ख़बर यह है कि वह शादी के बाद भी टेनिस खेलती रहेंगी. वैसे वह इस समय चल रहे फ्रेंच ओपन में सिंगल्स और डबल्स दोनों मुक़ाबलों से बाहर हो गई हैं. वैसे भी टेनिस में उनका करियर इधर हाल के समय में कुछ ख़ास नहीं चल रहा है. चोट भी उन्हें जब-तब परेशान करती रहती है. सानिया की मानें तो फ्रेंच ओपन के पहले दौर में ही बाहर हो जाने की भी असली वजह चोट ही थी.

पावस नीर

pawas.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

करण का जौहर

सोनिका अग्रवाल

बॉलीवुड में करण जौहर को अगर यारों का यार कहा जाता है, तो वह इसे जब-तब साबित भी करते रहते हैं. बीती 25 मई को तो उन्होंने कुछ ऐसे अनोखे काम कर दिखाए, जो इस दौर के बॉलीवुड में देखने की शायद ही किसी ने कल्पना की हो. इसमें कोई दो राय नहीं कि फिल्म वालों की जन्मदिन पार्टी काफी धांसू होती है, जिसमें कुछ धमाल तो कुछ बवाल हो ही जाता है. शाम जैसे-जैसे रात में ढल कर सुबह के रूप में अगले दिन सामने आती है, सितारों के उतरे व सूजे हुए चेहरे पर्दे के पीछे की सारी सच्चाइयों की चुगली कर ही देते हैं. जो आपस में बार-बार सलाम करते अंदर प्रवेश करते हैं, वे ही बाहर आकर सिर की एक हल्की जुंबिश से वलाम भी नहीं करते. लेकिन करण जौहर की बर्थ-डे पार्टी में सब उलटा-पुलटा हो गया. कल के दुश्मन पार्टी से दोस्त बन कर निकले. बिल्लियों जैसी लड़ने वाली अभिनेत्रियां गलबहियां डाले डोलती दिखीं.

वहां क्या कुछ हुआ, इसका अंदाज़ा इसी से लग जाएगा कि ऐश्वर्या राय और शाहरुख़ ख़ान की पुरानी दुश्मनी ख़त्म हो गई. अभिषेक बच्चन ने विवेक ओबरॉय को गले लगा लिया. और तो और, अरसे बाद अभिषेक ने न सिर्फ़ करीना से बात की बल्कि ऐश्वर्या से भी बेबो की दोस्ती हो गई. शाहिद कपूर भी करीना की मौजूदगी के बावजूद पार्टी में सहज दिखे. दोनों में हाय-हेलो के साथ छोटी सी बातचीत भी हुई. तब पास में ही सैफ भी खड़े थे.

वैसे सबसे धमाकेदार रहा किंग ख़ान और पूर्व विश्व सुंदरी में सुलह हो जाना. ग़ौरतलब है कि शाहरुख़ ने अपनी फिल्म *चलते-चलते* से ऐश को अचानक बाहर कर रानी मुखर्जी को ले लिया था.

तब से ऐश अपने को अपमानित महसूस कर रही थीं. यह दूसरी बात है कि किंग ख़ान ने ऐश को उनकी वजह से नहीं निकाला था, बल्कि उन्हें सलमान ख़ान की करनी का फल भुगतना पड़ा था. तब ऐश की दोस्ती सलमान से हुआ करती थी.

एक दिन अचानक सेट पर आकर सलमान ने हंगामा शुरू कर दिया था. इससे नाराज़ होकर शाहरुख़ ने ऐश को ही फिल्म से निकाल दिया था. यह मामला ख़त्म हो गया था कि कैटरीना की बर्थ-डे पार्टी में दोनों ख़ानों में हुई लड़ाई से बात फिर बढ़ गई.

कहते हैं कि उस पार्टी में शाहरुख़ ने ऐश को लेकर कुछ हल्की बातें कर दी थीं, जो सलमान को बुरी लग गई थीं. झगड़ा इसी पर शुरू हुआ था. लेकिन जब करण ने अपने यहां सबको मिलाया तो सारे गिले-शिकवे दूर हो गए. शाहरुख़ ने न सिर्फ़ ऐश से काफी देर तक बात की, बल्कि अपने किए पर माफ़ी भी मांगी.

किंग ख़ान ने माना कि उनकी उस हरकत से ऐश की छवि को नुकसान हुआ.

करण जौहर को बर्थ-डे के साथ-साथ इस बात के लिए बधाई अवश्य दी जानी चाहिए कि बॉलीवुड में रिश्तों का नया दौर उन्होंने शुरू कर दिया है. निश्चय ही, कई तरह के संकटों से गुज़र रहे हिंदी फिल्म उद्योग का इससे हौसला ही बढ़ेगा.

sonika.chauthiduniya@gmail.com

कैटरीना की कहानी में ट्विस्ट

सलमान ख़ान और कैटरीना ने जितनी मीडिया को जितनी ख़बरें दी हैं, उतनी शायद ही किसी हॉलीवुड वाले ने भी नहीं दी होगी. बॉलीवुड की बात ही छोड़ दें. वह चाहे प्रेम संबंधों से संबंधित हों या थाना-कचहरी से, चर्चाएं हैं कि थम ही नहीं रहीं. अभी हाल में बड़ी तेज़ी से पूरे देश में अफ़वाह फैली कि कैटरीना ने सलमान के साथ शादी करने से इंकार कर दिया है. कहा तो यहां तक गया कि सलमान ने गुस्से में अपने घर से कैटरीना के सामानों को भी फेंक दिया. वजह यह बताई गई कि कैट के कुछ साथी कलाकारों से गहरे रिश्ते बन गए हैं. इस सिलसिले में जॉन अब्राहम का नाम ख़ास तौर पर उछाला गया. ग़ौरतलब है कि जॉन और कैट इन दिनों फिल्म *न्यूयॉर्क* में काम कर रहे हैं. इससे पहले रणबीर कपूर से भी कैट की नज़दीकियों की अफ़वाह फैली थी. इन अफ़वाहों में कितनी सच्चाई है, यह इसी से ज़ाहिर हो जाती है कि सलमान के गुस्से की बात तो फैली लेकिन बिपाशा की किसी प्रतिक्रिया की ख़बर नहीं आई. जबकि क़ायदे से बिपाशा को पहले नाराज़ होना चाहिए था. बहरहाल, सच्चाई यही है कि सलमान एक बार फिर से दस का दम में लग गए हैं. उनके कमरे की दीवार पर ख़ूबसूरत कैट की बड़ी-सी तस्वीर आज भी टंगी हुई है. हां, यह बात अलग है कि सल्लू मियां के घरवालों ने उन पर जल्द ही विवाह करने का दबाव इधर कुछ बढ़ा दिया है. ख़ुद सलमान भी कहते हैं कि घर वाले अब और समय देने को तैयार नहीं हैं. लेकिन कैट बेबी को अपना करियर अधिक प्यारा लग रहा है. लगना भी चाहिए, क्योंकि बॉलीवुड में वह अकेली अभिनेत्री हैं जिन्होंने पिछले साल-डेढ़ साल में लगभग आधा दर्जन हिट फिल्में दी हैं. वह इन दिनों शिखर पर हैं. उनके आस-पास करीना से लेकर ऐश्वर्या तक नहीं हैं. निर्माता-निर्देशकों की वह पहली पसंद हैं. घरेलू बाज़ार से अंतरराष्ट्रीय मार्केट तक में कैट की मांग सबसे अधिक है. ऐसे में शादी करने का फ़ैसला यक़ीनन आत्मघाती ही कहलाएगा. लेकिन वह उन अफ़वाहों का क्या करें, जिन्होंने जीना मुहाल कर रखा है. ख़ुद कैट का कहना है कि सलमान उनकी कथित प्रेम कहानियों से नहीं, बल्कि इन अफ़वाहों से अधिक परेशान हैं. वह सबको सच्चाई बताना भी चाहते हैं, लेकिन उनकी बातों को प्रमुखता नहीं दी जा रही. यही हाल बिपाशा बसु का है. तो क्या यह भी एक पब्लिसिटी स्टंट ही है? लगता है. इसलिए कि अगर कैट-सलमान की यह कहानी नहीं चलती, तो *न्यूयॉर्क* के बारे में किसी को कुछ पता भी नहीं चलता.

कान में जम कर चला भारतीय फिल्मों का भी जादू

अपनी भव्यता और चकाचौंध के लिए मशहूर कान फिल्म समारोह कुछ विवादों के साथ समाप्त हो गया. फ्रांस का यह अंतरराष्ट्रीय समारोह इस बार भारत के लिए भी कुछ ख़ास रहा. एक ओर जहां कान समारोह ने अपनी 60वीं सालगिरह मनाई, वहीं भारत की आज़ादी के छह दशक पूरे होने पर भारतीय फिल्मों का विशेष प्रदर्शन हुआ. श्रेष्ठ पुरस्कारों के लिए ज्यूरी में मतभेद उभरे. उनके बीच घंटों की रस्साकशी चली. आख़िर में आस्ट्रेलियाई निर्देशक माइकल हिनेके की फिल्म-द वाइट रिबन- को सर्वश्रेष्ठ फिल्म घोषित किया गया. हालांकि शुरू में क्वेंटिन टैरेंटिनो और जेन केंपियन की फिल्मों के बीच कड़ा मुक़ाबला रहा था. लेकिन द वाइट *रिबन* ने फ्रांसीसी निर्देशक जैक ओडियार्ड की द *प्रोफेट*, पेड्रो अलमोडोवर की *ब्रोकन एम्ब्रेसिस*, क्वेंटिन टैरेंटिनो की *इनग्लोरियस* और जेन केंपियन की *ब्राइट स्टार* को पछाड़ कर बाज़ी मार ली. ग़ौरतलब है कि इस बार कान फिल्म समारोह की ज्यूरी में एक ज़माने में बॉलीवुड की मशहूर अभिनेत्री रहीं शर्मिला टैगोर भी थीं. इससे पहले के सालों में भारत से ऐश्वर्या राय और नंदिता दास जैसी अभिनेत्रियां कान समारोह की ज्यूरी में रह चुकी हैं.

सर्वश्रेख़ का ख़िताब जीतने वाली फिल्म *व्हाइट रिबन* में पहले विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी के ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति को दिखाया गया है. फिलीपींस के निर्देशक बिलांटे मेंडोजा ने अपहरण बलात्कार और हत्या की कहानी को *किनाटें* के रूप में दर्शकों के सामने प्रस्तुत करके सर्वश्रेख़ निर्देशक का ख़िताब जीता. फ्रांसीसी फिल्म निर्देशक जैक्वस आडियार्ड ने जेल के भीतर की कहानी को *प्रोफेट* नाम की फिल्म के रूप में चित्रित करके ग्रां प्री पुरस्कार जीता. क्रिस्टोफर वाल्ट्ज को सर्वश्रेख़ अभिनेता और शारलोट गैसबर्ग को सर्वश्रेख़ अभिनेत्री घोषित किया गया. वर्ष 2006 की अपनी विवादास्पद फिल्म *पैलेस* के बाद से बीजिंग में फिल्म बनाने के लिए प्रतिबंधित लू यी ने *स्प्रिंग फीवर* के लिए सर्वश्रेख़स्क्रीनप्ले का पुरस्कार अपने नाम किया. फिल्म वैवाहिक और समलैंगिक संबंधों पर आधारित है. लू ने स्वयं पर प्रतिबंध लगने के बाद इस फिल्म का निर्माण गुप्त तौर पर नांजिंग में किया और फिल्म को कान समारोह तक पहुंचा दिया.

इस बार का कान फिल्म समारोह भारत के लिए भी बहुत ख़ास रहा. समारोह में 19 और 20 मई को भारतीय फिल्मों का विशेष प्रदर्शन किया गया. दो दिनों में कुल सात फिल्में दिखाई गईं. इन फिल्मों न सिर्फ़ अलग-अलग विधाओं की फिल्में शामिल थीं, बल्कि वे अलग-अलग भारतीय भाषाओं में भी थीं. एक ओर जहां इसमें बॉलीवुड की *लगे रहो मुन्नाभाई* और *गुरु* जैसी फिल्मों को जगह मिली, वहीं मलयालम की फिल्म *सायरा*, तमिल की *वेयिल*, बांग्ला की *दोसर* और अंग्रेज़ी की *मिस्ड कॉल* भी दिखाई गईं. इनके अलावा भावना तलवार की हिंदी फिल्म *धर्म* भी दिखाई गई. कान में दिखाई गईं हॉलीवुड फिल्मों में भारत ने अपनी उपस्थिति *ए माइटी हार्ट* के ज़रिए दर्ज़ कराया. इसमें इरफ़ान ख़ान अहम भूमिका में हैं. ग़ौरतलब है कि *ए माइटी हार्ट* पत्रकार डेनियल पर्ल की ज़िंदगी पर आधारित है. पत्रकार डेनियल पर्ल की पाकिस्तान के कराची में अपहरण के बाद हत्या कर दी गई थी.

वैसे कुल मिला कर देखें तो कान समारोह इस बार भारत के लिए सूखा नहीं रहा. समारोह से लौटीं भारतीय कंपनियों के मुताबिक को-प्रोडक्शन, स्क्रीनिंग और फिल्म की रिलीज को लेकर विदेशी कंपनियों से उनकी बातचीत बहुत अच्छी रही. बिग पिक्चर्स के मुख्य कार्यकारी अधिकारी महेश रामनाथन ने कहा कि दुनिया भर के तमाम निर्माता अब भारत में फिल्म बनाने के इच्छुक हैं और भारतीय कंपनियों के साथ मिलकर काम करना चाहते हैं.

बहरहाल, इस बार के समारोह में सितारों की चमक-दमक विशेष नहीं दिखी. हालांकि ब्रैड पिट और एंजलीना जोली जैसे सितारों से कुछ देर रौनक ज़रूर रही. जहां तक बात रेड कारपेट पर बॉलीवुड के ग्लैमर की उपस्थिति की है तो हर साल की तरह इस बार भी ऐश्वर्या राय कान में मौजूद थीं और साथ में थे उनके पति अभिषेक बच्चन.

स्लमडॉग की जय हो...

मलिन बस्तियों की ज़िंदगी के चित्रण को लेकर *स्लमडॉग मिलिनेयर* की आलोचना पुरानी ख़बर हो गई है. यह ख़बर भी पुरानी हो गई है कि ऑस्कर विजेता उस फिल्म के बाल कलाकारों की झोपड़ियों को मुंबई नगर निगम ने अवैध बताते हुए गिरा दिया. और, शायद यह ख़बर भी पुरानी पड़ जाएगी कि ऐसे में फिल्म के निर्देशक डैनी बॉयल और उनके ट्रस्ट-जय हो-ने अज़हर जैसे बाल कलाकार को घर ख़रीद कर दे दिया है. फिल्म में लतिका बनी रूबीना के लिए भी जल्द ही घर ख़रीद लिया जाएगा. लेकिन यह कितनी अजीब बात है कि फिल्म में झोपड़पट्टी के चित्रण पर सवाल उठाने वालों ने उन हालात पर कभी कुछ नहीं कहा, जिनमें रूबीना और अज़हर जैसे लाखों बच्चे जीने को मजबूर हैं. रूबीना और अज़हर तो सौभाग्यशाली हैं कि ऑस्कर विजेता फिल्म में काम करने की वजह से उनकी पहचान बन गई है और उनकी मदद में विदेशी ही सही, कोई आगे तो आया. लेकिन उनकी तरह ही झोपड़ियों में रह रहे लाखों-करोड़ों बच्चे इनके जैसे भाग्यशाली नहीं हैं. इसलिए यह ख़बर नई है कि इस देश का बुद्धिजीवी वर्ग चर्चा में आने के लिए हमेशा चर्चित मामलों पर ही मुंह खोलता है. बहरहाल, फिल्म में काम करने वाले बाल कलाकारों के लिए कुछ ख़ास नहीं करने के आरोपों का डैनी बॉयल ने जवाब दे दिया है. अज़हर और रूबीना का हाल जानने के लिए ख़ास तौर पर मुंबई आए डैनी बॉयल ने माना कि बच्चों को एक असाधारण और ग्लैमर से भरी दुनिया में जाने का मौका मिला और उसके बाद अब वे निश्चित ही चाहते हैं कि उनकी दुनिया पूरी तरह बदल जाए. अज़हर को जो घर ख़रीद कर दिया गया है, वह काफी अच्छा है. साथ ही वह उसके स्कूल के पास भी है, जिससे उसे पढ़ाई जारी रखने में भी कोई परेशानी नहीं होगी. ग़ौरतलब है कि फिल्म पूरी होने के बाद ही बॉयल और फिल्म के निर्माता क्रिस्टियन कोल्सन ने जय हो नाम से ट्रस्ट बनाया था. इसका मक़सद बच्चों के 18 साल का होने तक उनकी आर्थिक रूप से मदद करना है. मुंबई में पत्रकारों से बात करते हुए बॉयल ने कहा, घर नहीं होना निश्चित ही चिंता का विषय है और यह उन वजहों में से एक है जिसे देखते हुए ही ट्रस्ट बनाया गया था. वहीं कोल्सन ने बताया कि ट्रस्ट परिवारों को फिर से बसाने का काम तेज़ करने में लगा हुआ है. इस बीच, आलोचनाओं से ऊब कर महाराष्ट्र सरकार ने भी अज़हर और रूबीना को फ्लैट आख़िरकार दे ही दिया.

बुरे फंसे रामू

राम गोपाल वर्मा ने लगता है कि अपनी प्राथमिकताएं बदल ली हैं. पहले उनका ज़ोर अच्छी फिल्मों पर हुआ करता था, लेकिन अब वह अपनी अजीबोग़रीब हरकतों से चर्चा में आने लगे हैं. एक बार फिल्म *भूत* को अकेले देखने के लिए उन्होंने दर्शकों को ललकार दिया था, तो शोले का रिमिक्स वर्जन निकाल कर दर्शकों की अग्निपरीक्षा ही ले ली थी. ख़ैर, यह तो पुरानी बात हो गई. उनकी नई ख़ुराफ़ात यह है कि अपनी नई फिल्म-रण- में उन्होंने राष्ट्रगान का ही अपमान कर डाला. इस पर सेंसर बोर्ड ने आपत्ति जता दी और विवादित गाने को फिल्म से निकाल देने को कहा. रामू तो ठहरे रामू. बच्चन खेमे के सबसे चहेते. सो वह सेंसर बोर्ड के निर्णय के ख़िलाफ़ सुप्रीम कोर्ट चले गए. लेकिन वहां लेने के देने पड़ गए. सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें ऐसी लताड़ लगाई कि वह चुपचाप घर बैठ गए हैं. प्रेस वालों से ही नहीं, अपने क़रीबी लोगों से भी मिलना-जुलना बंद कर दिया है. इस डर से कि कोई यह न पूछ ले कि सुप्रीम कोर्ट ने क्या कहा. लेकिन हम बता देते हैं कि *रण* में राष्ट्रगान को बिगाड़ने पर सुप्रीम कोर्ट ने क्या कहा. अदालत ने कहा है कि राष्ट्रगान के साथ छेड़छाड़ का अधिकार किसी को भी नहीं है. अवकाशकालीन दो सदस्यीय खंडपीठ ने कहा कि हमने गीत में लिखे गए शब्दों को पढ़ा है. यह गीत नकारात्मक असर छोड़ता है. इससे यह साबित होता है कि राष्ट्रगान की हर पंक्ति को ग़लत साबित करने की कोशिश की गई है, जिसकी इजाज़त नहीं दी जा सकती.

खंडपीठ ने अपने फ़ैसले में यह भी कह दिया कि फिल्म के प्रदर्शन की इजाज़त के संबंध में सेंसर बोर्ड के फ़ैसले को किसी भी हाल में बदला नहीं जा सकता. ग़ौरतलब है कि सेंसर बोर्ड ने इस फिल्म के प्रोमो के प्रदर्शन पर भी रोक लगा रखी है. सेंसर बोर्ड ने विवादास्पद गाने को जारी करने की अनुमति देने से इंकार करते हुए कहा था कि इस गाने को हटाए बिना *रण* को रिलीज करने की अनुमति वह नहीं देगा. वर्मा ने ऐसा करने से साफ इंकार कर दिया है. अब देखना यह है कि इस विवादित गाने को निकाल कर वह फिल्म रिलीज करते हैं या नहीं. यानी पहली बार ऊंट पहाड़ के नीचे आया है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com